किया था, परिणाम उसका शुभ नही निकला।"

सारे सामन्तों की राय यही थी कि तुगलक और जेसा को मृत्यु-दण्ड दे दिया जाय।

हम्मीर ने अन्त मे उठकर कहा, "प्रियजनो और मेवाड के रक्षको! आपकी राय के विरुद्ध नहीं जा सकता हूँ। लेकिन मुझे चारण जी की एक बात स्मरण हो आई है। व्यर्थ का रक्तपात ही हिंसा होती है। जो शत्रु आहत है अथवा हमारे बन्दीगृह मे है, उन्हे मृत्यु का दड देना, न्याय-सगत प्रतीत नही होता। राजपूत सदा धर्म-युद्ध करता आया है। वह उसे भी क्षमा कर देता है जो उसका घातक होता है। मैं चाहता हूँ कि चित्तौड की स्थिति निरन्तर युद्ध के कारण अत्यन्त क्षीण हो गई है। मेरी आपसे विनती है कि आप मुहम्मद तुगलक को मृत्यु दड न देकर अर्थ-दड दें। जिससे हम चित्तौड और समस्त मेवाड का पुनर्रोत्थान कर सकेंगे। उसके विकास और निर्माण मे हमे बहुत बल मिल जाएगा। प्रथम जौहर और हमारा चित्तौड से अलग रहने का कारण उसका हर अग दुर्बल हो चुका है। अब हमे नए सिरे से इसे बसाना है। इसकी कृषि का विकास करना है। शत्रु का सामना करने के लिए नए शस्त्र बनाते हैं, इसलिए मैं चाहता हूँ कि इसे अर्थ का दड दिया जाय।" और जेसा को मुक्त नही किया जाय। वह घर का भेदी है, कभी न कभी अवश्य लका को ढाएगा।"

हम्मीर ने देखा कि वारूजी और पवनसी के अतिरिक्त कोई भी उस से सतुष्ट नही है। कामदार भी नही। तब उसने खडे होकर कहा, "अन्तिम निर्णय देखो माँ वरवडी करेगी। हम सब उन्ही के पास चलें। उसकी आज्ञा और सहायता से हम आज इस स्थिति को पहुँचे हैं, अत उसका परामर्श आवश्यक है।"

सब माँ वरवडी के पास पहुँचे।

सारी स्थिति उसके समक्ष रखी गई। माँ वरवडी ने कहा, "देश को तुगलक के सिर की नही, धन की आवश्यकता है। मेरा भी ऐसा विचार

खून का टीका

[राणा हम्मीर के जीवन पर आधारित उपन्यास]

लेखक
यादवेन्द्र शर्मा 'चन्द्र

दिल्ली ।
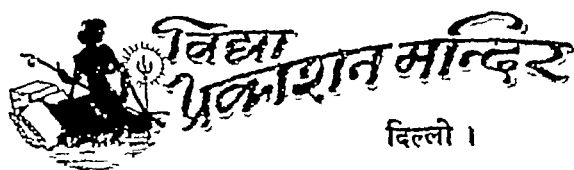
प्रथम संस्करण १९६०

मूल्य रु० ४ ०० न० पै०

प्रकाशक विद्या प्रकाशन मन्दिर
१६८१ दरियागज, दिल्ली—६

मुद्रक • हरिहर प्रेस दिल्ली।

राजस्थान के छद्म इतिहास को प्रकाश में लाने
वाले महान इतिहासवेत्ता

* श्री कर्नल जेम्स टॉड
* गौरीशंकर हीराचन्द ओझा
* मूता नैणसी
* कविराजा श्यामल दास

को श्रद्धा सहित सादर भेंट

मैं इतना ही कहूंगा

प्रस्तुत उपन्यास चित्तौड के राणा हम्मीर के जीवन पर आधारित है।

राणा हम्मीर के जीवन की कुछ घटनाएँ बडी विवादास्पद हैं। फिर भी मैंने भरपूर सच्चाई के साथ उन घटनाओ का चित्रण करने का प्रयास किया है तथा सभी इतिहासवेत्ताओ के वर्णन के सत्य को ग्रहण करने की चेष्टा की है।

अनगसिंह, पवनसी और शेरा-मेरा, काल्पनिक चरित्र हैं, हालाकि हम्मीर के पास ऐसे कई योद्धा थे पर उनके सही नाम न मिलने पर मैंने इन चरित्रो की उन्ही के आधार पर काल्पनिक सर्जना कर दी।

उपन्यास मे तत्काल की प्रभावशाली घटनाओ का वर्णन आज के पाठको, छात्रो और देश की भावी पीढी के सामने कुछ नए प्रश्न रखेगी कि प्राचीन भारत के महान शासक अत्यन्त दूरदर्शी थे और आज जिन साधनो से देश का पुनर्निर्माण हो रहा है, वे पहले भी यहाँ प्रचलित थे।

उपन्यास की त्रुटियो के लिए मैं विज्ञ जनो से क्षमा के साथ परामर्श भी चाहूँगा। ऐतिहासिक उपन्यास है, वह भी प्रथम, अत क्षमा का अधिकारी हूँ ही।

इस उपन्यास मे उन्ही की सामग्री का उपयोग किया गया है जिन्हे यह उपन्यास समर्पित है।

साले की होली।
बीकानेर—
(राजस्थान)

—यादवेन्द्र शर्मा 'चन्द्र'

राजस्थान के बारे में

There is not a petty state in Rajasthan that has not had its THERMOPLYAE and scarcely a city that has not produced its LEONIDAS

अर्थात् राजस्थान मे कोई छोटा-सा राज्य ऐसा नही है, जिसमे थर्मापोल (यूरोप का एक स्थान) जैसी रणभूमि न हो और शायद ही ऐसा नगर मिले जहा लियोनिडास जैसा वीर पुरुष उत्पन्न न हुआ हो ।

—कर्नल जेम्स टॉड

"मुझे वलिदान दो, मुझे वलिदान दो !" एक परिचित-सी ध्वनि सिसौदिया वश के स्वाभिमानी एव धर्मपरायणी, एकलिगेश्वर दीवाण राणा रत्नसिह के विश्वसनीय योद्धा सामन्त लक्ष्मणसिह "लाखा" के कण-कुहरो मे ध्वनित प्रतिध्वनित हुई। वे उन्मत्त हो उठे। अपने कक्ष मे जहाँ वे रात्रि के नीरव-निस्पन्द क्षणो मे मेवाड की विकट समस्याओ मे उलझे निद्रा की अराधना करने आए थे, एक परिचित ध्वनि मे पुन उलझ गए।

दीपक उनके सज्जित कक्ष मे ज्वलित था। मखमली शय्या पर वे अर्ध-शायित थे। अभी उन्होने लम्बी अचकन और धोती पहन रखी थी जो हिम-सी श्वेत थी।

वाहर एक भृत्य हाथ मे खडग लिए पहरा दे रहा था।

"मुझे राज-वलि चाहिए।" लाखा उठ खडे हुए। उन्माद-ग्रस्त प्राणी की भाँति उन्होंने कक्ष को देखा। कोई नही था।

उनके गढ के वाहर कोई श्वान लम्बे स्वर मे भोक उठा। पवन का तीव्र झोका वातायन से आया और दीपक की लौ लील कर चला गया। लाखा के अंग-प्रत्यग मे पसीना छूट गया। उन्होने आकुल हो कुछ वोलना चाहा। तभी झझा के भयावह हिलोरें आने प्रारभ हो गए। उनका कांपता स्वर उन हिलोरो मे इस भांति लुप्त हो गया जिस तरह पगली के अट्टहास मे सव साधारण का स्वर खो जाता है।

प्रचड तिमिर ! भयानक शांति !

"मुझे रक्त चाहिए !" लाखा ने देखा—कुलदेवी साक्षात् उनके समक्ष खडी है। विकराल मुद्रा और विशाल रक्तिम नेत्र !

लाखा का सारा तन जड हो गया।

कठिनता से वे इतना ही कह पाए, "माँ !"

"चितौड की रक्षा चाहते हो लाखा तो मुकुटधारी राज-पुत्रो का बलिदान दो। अपने आपको महाराणा के लिए बलिदान कर दो।"

देवी अन्तर्ध्यान हो गई।

करुण सिसकियाँ एव घोर तिमिर देखकर सेवक ने कक्ष मे प्रवेश किया और उसने पुन प्रकाश किया। लाखा जी को अचेत देख वह भय-भीत हो उठा और शीघ्रता मे वह वहाँ मे भागा।

लाखा जी बारह पुत्रो के गौरवशाली पिता थे। सभी पुत्र पराक्रमी और त्यागी। महाराणा के लिए सवस्व बलिदान करने वाले।

ज्येष्ठ पुत्र अरसी ने आकर अपने पिता को सँभाला। उपचार किया गया। थोडी देर मे उन्हे चेतना लौटी। वे अर्थ भरी दृष्टि से अरसी की ओर देखकर बोले, "अरसी, विगत समर मे आठ सहस्त्र वीरो के प्राणो की आहुति से माँ की प्रचड तृष्णा शात नही हुई है। वह मुझे बार-बार कहती है—जब तक राजमुकुटधारी राजकुमार चित्तौड की रक्षार्थ समराग्नि मे स्वाह न होगे तब तक सिसौदिया-वश का प्रचड मार्तण्ड यवन के कोप-रूपी बादलो से मुक्त नही होगा।"

अरसी कुछ बोले कि अजयसिह व अन्य पुत्र गण तथा दास-दासियाँ भी आ गए। सभी लाखा के चारो ओर बैठ गए। एक भृत्य इत्र की सुगन्धि वातावरण मे फैला रहा था। कुछ दासियाँ मोर पख के बने पखो से हवा कर रही थी। सज्जित कक्ष की प्राचीरो पर लटकती तलवारे दीपको का तीव्र प्रकाश पाकर दीप्त हो उठी। क्षणिक गभीर मौन छाया हुआ था।

अरसी गभीर स्वर मे बोला, "आपको भ्रम हो गया है पिताश्री।"

"नही अरसी ! केवल आज नही, सदा माँ मुझसे बलिदान माँगती

रहती है। असी तुम नही जानते—भगवती की आज्ञा को पूर्ण नही किया गया तो मेवाड जल कर भस्म हो जाएगा। यवन मेवाडियो की मान-मर्यादा को ध्वस कर हमारे गौरव के चिह्न तक मिटा देंगे।"

लाखा के सारे पुत्र मौन हो गए।

अब वे गाव-तकिए के सहारे वैठते हुए वोले, "खिलजी चित्तौड को विजय करके ही साँस लेगा। राणा जी अब शक्तिहीन हो गए हैं। निरतर का यह घेरा हमारे लिए भूख-प्यास का कारण वन गया है। चित्तौड के महावली अपना शौर्य दिखलाकर स्वदेश अनुराग का अविस्मृत उदाहरण छोड गए हैं। इतना विपुल-वलिदान लेकर भी विजयश्री हम पर प्रसन्न क्यो नही है? तुम नही जानते मेरे पुत्रो—इस शोकातुर वातावरण मे, रात्रि के नीरव-निस्तव्व क्षणो मे माँ का विकराल मुख मुझे कहता है—"मैं भूखी हूँ—मैं भूखी हूँ।"

'आप शांत रहिए ठाकुर सा।"

लेकिन लाखा शात नही रहे। वे तन्द्रिलावस्था मे आतुर व उद्विग्न होकर चौंक उठते और आतकित दृष्टि से यत्र-तत्र देखकर कह उठते, "चित्तौड के भविष्य की रक्षा करनी है तो माँ को वलि दो।"

सम्पूर्ण रात्रि इसी तरह व्यतीत हुई।

प्रभात हुआ।

महाराणा के सम्मुख लाखा जी हाजिर हुए।

समस्त सामन्त व सरदार उपस्थित थे। लाखा जी ने अपनी वात पुन दोहराई। अस्त्र-शस्त्रो से सज्जित चित्तौड के सारे वीर स्तव्ध से खडे थे। लाखा जी कह रहे थे—"चित्तौड के सम्मान को वचाना है तो देवी के वचनो का पालन किया जाय। देवी ने मुझे स्वप्न मे कहा है कि मैं राजवलि चाहती हूँ लाखा। जव तक राजमुकुटधारी राजकुमार मेवाड की रक्षार्थ रणभूमि मे उत्सर्ग नही होंगे तव तक मेवाड पर शत्रुओ का आक्रमण होना वन्द नही होगा।"

राणा रत्नसिह जी वोले, "यह भ्रम भी हो सकता है।"

"भ्रम नही है एकलिंगेश्वर दीवाण जी, यह सत्य है। वीरो के स्वप्न सत्य मे सदा परिणित होते आए हैं। हमारा धर्म मे अपनी कुल-देवी मे आस्था और विश्वास है। यह भ्रम भी है तो कितना गौरवमय भ्रम है। जो व्यक्ति अपनी जननी जन्म-भूमि के लिए उत्सर्ग होगा, वह कितना भाग्यवान् कहलाएगा। आज हमारे समक्ष एक ही जलता प्रश्न है-- मेवाड की रक्षा।

दरबार के अन्तिम छोर पर अरसी बैठा था। निरन्तर तीन रात-दिवस से वह चिन्तित था। उसके पिताश्री निरन्तर एक बात पर अडे हुए हैं। उनके कथन मे गहरी आस्था है। क्या पता उनकी कल्पना सत्य का आधार लिए हुए हो, क्या पता पिताश्री का आग्रह मे प्रभु का कोई आदेश हो? आस्तिक सस्कारी अरसी के मन मे निष्ठा जागी। पिताश्री के निरन्तर आग्रह ने उसके अन्तराल मे विश्वास जगा दिया।

अरसी ने अभिवादन करके अपने पिता के स्वप्न को बल प्रदान किया। वह समथन करता हुआ बोला, "राणा जी, पिता के वचनो पर गौर करे। हम सब ईश्वर पर बडी आस्था रखते हैं, अत हमे उनके कथन को व्यथ या स्वप्न समझ कर सवथा निर्मूल नही समझना चाहिए। आज मेवाड के चारो ओर विपत्तियो के बादल मंडरा रहे हैं, इस अवसर पर हमे देवी-देवताओ को सर्वोपरि सत्य मानकर नए ढग व नए उत्साह से युद्ध का श्री-गणेश करना चाहिए।"

राणा जी सिंहासन से एक क्षण के लिए उठ खडे हुए। अशान्ति-जनित-म्लान मुख को एक पल के लिए दोनो हाथो की हथेली मे छुपा कर वे दीघ-निश्वास छोडकर बोले, "कुछ समझ मे नही आता है।"

सिंहासन के दोनो ओर दो सेवक मयूर परो के पखे झल रहे थे। मार अधिकारी विस्मय विमुग्ध-से बैठे थे।

राणा जी पुन खडे हुए। पक्ति बद्ध पदानुसार बैठे वीरो के मध्य एक चक्कर लगाकर वे गम्भीर भारी स्वर मे बोले, "मैं झूठ नही बोलता हू। राणा जी, मैं देवी का सच्चा भक्त हूं। उसने जब कभी

मुझे स्वप्न या प्रत्यक्ष मे दर्शन दिए, किसी प्रयोजन को लेकर ही दिये हैं। वह प्रयोजन सत्य के आधार से हीन नही होता है। हमारे अनेक शूरमा इस रण मे काम आ चुके हैं। दिन-प्रतिदिन हमारी शक्ति क्षीण होती जा रही है, इस पर भी हमने देवी की आज्ञा का पालन नही किया, तव हमे भीषण परिणाम से टकराना होगा।"

लाखा जी अपने आसन पर आकर वैठ गये। सारे दरवार मे सन्नाटा छाया रहा। चित्तौड के विशाल गढ के चतुर्दिक खिलजी की अपार सेना पडी थी। अलाउद्दीन रूपासक्ति के वशीभूत होकर पद्मिनी को लेने के लिए अपना सारा रण-कौशल चित्तौड हथियाने मे लगा रहा था।

एक अन्य सरदार ने उठकर कहा, "लाखा जी झूठ नही कहते।" और देखते-देखते लाखा जी की वात को सव समर्थन प्राप्त हो गया। माँ को राज-वलि दी जाएगी—इस वात पर सव का एक मत हो गए।

समस्या जटिल थी। कौन सामन्त अपने वारह पुत्रो का एक साथ वलिदान करना चाहेगा। मेवाड में वहुत से ऐसे सामन्त थे जिनके कई-कई पुत्र थे, लेकिन लाखा जी के स्वप्न पर इस तरह अपने वश को क्यो कोई मिटाने को तत्पर होता ? जव राणा जी ने पूछा कि कौन अपने पुत्रो का उत्सर्ग करेगा तो दरवार मे गहरा मौन छा गया, जैसे वहाँ कोई प्राणी उपस्थित ही नही है।

तव लाखा जी के चेहरे पर ग्लानि और सकोच दोनो भाव एक साथ आए और मिटे। उन्होने विनती भरी दृष्टि मे अपने पुत्रो की ओर देखा। पुत्रो मे निमेष उत्पन्न हो गया। वाप की आन की रक्षा का प्रश्न लाखा जी के दोनो वडे पुत्रो के सम्मुख नाच उठा। अरसी आगे वढा। क्षण भर के लिए उसकी आँखो मे जोश स्फुलिंग सा ज्वलित हुआ और वह पितृ-सम्मान-रक्षा-हेतु वोला, "मैं सवसे पहले मुकुट धारण करूँगा।"

अरसी का यह उद्घोष सुनकर सभी सरदार स्तब्ध हो गए। सव की अभिप्राय भरी दृष्टि अरसी पर केन्द्रित हो गई। अरसी कहे ही जा

रहा था—"माँ की क्षुद्धा शात करने के लिए इतनी देर नही करनी चाहिए। हमारी अधिष्ठात्री प्रचड प्यास मे आकुल होकर रक्त की वलि माँग रही है। मेवाड हेतु राणा जी को सहप इस उत्सर्ग के लिए तत्पर हो जाना चाहिए और मुझे राणा घोषित करके सैन्य का सचालन सौप देना चाहिए। अरसी की अजानुवाहुओ का रक्त इस उष्णता मे दौडा कि उसका हाथ खग की मूठ पर चला गया। नेत्र अगारो से दीप्त हो उठे। तनिक गम्भीर स्वर मे सब पर दृष्टिपात करता हुआ बोला "यह भावानी साक्षी है राणा जी, एकलिगेश्वर की आज्ञा से आपका यह चाकर अपना सवस्व विसर्जन करके मेवाड के गौरव को अक्षुण्ण रखेगा। माँ का स्वप्न हो या पिता का भ्रम किन्तु यह सत्य है कि मुझे उत्सग अपनी जन्मभूमि के लिए होना है। एक वीर दुष्टो का दलन करता हुआ वीर-गति को पा जाए, यही उसके जीवन के श्रेय की उपलब्धि है।"

युवराज का यह उद्घोष उपस्थिति मे आन्दोलन मचाने के लिए पर्याप्त था। अन्य पराक्रमियो के हाथ भी अपनी-अपनी तलवारो पर चले गए। लाखा जी का द्वितीय पुत्र अजयसिह गज करके वोला, "नही मेरे होते हुए आपको देश के लिए वलिदान नही होना पड़ेगा। आप ज्येष्ठ-पुत्र है, पिताजी के वाद आप वश-रक्षक के रूप मे रहेगे इसलिए यह काय मुझे सौपा जाय। आप विश्वास रख, मैं समरभूमि मे यवन सेना को चित्तौड के पावन-प्रासादो का स्पर्श भी नही करने दूँगा।"

आश्चर्य की एक नूतन लहर सभी सरदारो के हृदय-छोरो को स्पर्श करती हुई वाचित हो गई। उत्सग की यह होड मुर्दो मे जान फूकने के लिए काफी थी।

एक सरदार आगे बढकर बोला, "इस कर्तव्य को मै पूरा करूँगा, जन्मभूमि मेवाड की रक्षा के लिए तुच्छ प्राणो को त्याग करके मोक्ष का भागी बनूँगा।"

राणा जी भी जोश मे भर उठे। खडे होकर बोले, "राजमुकुटधारी राजकुमार की वलि ?"

अरसी अब राणा जी के सन्निकट था। उसकी सुन्दर गहरी विशाल आँखो मे दृढ निश्चय की अरुणिमा स्पष्ट लक्षित हो रही थी। अग-प्रत्यग मे एक प्रकार की जडता आ गई थी। म्यान मे से तलवार निकाल कर वह बोला, "वाद-विवाद में समय नष्ट मत कीजिए। आप जितनी देर करेंगे, शत्रु को सँभलने का उतना ही अवसर मिलेगा, अत आप से मेरी प्रार्थना है कि मुझे यह भार सौंपा जाय। मैं ज्येष्ठ-पुत्र हूँ इस पद का अविकारी हूँ, आपको मेरी शक्ति का परिचय भी है।"

"फिर भी ।"

"वप्पा रावल का यह मुकुट मुझे पहना दिया जाय, सिसौदिया कुल के सूय को सौंपा जाय, मुझे मेवाड की मान-मर्यादा की रक्षा दी जाए। मैं जीते जी पगडी को नहीं गिरने दूँगा।"

अन्त में निश्चय हुआ कि लाखा जी का भ्रम हो या देवी की आज्ञा, इसे अडिग आस्था के साथ पूर्ण की जाय और प्रथम महाराणा अरसी को वनाया जाय। मेवाड की सकट-स्थिति देखकर यही शुभ होगा कि सारे मेवाडवासी लाखा जी की वात स्वीकार कर लें और चित्तौड पर उत्सर्ग हो जाए! पता नही, उनका यह स्वप्न, स्वप्न न हो, देवाज्ञा हो।"

शख की पावन ध्वनि और मगल मन्त्रो के मध्य अरसी 'अरिसिंह' के सम्मान सूचक नाम के साथ 'महाराणा' वना दिया गया और वह मेवाड की शेष शक्ति को एकत्रित करके चित्तौड की रक्षा हेतु समर भूमि मे उतर पडा। उस दिन भास्कर की भीषण उष्णता मे घमासान सग्राम हुआ। मानवी शोणित की प्रवाहित हुई सरिताएँ तथा यत्र-तत्र-सर्वत्र विखरे रुण्ड-मुण्ड भयावह प्रतीत हो रहे थे। निर्दयी वनचरो द्वारा उजडे खेतो की तरह वह भूमि नर-पिशाचो द्वारा खडित सौन्दर्यमयी मानव-देहो मे भरी थी।

रात्रि का उन्मन आंचल मानवीय मर्मान्तिक क्रन्दन एव चीत्कारो के सग विशाल ससृति पर आच्छादित हुआ। मारू का उन्माद भरा स्वर जो वीरो के कर्ण-कुहरो मे रुक्क जाने पर भी सुनाई पड रहा था, अव आर्त्तनादो मे परिवर्तित हुआ जान पडा।

राणा अरिसिंह श्रात-क्लात से अपने खेमे मे मुख-प्रक्षालन करके शय्या पर अर्धशायित थे। सेवक भोजन का थाल उनके सम्मुख लाया। उन्होंने अस्वीकृति सूचक सिर हिला दिया। पुन विचारमग्न होकर, हथेली का सम्वल लेकर वैठ गए।

एकात व गहरा मौन।

मन मे विचारो का अविराम आन्दोलन !

सोच रहे थे, "युद्ध क्यो होता हैं ? मनुष्य मनुष्य को इतनी निर्दयता से क्यो मारता है ? हम सब सभ्य कहलाने वाले प्राणी दुर्बुद्धि के पख पर आरूढ होकर नगर के नगर क्यो ध्वंश कर देते है ?"

अरिसिह अशात हो, उठ खडे हुए।

उल्का पवन के झोके से हिल उठी। उसके कापते प्रकाश मे सारा का सारा खेमा डोलता हुआ प्रतीत हुआ मानो धरती पर भूकम्प आ गया हो।

क्षण भर के लिए वे स्वय भयभीत हो उठे। क्षणिक विचार मन मे आया कि विनाश पर विनाश हो रहा है। अपने विशाल भाल पर हथेली फेर कर वे मन ही मन बडबडाए—उसका मूल कारण है—मनुष्य की अधिकार लिप्सा।

रूप और अर्थ की चिरन्तन भूख !

यवनपति खिलजी मेवाड के विपुल सौन्दर्य के पीछे उन्मत्त होकर उसको विनष्ट करने पर तत्पर हो गया है। उसकी काम-तृष्णा नैराश्य के आवरण मे आच्छन्न होकर विध्वंश पर केन्द्रित हो गई है। वासना मे आकण्ठ डूबा वह मानवीय सवेदनाओ से परे होकर मद, दभ, अहकार, ईर्ष्या, द्वेष अनाचार और हिंसा की प्रतिमूर्ति बन गया है। पद्मिनी नही

मिली तो खिलजी की काम-लिप्सा अतृप्ति की वीचियो मे लघु-तरणी सी सम्बलहीन होकर डोल उठी। वह सैन्य-बल से अपने वचनो को विस्मृत कर चित्तौड को खँडहर के रूप मे देखना चाहता है, चित्तौड की मान-मर्यादा पद्मिनी को अपनी वेगम के रूप मे अपने हरम । यह असम्भव है, असम्भव ! सूर्यवशी आहुतियो का अम्बार लगा देंगे, पर अपनी आन नही देंगे।"

सैन्य-सचालन का भार पवनसी को सौपा गया। वह तलवार हित मस्तक नवा कर बोला, "दीवाण जी की जय।"

"पवनसी !" अरिसिंह सावधान होते हुए बोले।

पवन सी तरुण-अरुण था। उसके अग-अग से रक्त टपकता हुआ दीख रहा था। सिर झुकाकर बोला, "हुक्म सा !"

"सूर्य-देवता से दर्शन के साथ यवनो पर भयकर आक्रमण किया जाय।"

"पर महाराज यवन सेना असख्य है।"

"पराक्रम सख्या पर नही आका जाता। मेवाड का योद्धा किमी का घर नही उजाड रहा है, वह किसी की वहू-वेटी की आवरू से नही खेल रहा है, वह किमी के अधिकारो को राहू की भाति नही ग्रस रहा है।" एक सास मे इतना लम्बा वाक्य वोलने से अरिसिंह का साँस फूल गया। वे रुककर पुन बोले, "मेवाड का योद्धा अपने चित्तौड की रक्षा कर रहा है, वह अपने देश की आन और वान के लिए वलिदान हो रहा है, वह अपनी माँ का गौरव और वहिन की राखी की लाज रख रहा है। उसका प्रतिरोध करना अत्यन्त दुष्कर है।"

पवनसी सिर नवा कर खेमे से वाहर हो गया।

× × ×

प्रभात हुआ।

प्राची-प्रागण मे उषा की अरुणिमा प्रस्फुटित हुई। क्षितिज पर विस्तृत रक्तिम आभा रणदेवी के अधरो पर लगे शोणित सी जान पडी।

आकाश में गिद्ध मँडराने लगे थे। चतुर्दिक अस्त्र-शस्त्रों की झंकार सुनाई पड़ रही थी।

रणभेरी का निनाद आरम्भ हुआ।

शंख का गगन-भेदी स्वर के साथ राजपूतों के तुरंग उठ और बढ़े। जय एकलिंगेश्वर के साथ हर-हर महादेव के उद्घोष से राजपूती सेना अग्रसर हुई। उधर यवनाधिपति भी अधिक सैनिकों के साथ रण-प्रांगण में अवतरित हुआ। गुप्तचर ने अरिसिंह को समाचार सुनाया कि आज यवनों की ओर से गढ़ पर प्रचंड आक्रमण होगा।"

"हमें भी प्रत्याक्रमण उसी जोश से करना चाहिए।"

पवनसी की हथेली में कल घाव लग चुका था, अतः वह तनिक निरुत्साहित सा बोला, "किन्तु शक्ति?"

अरिसिंह ने एक हुंकार भरी। पवनसी के कन्धे पर हाथ रखकर वे गंभीर स्वर में बोले, "हममें अजेय शक्ति है। चित्तौड़ की रक्षा हम करेंगे। जब मैं रणभूमि में बहुत आगे बढ़ जाऊँ और शत्रु की सेना मुझे घेरने की चेष्टा करे तब तुम जोर का आक्रमण कर देना। इस पद्धति से उन्हें अत्यन्त हानि उठानी पड़ेगी।"

पवनसी अपने स्वामी की आज्ञा मानना ही अपना धर्म समझता था।

शंख राग अब अपने भरपूर जोश में था।

संघर्ष की भीषण वह्नि लिये मेवाड़स्वामी चित्तौड़ की रक्षार्थ आगे बढ़े। हर हर महादेव की प्रबल वाणी ध्वनित प्रतिध्वनित हो उठी।

दोनों सेनाओं के मध्य घमासान युद्ध हुआ।

[illegible] निरन्तर जीवन मानवों के रक्त से लोहित हो गया। पार्थिव मर्यादा विलोपित प्राणियों के समक्ष साक्षात हो उठी। शाम तक युद्ध अविराम रहा। जब अरिसिंह घेरे से आगे बढ़ रहे थे तब एक अज्ञात सैनिक [illegible] रहा था [illegible] युद्ध को रोको—युद्ध को रोको! यह युद्ध मनुष्यों का विनाश कर देगा, उन्हें राक्षस बना

देगा ।"

भोजन और अमल-पानी करके अरिसिंह उल्का के सम्मुख आकर खडे हो गए । आज युद्ध मे वे मृत्यु के मुँह से बाल-बाल बचे थे । क्षण भर के लिए उन्होंने कुलदेव एकलिंगेश्वर की अभ्यर्थना की । शय्या पर नेत्रोन्मीलन करके वे अवश से उठे—"महालोक की महायात्रा । नहीं, नही उससे भेंट पूर्व मृत्यु का आलिगन ? नही-नही ! वे अपनी पत्नी देवी के दर्शनसे पूर्व मृत्यु नही चाहते । अपने आपको समाप्त करना नही चाहते ।

मधुर कल्पना के वितान बुनते गए ।

उन्हें लगा—ग्रामबाला लावण्यमयी देवी अपने अप्रितम रूप चद्रिका से कण-कण को आह्लादित कर रही है । कमनीय अग-सौष्ठव आकर्षण के केन्द्र बिन्दु बने हुए हैं । अनन्तर उन्हे लगा कि सारा खेमा रूप-यौवन मद से सुवासित हो उठा है । विलास-वैभव से परिपूर्ण युगल मृणाल सम सुडोल बाँहे उन्हे अपने मे आवेष्टित किए हुए हैं ।

अतीत स्वप्न सा उन्हे स्मरण होने लगा—

अश्व का तीव्र वेग से भागना और सूअर का पीछा करना ।

अरसी उस दिन आखेट हेतु निकला था । वन्य-पशु सूअर का सर्व-प्रथम सामना हुआ । सूअर तीर से आहत होकर द्रुतगति से घने लह-लहाते खेतो की ओर भागा ।

अरसी ने उसका पीछा करना नही छोडा । वह खेतो को रौंदता हुआ सूअर का पीछा कर रहा था । ज्वार की बालियाँ पवन के झकोरो मे हिल रही थी । अश्व के पाँवो की खडखडाहट सुनकर एक ग्राम-बाला ने गर्ज कर कहा, "ओ अश्वारोही, ठहर, खेत को मत उजाड ।"

सगीत-सा मधुर स्वर ज्यो ही अरसी के कानो मे पडा, उसने लगाम थाम ली और चकित-सा वह उस युवती को निहारने लगा । युवती सकोच से स्तब्ध सी हो गई । कला की अधिष्ठात्री नारी-सौन्दर्य की अजेय अभेद्य रूप, अतुल किन्नरी-सौन्दर्य !

आकाश मे गिद्ध मँडराने लगे थे। चतुर्दिक अस्त्र-शस्त्रो की झकार सुनाई पड रही थी।

रणभेरी का निनाद आरम्भ हुआ।

मारू का गगन-भेदी स्वर के साथ राजपूतो के चरण उठ और बढ़े। जय एकलिगेश्वर के साथ हर हर महादेव के उद्घोष मे राजपूती सेना अग्रसर हुई। उधर यवनाधिपति भी अधिक सैनिको के साथ रण-प्रागण म अवतरित हुआ। गुप्तचर ने अरिसिह को समाचार सुनाया कि आज यवनो की ओर से गढ पर प्रचड आक्रमण होगा।"

हमे भी प्रत्याक्रमण उसी जोश म करना चाहिए।"

पवनसी की हथेली मे कल घाव लग चुका था, अत वह तनिक निरुत्साहित सा बोला, "किन्तु शक्ति ..."

अरिसिह ने एक हुकार भरी। पवनसी के कन्धे पर हाथ रखकर वे गभीर स्वर म बोले, "हममे अजेय शक्ति है। चित्तौड की रक्षा हम करेगे। जब मैं रणभूमि मे बहुत आगे बढ जाऊँ और शत्रु की सेना मुझ घेरने की चेष्टा करे तब तुम जोर का आक्रमण कर देना इस पद्धति म उन्हे अत्यन्त हानि उठानी पडगी।

पवनसी अपने स्वामी की आज्ञा मानना ही अपना धम समझता था।

मारू राग अब अपन भरपूर जोश म था।

सघष की भीषण वह्नि लिये मेवाडवासी चित्तौड की रक्षा म आगे बढ़े। हर हर महादेव की प्रचड वाणी ध्वनित प्रति ध्वनित हो उठी।

दोनो सेनाओ के म य घमासान युद्ध हुआ।

[illegible] निष्कलकित आनन्द मानवो रक्त मे तिरोहित हो गया। नारकीय भयानक निर्भीषिका प्राणियो के समक्ष साक्षात हो उठी। शाम भी युद्ध अनिर्णित रहा। जब अरिसिह सेमे की ओर लौट रहे थे तब एक आहत सैनिक बडबडा रहा था युद्ध को रोको—युद्ध को रोको! यह युद्ध मनुष्यो का विनाश कर देगा, उन्हे राक्षस बना

देगा ।"

भोजन और अमल-पानी करके अरिसिंह उल्का के सम्मुख आकर खडे हो गए। आज युद्ध म वे मृत्यु के मुँह से बाल-बाल बचे थे। क्षण भर के लिए उन्होंने कुलदेव एकलिंगेश्वर की अभ्यर्थना की। शय्या पर नेत्रोन्मीलन करके वे अवश से उठे—"महालोक की महायात्रा। नहीं, नही उससे भेंट पूर्व मृत्यु का आलिंगन? नहीं-नही! वे अपनी पत्नी देवी के दर्शनसे पूर्व मृत्यु नहीं चाहते। अपने आपको समाप्त करना नही चाहते।

मधुर कल्पना के वितान बुनते गए।

उन्हे लगा—ग्रामबाला लावण्यमयी देवी अपने अप्रितम रूप चद्रिका से कण-कण को आह्लादित कर रही है। कमनीय अग-सौष्ठव आकर्षण के केन्द्र बिन्दु बने हुए हैं। अनन्तर उन्हें लगा कि सारा खेमा रूप-यौवन मद से सुवासित हो उठा है। विलास-वैभव से परिपूर्ण युगल मृणाल सम सुडोल बाँहे उन्हें अपने मे आवेष्टित किए हुए हैं!

अतीत स्वप्न सा उन्हे स्मरण होने लगा—

अश्व का तीव्र वेग से भागना और सूअर का पीछा करना।

अरसी उस दिन आखेट हेतु निकला था। वन्य-पशु सूअर का सर्व-प्रथम सामना हुआ। सूअर तीर से आहत होकर द्रुतगति मे घने लह-लहाते खेतो की ओर भागा।

अरसी ने उसका पीछा करना नही छोडा। वह खेतो को रौंदता हुआ सूअर का पीछा कर रहा था। ज्वार की बालियाँ पवन के झकोरो मे हिल रही थी। अश्व के पाँवो की खडखडाहट सुनकर एक ग्राम-बाला ने गर्ज कर कहा, "ओ अश्वारोही, ठहर, खेत को मत उजाड।"

सगीत-सा मधुर स्वर ज्यो ही अरसी के कानो मे पडा, उसने लगाम थाम ली और चकित-सा वह उस युवती को निहारने लगा। युवती सकोच मे स्तब्ध सी हो गई। कला की अधिष्ठात्री नारी-सौन्दर्य की अजेय अभेद्य रूप, अतुल किन्नरी-सौन्दर्य!

अरसी ने अपने अश्व को उस सुन्दरी के समीप किया। उसके कमल-नयन एव तन्द्रिल पलको को अनिमेष दृष्टि से देखा और केसर की सुरभि-सदृश महकते गात की सौरभ से मुग्ध होता हुआ वह दीर्घ-निश्वास सहित बोला, "मेरा शिकार !"

युवती चतुर शिल्पी द्वारा विरचित सौम्य-शांत प्रतिमा की तरह स्थिर होकर बोली, "कैसा शिकार ?"

"मेरा शिकार यानी मेरा सूअर !"

'ओह !" कहकर युवती मुड़ी और बोली, "श्रीमन् कृपको की आत्मा को कुचलने की चेष्टा न कीजिएगा ? ये खेत हमारे जीवन हैं, इन पर आपका अश्वारूढ होकर दौडना हमे अति पीडाजनक लग सकता है। कदाचित इसका प्रतिशोध रक्तरंजित भी हो सकता है।" युवती ने क्षण भर के लिए वक्र-दृष्टि से अरसी को देखा और आगे बढती हुई बोली, "आप मेरी प्रतीक्षा कीजिए मैं आपका शिकार अभी लाई।"

अरसी विस्मित सा खडा रहा।

मन ही मन उसके बारे मे सोचता रहा। तभी वह युवती उस सूअर को रज्जु से बाधकर ले आई। अरसी हतप्रभ सा देखता रहा।

युवती न दभ से अरसी की ओर देखा फिर विनत हो उसने अपनी गर्दन झुका ली। उसके मुख पर सौम्यता झलकने लगी थी।'

"तुम बडी वीर हो।"

"क्या आप से भी !" सत्वरता से वह युवती खेतो की झुरमुट मे ओझल हो गई। युवती अपने पीछे एक मुक्त अट्टहास छोड गई। उस अट्टहास मे प्रछन्न प्रतिक्रिया ने अरसी को विचलित कर दिया।

अरसी के दो चार साथी आ गए थे।

वृक्ष की छाया के नीचे वे विचार विमर्श करने लगे। अरसी बार-बार वार्तालाप मे प्रसग रहित प्रश्न पूछ लिया करता था। उसके एक साथी ने अप्रत्याशित पूछा, "क्या बात है अरसी, तुम खो क्यो जाते हो ?"

"नही-नही !"

खेतो से गीत की मादक ध्वनि आने लगी थी। कृषक-कन्याएँ अल-कारों को धूप मे झलकाती, रग-विरगे वस्त्रो मे सज्जित एकाग्र होकर गा रही थी।

तभी अश्व हिनहिनाकर उछला !

अरसी ने भाग कर देखा कि उसके मित्र के अश्व की एक टाँग में चोट आ गई है। उसके साथी ने तुरन्त अपनी पगडी से घोडे की टाँग को बाँधा। इधर-उधर देखा तो वही युवती अपनी ओर आती हुई दीख पडी। इस बार वह उदास थी।

अरसी ने अपने मित्र से कहा, "यही है वह युवती।"

युवती ने विनीत स्वर मे कहा, "मैं आपसे क्षमा माँगती हूँ श्रीमन्, पक्षियो को उडाने के लिए गोफन चला रही थी, उसके एक ककर से आपके अश्व की एक टाँग • !"

अरसी उतावली से वोला, "कोई वात नही।"

युवती अपने गुलावी-कोमल अधरों पर मुस्कान विखेरती हुई पुन उनकी दृष्टि से ओझल हो गई।

"इन्द्रसिह, यह युवती मेरे मन मन्दिर मे वस गई है।"

"छि, आज शिकार के हाथो तुम स्वय शिकारी हो गए।

एक जोर का अट्टहास उस वन में गूँज पडा।

सध्या हो गई थी।

नर-नारियाँ खेतो से घर की ओर आ रहे थे। सम्पूर्ण ग्राम चहल-पहल से भर गया था।

अरसी युवती के पुन' दर्शन के लिए व्यग्र हो उठा।

साथी कह रहे थे कि घर चला जाए।

अरसी भावावेश मे कह उठा, "नही इन्द्र, वह युवती !"

वीच मे ही इन्द्रसिह वोला—"ठाकुर सा को जानते हो। सिसोदिया वश में उसकी प्रतिष्ठा अनुकूल ही कुलवधू आ सकती है।"

वश-गौरव को स्मरण करके अरसी भी विवश हो गया। सभी अश्व पर अरूढ होकर चले। जिसके अश्व की टाग मे चोट आई थी, वह साथी धीरे-धीरे आ रहा था।

पथ मे ही उन्हे वही युवती फिर मिल गई। इस बार उसने अपने सिर पर बडा 'मटका' रख छोड़ा था। दोना हाथो से उसने दो पाडियो (भैस के बच्चो) को पकड रखा था। पाडिए उछल-कूद रहे थे, पर क्या मजाल दूध का मटका गिर जाए। अरसी इससे बहुत प्रभावित हुआ।

इसके उपरान्त प्रतिदिन अरसी अकेला वहाँ से आता था और शनै शनै उसने उस युवती को अपने प्रेम की ओर आकर्षित कर लिया। वह युवती स्वय चन्दाणी राजपूत की कन्या थी। सयोग समझिए—अरसी ने जब उसके वृद्ध पिता के समक्ष अपनी इच्छा प्रगट की तो उस वृद्ध ने उसे सूर्यवशी समझ कर अपनी कन्या का ब्याह उससे कर दिया। ब्याह के उपरान्त इस रहस्य को कौटुम्बिक मर्यादा के प्रतिकूल समझकर अरसी ने किसी के समक्ष प्रगट नही किया। कदाचित लाखाजी इस विवाह की स्वीकृति भी नही देते। उस कन्या 'देवी' ने कभी भी अरसी से आग्रह-अनुग्रह भी नही किया। वह कृषक कन्या तारुण्य के विपुल उन्माद मे भी अरसी को अपना आराध्य मानकर विवेक पूर्ण कदम उठाया करती थी।

जब अरसी को बाप होने के समाचार सुनाए गया तो वह अपरिसीम आनद मे डूब गया।

हम्मीर का जन्म हुआ—गाव की मुक्त हवाओ के बीच।

उसकी मा देवी हम्मीर को सिसोदिया कुल की प्रतिष्ठा के अनुरूप उसे योद्धा बनाने लगी।

जब अरसी ने मृत्यु का सदेश गले लगाया था। इस रहस्य को उसने लाखा जी के समक्ष प्रगट कर दिया। लाखाजी ने उस पर कोई विशेष ध्यान नही दिया। साधारण घटना की तरह उन्होने इतना ही कहा, ठीक है।

राणा अरसी को इसस आघात लगा।

आज निशीथ के नीरव क्षणो मे उन्हे देवी की स्मृति रह-रह कर आ

रही है। प्रभु की भाँति निश्छल व करुण उसका फूल-सा नन्हा-मुन्हा हम्मीर क्षण भर के लिए भी उसके स्मृति-पट से नही हट रहा था।

बाहर प्रतिहारी तीव्र-स्वर मे पहरा लगा रहा, "सावधान ?"

अरसी ने अपने अश्रुपूरित नेत्रो को पोछा।

सँभल कर बडबडाए—"मुझे निर्बल नही होना चाहिए, निशक वनराज की भाँति मुझे अपने मन को बना लेना चाहिए। स्वजनो का सम्मोह वीरत्व के लिए घातक सिद्ध हो सकता है। आज मुझे पत्नी पुत्रके लिए व्यग्र न होकर आक्रमण के लिए नू‹ न पय-पाथेयो का निर्माण करना चाहिए।" तब अरिसिंह ने युद्ध की कला पर निपुण सेनानी की भाँति विचारना प्रारम्भ किया। कहाँ से शत्रु पर धावा बोला जाय। किस प्रपच द्वारा शत्रु को परास्त किया जाय ! उन्होने विचारा कि यवन सेना को इस भ्रम मे डाला जाय कि चित्तौड की सेना आज युद्ध-भूमि मे अवतरित नही होगी। जब यह भ्रम शत्रुओ पर पूर्णतया छा जाय तो अप्रत्याशित आक्रमण कर देना चाहिए। इसी प्रकार की उधेडबुन मे अरसिंह विचलित हो उठे। उल्का के प्रकाश से एक दीप्त मुख उभरा। देवी का उदास-उन्मल मुख ! उसके मुख पर अपार करुणा का सागर उछल रहा है। एक नारी की चिरन्तन चाह झलक रही है। समीप ही उसके हम्मीर खडा-खडा क्रीडा कर रहा है। उसके हाथ,मे छोट-सा तीर-कमान है। अरिसिंह भावाभिभूत हो गए। उन्हे लगा कि उनकी प्राण-प्रिया विगलित स्वर मे कह रही है—'नाथ, आपने प्रतिज्ञा की थी—कभी न कभी मैं तुम्हे अपने स्वजनो से मिलाऊँगा, पिता और माता के दर्शन कराऊँगा। क्या आप वचन !"

बीच मे ही तडप कर अरिसिंह ने उल्का को बुझा दिया।

घोर अन्धकार छा गया।

प्रतीची-प्रागण के तिमिर-राक्षस की जैसे ही मृत्यु हुई वैसे ही प्राची मे स्वर्णिम घटो को उडेलती हुई एक राजकुमारी का आगमन हुआ।

चराचर मे हल्का हल्का गुजन उठा।

युद्ध के नगाडे वजे।

अरिसिंह ने समस्त पौरुष के साथ आक्रमण वोल दिया।

मनुष्य-मनुष्य का रक्त-पिपासु वना रणभूमि मे जूझ रहा था।

२

अरिसिह के देहान्त होन के समाचार मे सारे चित्तौड मे विपाद छा गया। लाखाजी व राणाजी के हृदय पर भी वडा आघात लगा। किन्तु भगवती अभी और वलिदान चाहती थी। अत अजयसिह जी राणा वनन के लिए उद्धत हुए। लाखाजी अपने अन्य पुत्रो की वजाय अजयसिह से अधिक स्नेह करते थे। उमे राणा वनाने के लिए वे राजी नही हुए। वश-परम्परा की रक्षा और सिसौदिया कुल को सर्वनाश के पश्चात वप्पारावल के पितृजनो को पानी देने वाला इत्यादि वाक्य सुना कर उसे अपन मे विचलित करा दिया। लाखाजी ने वडे साहस भरे स्वर मे कहा, "तुम जीवित रहकर चित्तौड के पुर्नोद्धार का प्रयास करना। गुहिलोत वश को पुन प्रतिष्ठा दिलाना, जो दीपक वुझ गया है, उसे पुन जलाना। तव अजयसिह गोपनीय माग मे कैलवाडा चला गया। वह चित्तौड को सदा सदा के लिए छोड कर चले गए।

महासेनापति पवन सी आहत हो गया था अत उसे भी अजयसिह के साथ भेज दिया गया।

इस प्रकार महावली सिसौदिया वशज सामन्त लाखाजी ने अपने शेप पुत्रो को वारी-वारी से राज्य-सम्मान प्राप्त कराके जन्मभूमि की वलि-वेदी पर न्यौछावर कर दिया। उनके सभी पुत्रो ने अपने शौय के विशेप उदाहरण छोडे।

राणा जी और लाखा जी ने जव इतनी वडी गाहुतियो के वाद भी

विजय श्री को अपने पक्ष मे नही देखा तो उन्होने निश्चय कर लिया, "अब हमारा समय समाप्त हो गया, अब हमे भी समराग्नि में आहुति दे देनी चाहिए ।"

युद्ध के सकेत विपरीत चल रहे थे। विजय की कोई आशा नही दीख रही थी। तब सभी सरदारो एव सामन्तो ने केसरिया वाना पहन कर अन्तिम वार प्रवल आक्रमण करने का निश्चय किया। इधर जब पुरुषों ने केसरिया वाना पहनना निश्चय किया तो उधर वीर राजपूत ललनाएँ अपने सतीत्व की रक्षार्थ अपने आपको अग्नि-माँ की गोद में सौंपने को तत्पर हुई। जौहरव्रत की तैयारियाँ शुरू हो गई। महारानी पद्मिनी के नेतृत्व सहस्त्र क्षत्राणियो ने अपना अन्तिम शृगार किया। एक वहुत वडी चिता तैयार की गई। देखते-देखते ज्वालाएँ घी की आहुतियाँ पाकर प्रचड रूप से प्रज्वल्लित हो गई। रनवास शून्य हो गया। अगणित ललनाएँ जीवन के महानतम क्षणो के लेकर चिता के चतुर्दिक ईश्वरोपासना की मुद्रा मे खडी हो गई। सौन्दर्य की प्रतिमा महारानी पद्मिनी के अधरो पर एक उज्ज्वल मुस्कान थी। चित्तौड के वीर अपने हृदय को पत्थर के समान कठोर वना कर इस भयकर किन्तु गौरवशाली जौहरव्रत को देख रहे थे। हृदय-विदारक सगीत प्रारम्भ हुआ। चित्तौड की प्राचीरो को कँपाती हुई ज्वाला और उग्र हुई। सर्व-प्रथम चित्तौड की अधिष्ठात्री पद्मिनी ने आग का आलिगन किया। तत्पश्चात चित्तौड की सभी ललनाएँ उन लपटो मे कूद गई। किसी की भी आँखो में अश्रु नही था। अश्रु की जगह आज उनमे रक्ताभा थी और था गौरवपूर्ण तेज।

जौहरव्रत समाप्त हो गया। रूप, गौरव और प्रतिष्ठा एक साथ अग्नि-अक मे समा गई।

वीर निश्चिन्त हो गये। यवन सेना पर प्रत्याक्रमण के लिए अब वे द्विगुणित उत्साह से उद्यत हुए। रण-मारू प्रवल वेग से वजा। वीर केसरिया वाने पहनकर मस्ती मे झूम उठे। चित्तौड दुर्ग का सिह द्वार

खोल दिया गया। क्षुद्धित मृगराज की तरह राजपूत यवनो पर टूट पडे। उन्होंने यवनो का तृणमम सहार करना प्रारम्भ कर दिया। पृथ्वी मृतको से भर गई। आज उसका आंचल खून मे लाल बिलकुल लाल था मानो वह सदा सुहागिन को जोडा ओढ हुए है।

सिसौदियो का एक-एक वीर उत्सग हो गया पर विजय श्री अल्ला-ऊद्दीन खिलजी के हाथ लगी। यवनो ने अपनी जीत के डके बजाते हुए उस चित्तौड मे घुसे जो कल तक अतुल सौन्दय का कोश था, जिसके आँगन मे सहस्त्र रूप उल्काएँ जलकर पवित्र आलोक की सर्जना करती थी, जहां देवता की अचना मे प्रभात होते मगल ध्वनियां गु जित होती थी। आज वही नगरी जन-शून्य थी। वहाँ आहतो की सिसकियो के अतिरिक्त कुछ भी चेतन नही था। सवत्र मानव के खडित रूप ! श्मसान, जलता श्मसान !

चिता धधक रही थी। अल्लाउद्दीन उसे देखकर तडप उठा, 'मेरी पद्मिनी जल गई, उसका मासूम शरीर खाक हो गया।"

व्यथा से अभिभूत होकर खिलजी उस चिता को एकटक देख रहा था। किसी रूपसी ललना का हथजला हाथ आग से चटक कर दूर आ गिरा। माँस-भक्षी गिद्ध लपकता हुआ खिलजी के आगे से उडा, खिलजी काप गया। देखा—गिद्ध वह हाथ लेकर उड चला है।

उसके मुह से हठात् निकला, "गुल के वास्ते आया था, खार भी नही मिला ! दिल की हविस धुआँ बन कर घुमड रही है। यकीनन चित्तौड की बहार यहाँ के लोग अपने साथ ले गए।"

और दिल्लीपति ने पश्चाताप भरी दृष्टि से उस समर-सागर को देखा जिसका जल रक्तिम था, जिसमे अनथकारी बादशाह द्वारा किए गए विकृत रूप, मानवी अग-प्रत्यग तैर रहे थे। जिसकी प्रत्येक लोल लहर लावण्यमी नारियो के चीत्कारो से कम्पित हो रही थी। तडपते-सिसकते आहत सैनिक मा-मां कह कर के चीख उठते थे। सहस्त्र नर-मुड ! विनाश ही विनाश ?

खिलजी का पत्थर दिल द्रवित हो गया।

उसकी दृष्टि अपने हाथो की ओर गई। उसे प्रतीत हुआ कि उसके हाथ इन्सानी खून से रँगे हुए हैं। अचानक उसके कठोर होठो पर क्रूर मुस्कान थिरक उठी। मन ही मन उसने विचारा—राजनीति मे दया और करुणा का स्थान नही है।

उसके एक सिपाही ने आकर कहा, "चित्तौड मे एक भी आदमी जिंदा नहीं है। बहादुर कौम सबकी सब मर मिटी! हमने अनहलवाडा, गार, अवन्ती, देवगढ नगरो को भी उजाड डाला है।"

खिलजी ने थोडी चहलकदमी की।

"ओ राक्षस!" एक अत्यन्त वृद्धा आहत सैनिको के मध्य से प्रगट हुई। झुर्रियो से उसका सारा मुँह भरा हुआ था। नेत्रो मे लाल चिनगारियाँ दीप्त हो रही थी। विकृति की कई रेखाएँ एक साथ उसके चेहरे पर दौडी। खिलजी विस्मित-सा उसे देखने लगा।

बुढिया बोली, "रक्त-पिपासु! सँभाल अपना चित्तौड जो कल वीरो की लीला-भूमि थी और आज मरघट है। ओ नर-कीट, आज अपनी आंखो से इस हंसते-गाते देश को देख, अब यह चित्तौड हमारा नही है, तुम्हारा है! देखो इसे बडे यत्न से रखना। यह लाल खून से डूबी धरती तुम्हे बडा वरदान देगी, ये खड-खड राजमहल, ये टूटे-फूटे देवालय, ये ध्वस-विध्वस गढ-कगूरे किसी दुष्ट की ही शोभा बन सकते हैं। आगे बढ युद्ध-पिपासु, लगा इन्हे गले और जोर का अट्टहास करके कह—मैंने चित्तौड जीत लिया!

"ओ वासना के देवता! तूने एक स्त्री के लिए सहस्त्रो का सुहाग छीन लिया! मेरी उस बहू को छीन लिया जिसके विवाह की मेहदी भी फीकी नही हुई थी। उस पुत्र को छीन लिया जिसकी बाहुओ मे उन्मत्त वैभव सास भी लेने नही पाया! ओ दुराचारी, गौरव और सुख हिंसा मे नही मिल सकते, उसके लिए प्यार चाहिए, प्यार!

"मुझे छूना मत, मेरे लिए यह अग्नि माँ के समान है!"मुझे इसी की

गोद मे चिर-निद्रा लेनी है ! हत्यारे, एक बात को ध्यान से सुन—ससार मे यदि कोई वस्तु अमर है तो मृत्यु ! मौत ही अमर है ! एक दिन तुम्हे भी मिट्टी मे ही मिलना है ?"

वृद्धा स्वप्न-सी झलक दिखाकर चिता मे कूद पडी।

खिलजी पागल की तरह चीखा, "पकडो, इस जुबान-दराज को पकडो, इसकी गर्दन काट दो !"

धुएँ के बादल ने खिलजी की आँखो के आगे घोर अँधेरा फैला दिया।

३

अजयसिंह कैलवाडा के पर्वतीय प्रदेश मे निर्वासित प्राणी-सा जीवन यापन करने लगे। मेवाड की पश्चिमी दिशा की ओर अरावली पर्वत-माला की तलहटी म शेरोमल नाम का एक समृद्धशाली नगर है, उसी की चोटी पर कैलवाडा स्थित है। यही पर अजयसिंह रात-दिन पराधीन चित्तौड के स्वतन्त्र होने के सपने देखने लगे। यवनो ने चित्तौड को कुछ दिन अपने आधीन रखा, बाद मे उन्होने जालोर के चौहाण मालदेव को सौंप दिया। इधर भील एव धाडेती सरदार मूजा बालेचा उन्हे तग कर रहा था। यह मूजा बालेचा राजपूत था, जिसका काम डाके डालना था। बडा ही पराक्रमी और निर्दयी था। अजयसिंह सर्वप्रथम उसका ही काम तमाम करना चाहते थे। यह दुष्ट प्रकृति का पराक्रमी था और अजयसिंह को हाथ पाँव सँभालने का मौका ही नहीं दे रहा था। अजयसिंह ने अपने दोनो बेटो अजीतसिंह और सुजानसिंह को भी मूजा बालेचा की गर्दन काटकर लाने के लिए उत्साहित किया किन्तु वे सफल न हो सके। इससे उन्हे अत्यन्त निराशा हुई। तब उन्हे अरिसिंह जी के हमीर की स्मृति आई। वे चाहते थे—कदाचित् अरसी का पुत्र आतताय

को यमलोक पहुँचा दें ।

अन्त मे अजयसिंह ने हम्मीर को बुलवाने का निश्चय किया ।

हम्मीर अपनी विधवा माता देवी के सरक्षण मे ऊनवां गांव म एक युग व्यतीत कर चुका था । उसने मलखब कुश्ती, तलवार चलाना, तीर कमान छोडना, अश्वारोहण, शास्त्रो का पढना इत्यादि कलाओ मे निपुणता प्राप्त कर ली थी । वह हठीला एव कुशाग्र बुद्धिवाला तेजस्वी किशोर था । दिन भर अपने नाना के खेतो मे कठोर श्रम करता, रात्रि के आगमन पर अपनी मां देवी से भारतीय बालको की कथाएँ सुना करता था । ध्रुव, प्रहलाद, वीर अभिमन्यु की कहानी उसे बडी रुचिकर लगती थी ।

कभी-कभी वह मां के दुखी होने पर पूछ बैठता था, "मां, मैं अपने घर कब जाऊँगा, मेरे काका सा कहाँ है ?

देवी मौन हो जाया करती थी । उसके नेत्र भर आते थे । बेटे के इस प्रश्न पर उसे अरसी की याद हो आती थी । तब उसका मन वेदनाओ मे डूब जाता था । वह अपने दुर्भाग्य पर आठ आंसू रो दिया करती थी कि उसने न दशरथ सा ससुर, न कौशल्या सी सास और न भरत-लक्ष्मण से देवरो को ही देखा । उसने पीले हाथ करके कभी सुसराल में चरण ही नही रखा । वह हतभागी है, बिलकुल हतभागी ।

"मां, तू रोती है ?" हम्मीर मां को स्नेह से पूछता ।

मां ममता से भर उठती, "रोती कहाँ हूँ बेटे, सोच रही हूँ कि तुम अपने दादासा, काकासा और पिताश्री का प्रतिशोध कब लोगे ?"

"अपने पूर्वजो का गिन-गिन कर बदल लूंगा । मैं चित्तौड का राणा अवश्य बनूंगा मां ! मैं अपने देश को मुक्त कराऊँगा ।"

हम्मीर के हाथ की मुट्ठियां बँध जाया करती थी और देवी की छाती गर्व से फूल जाती थी ।

सोने मे सुहागा हो गया ।

हम्मीर की लालसा दिन प्रतिदिन चित्तौड को स्वतन्त्र कराने के

लिए प्रबल हो उठी। वह अपने चाचा से मिलने के लिए तड़प उठा। जब उसकी तड़प अपने चरमोत्कर्ष पर पहुँची तभी चाचा का दूत उस के पास आया और उसने सारा हाल सुनाया। हम्मीर ने गुस्से मे आ कर कहा, "मूं जा वालेचा! मैं उसकी गर्दन धड़ से अलग कर दूंगा।"

माँ देवी यह सुन कर फूल सी खिल उठी, "मुझे तुम से ऐसी ही आशा थी बेटे, तुम जरूर राणा बनोगे। तुम अवश्य अपने शत्रुओं का दमन करोगे।"

विदाई के समय ऊनवा के सभी लोगों की आँखें भर आइं। हम्मीर के साथी उससे गले मिल-मिल कर रो रहे थे। वृद्ध-जन व्यथा से तिरोहित हो कर कह रहे थे—"आज गांव का रखवाला जा रहा है।"

देवी की दशा बड़ी विचित्र थी। सुख-दुख, गौरव-आशका, उत्साह-भय विपरीत भावों का मिश्रण उसकी दृष्टि मे नाच रहा था।

हम्मीर ने भारी मन से मां के चरण स्पर्श किए।

देवी ने ममता से उफन कर हम्मीर को छाती से लगा लिया। वर्षों के बाद आज उसकी अँगिया दूध से भर आई। विकट परिस्थिति के कारण वह अपने बेटे के साथ नहीं जा पा रही है। एक दिन वह अरसी से अलग हुई थी और आज वह अरसी की निशानी को भी अनिश्चित काल के लिए छोड़ रही है। पता नहीं, भविष्य मे वह उससे मिलेगी या नहीं। चित्तौड़ के चतुर्दिक जो झंझावात उठ रहे थे, ऐसी स्थिति मे किसी के प्राणों को किसी भी समय खतरा उत्पन्न हो सकता है। फिर भी कर्त्तव्य को पूर्ण करना था। देवी ने हम्मीर को आशीर्वाद दिया और हम्मीर ने डबडबाई आंखों से मां के अन्तिम दर्शन किए।

हम्मीर के पवित्र तेजस्वी व्यक्तित्व को देखकर चाचा बड़े प्रसन्न हुए। उसका गौरवर्ण, विशाल ललाट, अजानुबाहु, चौड़ा वक्षस्थल और खंजन से बांके नेत्र! चाचा पर उन सबका अत्यन्त प्रभाव पड़ा! चाचा के चरणस्पर्श के पश्चात हम्मीर ने इतना ही कहा, "क्या हुक्म है?"

स्थान-स्थान पर हुए अपमान की तीव्र ज्वालाओं मे दग्ध हृदय को

जब विगत दारुण वेदनाओ का अनुभव हुआ तब चाचा अवश अधीर हो उठे। शब्द गले मे ही अटक कर रह गए। केवल नेत्र भर आए।

चाचा को इतना चिन्तित देखकर हम्मीर बोला, "आप चिन्ता न कीजिये काका सा, मैं स्वदेशानुराग का महामन्त्र लेकर अपनी जन्मभूमि के बन्धनो को काटूंगा। आप मुझे आज्ञा दीजिए।"

चाचा गम्भीर हो गए। पल भर के लिए उसका पितृत्व उमड आया। उसके सामने एक अधखिला फूल था। अधूरी अभिलाषाओ से उद्वेलित अन्तर! वे दुर्बल हो गए। वे कुमार को मृत्यु से युद्ध करने नही भेज सकते, नही भेज सकते। वे हठात् बोले, "अभी समय नहीं आया है।"

"समय की प्रतीक्षा मे अवसर चले जाते हैं, काकासा।"

"असमय का प्रयास जीवन मे असफलता दे देता है।"

"सांप के बेटे का काम काटना होता है। मुझे शत्रु को परास्त करने की आज्ञा दीजिए, परिणाम की चिन्ता को छोडिए।"

अन्त मे विवश होकर चाचा बोले, 'गोडवाड का डाकू मूजा वालेचा हमारे सगठनों के लिए अत्यन्त घातक सिद्ध हो रहा है। जब तक उस व्यक्ति को ठिकाने नही लगाया जाएगा तब तक हमे किसी भी काम मे सफलता नही मिल सकेगी। तुम्हारे दोनो भाई अजीतसिह और सुजान सिंह उसको मारने मे असफल ही नही बल्कि उससे स्वय हार गए, अत लाचार होकर मुझे तुम्हें बुलाना पडा, क्योकि हमे चित्तौड को पुन प्राप्त करना ही है।"

"आप निश्चित रहिए, आपकी आशा को मैं पूर्ण करूंगा।"

"शाबाश!"

"मैं मूजा वालेचा के गाँव जा रहा हूं। या तो मै उसकी गर्दन धड से अलग कर आपके चरणो में ला गिराऊँगा, अन्यथा स्वय को बलिदान कर दूंगा।"

तब हम्मीर अन्य शस्त्रों से सज्जित होकर मूजा वालेचा के सहार

हेतु चलने को उद्यत हुआ। एक बार पुन चाचा के चरण स्पर्श करके कहा, "आऊँगा तो बालेचा का सिर ही लेकर अन्यथा नही।"

चाचा ने दो-तीन विश्वस्त सरदारो को उसके साथ रहने के लिए कह दिया। जिसमे पवन सी भी था।

×

गोडवाड पहुचाते ही हम्मीर को मालूम हुआ कि मूजा सामेरी गाव जलसे मे गया हुआ है। श्रान्त-क्लांत हम्मीर ने साँस लेना उचित नही समझा। उसी पग वह सामेरी के लिए रवाना हो गया।

सामेरी मे मूजा अपने एक मित्र के यहाँ ठहरा हुआ था। उस मित्र की बरसगाँठ थी। जलसा प्रारम्भ था।

रात्रि की निस्तब्धता मे गायिका का स्वर गुंजित हो रहा था। वह नृत्य के साथ झटके दे देकर उपस्थित जन समूह का मन लुभा रही थी। अमल पानी के दौर चल रहे थे। लोग उन्मत्त से झूम रहे थे। वाह-वाह कर रहे थे।

अश्व के आगमन का सन्देह होते ही मूजा बालेचा के कान खडे हो गए। उसने गायिका की ओर से अपना ध्यान हटाकर अपने साथी की ओर देखा। उसका साथी उठ खडा हुआ। बाहर से आकर उसने धीरे से कहा 'कोई पाहुना है। राजपूत है। वेषभूषा से वह राजसी सामन्त का पुत्र लग रहा है।

उसे आदर से बिठा दो।'

हम्मीर भी जलसे मे सम्मिलित हो गया। धीरे धीरे उसने अपने पडोसी से यह जान लिया कि मूजा कौन है?

मूजा था हट्टा कट्टा जवान! काली दाढी, घनी-ऐंठी मूँछ। सुगठित तन। बडी-बडी डरावनी आखे। देखने से लगता था कि कोई गज रहा है। इसी राक्षसी जैसी मानसिक वृत्ति वाली।

रात भर जलसा चलता रहा।

अन्त मे मूजा बालेचा उठा। हम्मीर के पास आया। उस अमल-

पानी करने की विनती की। हम्मीर ने उसकी आवाभगत को अस्वीकार कर दिया। मूजा ने नाम-धाम पूछा। हम्मीर ने सत्यवादी की तरह अपने कुटुम्ब का परिचय दे दिया ? परिचय सुनते ही मूजा की रग-रग मे बिजली कौंध गई। भगिमा को कठोर कर वह अधिकार भरे स्वर मे बोला, "और तुमने इतना साहस कर लिया ?"

हम्मीर ने निर्भयता पूर्वक उत्तर दिया, "राजपूत का धर्म ही साहस करना है। शत्रु से प्रतिशोध लेना उसका कर्तव्य होता है।"

जलसे मे इन दोनो की गर्जना से सन्नाटा छा गया। सब एक दूसरे का मुंह ताकने लगे। मू जा उछल कर खडा हो गया। हम्मीर सावधान होकर निरीक्षक की दृष्टि से मूजा को देखने लगा। हम्मीर अस्त्र-शस्त्रो मे सज्जित था और मूंजा वालेचा अपने कमर बन्द को कसने लगा।

नर्तकी एक कोने मे अपने उस्ताद को पकडे खडी थी। दो अन्य सरदारो ने आगे बढ कर हम्मीर को पकडना चाहा किन्तु मूजा ने उन्हे मना कर दिया। वह वीर था। किसी शत्रु को चक्र मे फँसा कर मारना उसके धर्म मे नहीं लिखा था। अत उसने हम्मीर के समीप आकर पूछा, "क्या चाहते हो बालक ?"

हम्मीर को अपने लिए बालक सम्बोधन अच्छा नहीं लगा। वह गुस्से मे भर कर बोला, "वीर का क्या छोटा और क्या बडा ?"

मूजा की विशाल देह समक्ष हम्मीर बालक ही लगता था। मूजा के मित्र ने आकर कहा, "व्यर्थ मे अपने प्राणो को गँवाने से क्या लाभ है ? तुम चले जाओ।"

हम्मीर दृढता से बोला, "लाभ हानि देखना व्यापारियो का काम है। मैं अपनी बात का निर्णय करके ही जाऊँगा।" उस का तन कांप रहा था।

एक गो-पद शिखा वाले ब्राह्मण ने बढ कर कहा, "कुमार आवेग से नही, किंचित नीति-बुद्धि से कार्य कीजिए।"

हम्मीर ने कहा, "मैं पूर्व निश्चय कर चुका हूं। मैं मूजा से द्वन्द

युद्ध करूँगा ही।"

जलसे मे हँसी का फौव्वारा छूट पडा। भयभीत नर्तकी भी हँसे बिना न रह सकी। उसका सेवक जिसकी चाल मे स्पष्ट लक्षित होता था कि वह हिजडा है, विचित्र अदा मे आगे बढा और जनानी आवाज मे बोला, "अरे भाई, इस उम्र मे क्यो लडता-भिडता है, चल मुझसे ब्याह कर ले।"

जलसे मे अट्टहास गूँज पडा।

हम्मीर क्रोध आवेश मे चिल्ला पडा, "चुप हो जाओ। क्यो इस हिजडे के साथ दाँत निकाल कर वीरो की सभा को अपमानित कर रहे हो? मैं अरिसिंह का पुत्र हूँ। मैं रण-कौशल मे निपुण हूँ और मेरी बाहुओ मे अजेय शक्ति है। मैं सरदार मूजा को ललकारता हूँ कि वह मुझसे द्वन्द युद्ध करे।"

मूजा अब अपने आपको सयत नही रख सका। उसने अपना खडग सँभाल लिया। एक बार उसने हम्मीर के दीप्त तारुण्य की ओर बढते अग प्रत्यग को चाह-भरी दृष्टि से अवलोकन किया फिर वह युद्ध के लिए उद्धत हुआ।

देखते देखते दोनो के खडग टकराने लगे। उपस्थिति नेत्र फाड कर उन्हे देखने लगी। उपस्थिति का अनुमान मिथ्या निकला। यह बालक वस्तुत बालक नही, प्रचड पराक्रमी योद्धा है। रण-विद्या मे चतुर एव पारगत।

मूजा ने हम्मीर को अपने पजे मे आया देखकर पूर्ण शक्ति सहित वार किया। लोग चिल्लाए मर गया। किन्तु हम्मीर उस स्थान से हट गया और उसने पीछे से तुरन्त घूम कर मूजा की गर्दन पर वार कर दिया।

मूजा का सिर धरती का चुम्बन लेने लगा।

हम्मीर ने अपना भाला सँभाला और मूजा का सिर उस पर लटका कर गर्वारूढ हो गया। फिर एकलिगेश्वर की जय बोलता हुआ वह

द्रुतगति से चाचा को यह सुख-सवाद सुनाने हेतु पवन-वेग से धावित हुआ।

Part 3

× × ×

अजयसिंह अधीर थे। उनकी आंखो से निद्रा उड गई थी। वार-वार वे अपने सरदार चेतनसिंह से पूछ उठते थे कि क्या घोडे की टापें सुनाई पड रही हैं ?"

चेतनसिंह का उत्तर पाकर वे तिरस्कार पूर्ण स्वर मे कहते, "मैं सचमुच उस वालक का हत्यारा हूं। यह अपराध मुझे जीवन भर चैन नही लेने देगा। कहां राक्षस और कहां वह फूल-सा वालक ?"

इसी तरह सदिग्ध वार्ताओ मे विचलित अजयसिंह आकुल हो उठे। व्यग्रता और उग्रता का सघर्ष उनकी आंखो पल-पल छा रहा था।

यकायक उस अशान्ति काल में जव हम्मीर के आगमन की सूचना अजयसिंह को प्राप्त हुई तव उनके लोचन अश्रु-प्लावित हो उठे। हर्षातिरेक मे उनका गात कम्पित हो उठा। वे आगे वढे और हम्मीर को अपने प्रगाढालिंगन मे आवद्ध कर पुलक उठे, "चिरायु हो वेटा, सचमुच तुम चित्तौड के राणा होने के योग्य हो।"

हम्मीर के रूप की धवलता मे प्रशसा की अतिरेकता ने रक्तिमा दौडा दी। वह श्रद्धा से चाचा के चरण-स्पर्श करता हुआ वोला, "आप की मनोकामना पूर्ण हुई।" फिर उसने अपने भाले पर लटका मूजा वालेचा का सिर उतार कर उनके चरणो में भेंट कर दिया।

"आपके अपमान का वदला पूरा हो गया। अव आप शांति से अपना कार्य सम्पूर्ण कीजिए।"

चाचा हम्मीर के इस पराक्रम से गद्-गद् हो उठे। उन्होंने मूजा के सिर को ठोकर मार कर एक वार अपने भतीजे को चूम लिया और शत्रु के रक्त से उसके ललाट पर राजतिलक करके उसे चित्तौड का राणा घोषित कर दिया।

सव सरदारो ने राणा हम्मीर की जय-जयकार की।

अजयसिंह ने तत्काल आदेश दिया, "हम्मीर इस पद-प्रतिष्ठा के सर्वथा योग्य है। सिसौदिया-वंश की राज्य-लक्ष्मी आज से इसके आधीन होती है और हम सभी सामन्त सरदार इसे अपना राणा और एकलिंगेश्वर का दीवाण स्वीकार करते हुए देश को मुक्त करने के लिए नव-आह्वान करते हैं।

इस घोषणा की एक और सुन्दर प्रतिक्रिया हुई। राणा के स्वामी भक्त और देश-भक्त सामन्त उसमे आ-आकर मिल गए। वे पुन अपने नए राणा के खंग की छत्र छाया में अपना पौरुष और पराक्रम दिखाने के लिए आतुर हो उठे।

पर इस घोषणा से अजयसिंह के दोनो पुत्र अजीतसिंह और सुजानसिंह रुष्ट हो गए। उन्हे मार्मिक आघात लगा। फलस्वरूप अजीतसिंह अल्पकाल ही मे घुट-घुट कर मर गया और सुजानसिंह दक्षिण की ओर चला गया।[१]

४

इन सभी घटनाओ से हम्मीर चिन्तित नही हुए। जो जाना चाहते थे, वे जाए, हम्मीर ने किसी को नहीं रोका। किन्तु चित्तौड का राणा जो घोषित होता था उसे एक रस्म अदा करनी पडती थी। पितृ-सम्मान की प्राप्ति की प्रसन्नता मे राजपूत नरेश अपने सामन्तो एव सरदारो को लेकर समीप के शत्रु-राज्य पर आक्रमण किया करते थे। यदि चतुर्दिक शान्ति या साम्राज्य होता था अथवा नरेश का सर्वत्र अधिकार होता था तब भी नया शासक इस प्रथा का अन्त नहीं करता।

१ सुजानसिंह ने दक्षिण मे नए वंश की परम्परा डाली। वीर शिवा जी इसी वंश मे उत्पन्न हुए थे।

वह अभिनय मात्र द्वारा इस प्रथा को पूर्ण करता था। हम्मीर को मूजा बालेचा के साथियो से अभी तक आन्तरिक भय बना हुआ था। पता नही, वे निर्भय, दुष्ट प्रकृति-प्रवृति के लोग कब हम्मीर को छल बल से देव लोक पहुँचा दें। अत उसने टीका-दौड की प्रथा का केन्द्र उसके दुर्ग को ही बनाया।

बालेचा का गढ-दुर्ग गिरि था—सेलिया। वही से अपराधी मनोवृतियो का जन्म होता था और फिर अपराधी मनोवृति के प्रतीक धाडेती लोग शाति-प्रिय जनता पर भीषण अत्याचार करके उनका जीवन सुलगती लकडी-सा कर देते थे। हम्मीर ने निश्चय किया कि वह उस गिरि दुर्ग को ध्वस करके मूजा बालेचा की शेष शक्ति को ही समाप्त कर देगा। उसने अपने सामन्तो एव सरदारो को एकत्रित किया। उनके समक्ष अपनी इच्छा व्यक्त की। सरदार लोग उसके इस दुस्साहस पर विस्मय विमुग्ध हो गए। बोले, "वह दुर्ग बीहड जगल से घिरा हुआ है और वहाँ तक पहुँचना सहज नही है।"

'असम्भव' और 'नही' शब्द मे मुझे श्रद्धा और विश्वास दोनो नहीं हैं।

"श्रद्धा का प्रश्न नही है, प्रश्न है, अभी हमे हर कदम देख-भाल कर उठाना है। चारो ओर से मेवाड शत्रुओ से घिरा हुआ है। हमारे पास हाथी, घोडे, अस्त्र-शस्त्र कुछ भी नही।"

हम्मीर की आँखो के डोरे तन गए। वह बोला, "जिनका जीवन सदा तलवार की नोक पर रहता है, जिनके पूर्वज बदन के छलनी होने के बाद भी रणभूमि मे शत्रु से लोहा लेते रहे, उनके वशज ऐसे 'बोल' बोल रहे है! मृत्यु को जीवन समझने के बाद भी आपकी वाणी ऐसी भाषा का प्रयोग कर रही है? ओह! हमारी इन बाहुओ को क्या हो गया जो महाबली हाथियो के पथ को रोक दिया करती थी?"

हम्मीर के ओजस्वी भाषण से सारे सामन्तो एव सरदारो मे जोश भर उठा। उन्होंने तय किया कि टीका-दौड की प्रथा की अदायगी मूजा

वालेचा के दुग और मित्रो के विनाश मे ही करनी चाहिए ।

तत्काल हम्मीर की दशा अत्यन्त निर्बल थी । उसके पास सेना, अश्व, हाथी और अन्य सरदारो की शक्ति भी नही थी । फिर भी हठी और नीति-प्रवीण हम्मीर ने पुरखो की रीत को तोडना नही चाहा । उसने अपनी शक्ति को सयम करके सेलिया की ओर प्रस्थान कर दिया ।

चाचा अजयसिह, पवन सी और उसके साथ चुने हुए कुछ सरदार, मीना आदि लोग थे जिन्हे अजयसिह ने चतुराई से मिला लिया था ।

सेलिया गाँव पहुँचते ही हम्मीर ने रणभेरी बजवा दी । रणभेरी का शोर सुनकर दुगगिरी के आक्राता सँभल गए । उन्होने अपने दुर्ग के कँगूरो पर चढकर बाणो की वर्षा आरम्भ कर दी । जिसका प्रत्युत्तर भीलो ने वापस बाणो से दिया । आततायी पूणरूप से युद्ध के लिए तत्पर नही थे फिर भी वे सुरक्षित गढ मे थे । विवश हो, सरदार पवन सी ने अपने साथियो को बाण वर्षा के लिए रोक दिया ।

यहाँ वीरता के अतिरिक्त रण-कौशल की आवश्यकता थी । पवनसी ने बरसते बाणो के मध्य हम्मीर से निवेदन किया, "राणा जी, इस दुर्ग को हम इस तरह महीनो ही नही जीत पाएँगे ।"

हम्मीर को अपने किए पर तनिक पछतावा नही था । वह अकड कर बोला, 'जीवन का सम्मोह त्याग कर दुग मे प्रवेश कर दो ।"

पवनसी के लघु भ्राता खेतसी व अन्य सरदारो को उस आज्ञा का पालन करना पडा । वह भी अपने भाई के साथ दुग की ओर बढा ।

दिन भर युद्ध होता रहा ।

रात्रि के समय छावनियो मे हम्मीर अपने सरदारो से मत्रणा करता रहा । उसके प्रहरी सजगता मे पहरा दे रहे थे । उसके सैनिक अमल-पानी करके अपनी अपनी छावनियो मे विश्राम कर रहे थे, ऐसा हम्मीर को विश्वास था । अजयसिह बार बार व्यग्र होकर कह उठते थे, "तुम मे यह हठ अच्छा नही, रण बिना शक्ति कभी नही किया जा सकता है । दुर्भाग्य से यहाँ हम पराजित हो गए तो चित्तौड की गुप्त शक्ति से सारा

देश परिचित हो जाएगा और हम कभी भी चित्तौड का उद्धार नही कर पाएँगे ।"

हम्मीर चाचा के वचनो को सुनकर हताश नही हुआ । हल्की-सी व्यथा उसके नेत्रो मे तैर उठी । वह मौन होकर अनिमेष दृष्टि से ज्वलित उल्का की काँपती लौ को देखने लगा ।

चाचा कह रहे थे, "यहाँ विवेक की जरूरत है ।"

हम्मीर के समक्ष वह सुरक्षित दुर्ग नाच उठा । चाचा के कथन मे सत्य का आभास प्रतीत हुआ । यह निर्विवाद रूप से सही था कि इस दुर्ग को विजित नही किया तो सिसौदियो का वश सदा के लिए मेवाड को खो देगा ।

खेतसी हम्मीर का अत्यन्त विश्वास पात्र एव रण-कुशल योद्धा था । वर्षों से उसके खानदान वाले मेवाड के राज्य-वश पर अपना सर्वस्व विसर्जन करके उनकी आन-वान की रक्षा करते आए थे । आज हम्मीर पर आए सकट को देखकर वह अत्यन्त व्यग्र हो उठा । वह अपने तम्बू मे विचारमग्न वैठा था । उसके समीप एक लघु रजत-चपक मे कसूम्वा [अमल (अफीम) को घोल कर रखा हुआ पेय-पदार्थ] रखा हुआ था । उसके समीप ही एक गिलास-दूध का रखा हुआ था । दो सेवक सतर्क होकर खडे थे । समीप उसका वडा भाई पवनसी वैठा था ।

दो सेवक थे—शेरा और मेरा । भील जाति के ये प्राणी अत्यन्त स्वामिभक्त एव वलिष्ठ थे ।

अपने सरदार को उदास देखकर शेरा वोला, "क्या वात है स्वामी ?"

खेतसी दीर्घ नि श्वास के साथ वोला, "दुर्ग विजय नही हुआ तो राणाजी किसी को मुंह दिखाने लायक नही रहेगे और दुर्ग के वारे मे हमारी जानकारी नही के वरावर है । आज का यह अज्ञान सदा का अभिशाप सिद्ध हो जायगा ।"

मेरा तनिक उत्सुकता से वोला, "मेरी समझ मे एक उपाय आया

है ?"

"क्या ?" खेतसी ने तुरन्त पूछा ।

पवनसी के भी कान खडे हो गए ।

"सवेरा होते-होते हमे दुग मे प्रवेश कर लेना चाहिए ।"

'खेतसी धीरे मे हस पडे मेरा के भोलेपन पर । उसके कन्धे को थपथपाते हुए बोले, "दुग मे पहुचना क्या सहज है ?"

"सहज नही है किन्तु हमे साहस को भी नही छोडना चाहिए । किसी भी तरह दुग तक पहुचकर उसमे प्रवेश करना चाहिए ।"

शेरा ने मेरा की बात की पुष्टि की, "साहस को नही छोडना चाहिए, हम प्रयास करना चाहिए ।"

पवनसी ने अपने भाई को गले लगाकर कहा, 'तुम मेरे सच्चे भाई हो ।"

खेतसी, मेरा और शेरा तीनो जने शस्त्रो से सज्जित होकर रात के समय दुग की ओर चल पडे । रास्ता बडा विकट था । कँटीली झाडियो और घने पेडो से उलझी लताओ के कारण उन्हे हर कदम पर कष्ट उठाना पड रहा था । शेरा के हाथ बुझी हुई कुछ मशाले थी जो हम्मीर की सनाओ के लिए सकेत था ।

चलने के पूव खेतसी ने हम्मीर क चरण-स्पश करके विगलित स्वर म कहा था, "राणाजी, आप अपनी सेना के साथ तयार रहिएगा । जसे ही मसाले जले वसे ही आप दुग के तोरण द्वार पर पहुच जाए ।

हम्मीर ने खेतसी को प्रगाढालिगन म आबद्ध करके स्नेहसिक्त स्वर म कहा, 'तुम हृदय की मधुरतम धडकन हो, रिपु-रौरव म तुम्हारे जीवन को क्या-क्या यन्त्रणाए उठानी पडेगी, मै कल्पना-मात्र से दुखी हो जाता ह । फिर ये शेरा-मेरा प्राणो की बाजी लगाने मे सिसोदियो से भी अग्रणी है, उन्हे भी शत्रु के मोर्चे पर भेजते हुए हृदय भर आता ह । तुम दोनो भाइयो के ऋण मे चित्तौड कभी भी उऋण नही होगा ।"

खेतसी ने हम्मीर के इन व्यथा भरे स्वर पर तनिक ध्यान नही

दिया। वह पूर्ववत् स्वर मे बोला, "एक बात का ध्यान रखिएगा, यदि हम अँधेरे में ही दुर्ग मे प्रवेश करने मे सफल हो गए तो हम दो मशाले एक साथ जलाएँगे।"

हम्मीर स्वय शस्त्रो से सज्जित खेतसी के सकेतो की प्रतीक्षा कर रहा था। उसके सारे सैनिक आज असमय ही युद्ध करने के लिए कटिबद्ध थे।

एक छोटी-सी पगडडी पर खेतसी, सेरा और शेरा चल रहे थे। दोनो ओर पत्थरो के टुकडो का ढेर था जो कदाचित शत्रु को इस रास्ते मे आया जानकर उनके नाश के प्रयोग मे आता होगा।

धीरे-धीरे मद्धिम चन्द्रिका के प्रकाश मे उन्हे रास्ते मे थोडी दूर पर एक छाया हिलती हुई दिखलाई पडी। उसके कदमो की आहट सेरा ने धरती पर कान रख कर सुनी। उसकी श्रवणेन्द्रियाँ बडी प्रखर थी। उसने बारी-बारी से धरती पर अपने दोनो कान रखे और कहा, "कोई सतर्कता से पहरा दे रहा है। हमे सावधान हो जाना चाहिए।"

खेतसी ने अपना धनुष बाण सँभाला। तीनो साथी झाडियो की ओट मे आगे सरकने लगे। कभी-कभी झाडियो की शाखाएँ उनके वृक्ष की लौह-चादर मे टकरा कर धीमी ध्वनि कर देती थी।

मद्धिम चन्द्रिका के प्रकाश मे खेतसी ने उस व्यक्ति को देख लिया जो सतर्कता से पहरा दे रहा था। खेतसी ने अपना निशाना बाँधा, सेरा और शेरा ने भी अपने धनुष को चढाया। खेतसी ने एकलिगेश्वर की मन ही मन आराधना की। तीर छोडा। निशाना ठीक लगा। पहरेदार का काम तमाम हो गया।

अब वे तीनो ऊँची धरती पर खडे होकर दुर्ग को देखने लगे। जिस रास्ते से वे अभी जा रहे थे—उस रास्ते मे पूर्ण खतरा था। हर पचास कदम पर पहरेदार तैनात थे। यह भाग्य की बात ही समझिए कि दुर्ग की दीवारें जगह-जगह टूटी-फूटी थी। इन टूटी-फूटी दीवारो पर चढने मे सरलता हुई है।

उन्होने अपना पथ परिवर्तित कर लिया। अब वे अत्यन्त ऊबड-खाबड रास्ते से जा रहे थे।

अप्रत्याशित एक झाडी से एक नाग झपट कर मेरा के पाँव पर पडा। मेरा का पाँव मोटे वस्त्रो से बँधा था, अत साँप अपना डक नही मार सका किंतु वे इस आक्रमण से शकित हो उठे। मेरा ने साँप के टुकडे-टुकडे कर दिए। यह आक्रमण अशुभ-सा लगा मेरा को। उसका साहस टूट-सा गया। उसके पाँव धीरे उठने लगे। खेतसी उसकी मन स्थिति से भिज्ञ हो गया। उसका कन्धा पकड कर वह बोला, "साहस छोडने से कुछ नही होगा। देखो, दुर्ग हमारे बहुत समीप आ गया है, हमे दुर्ग के द्वार खोलने हैं।"

अब रास्ता कँकरीला सा आ गया। चतुर्दिक कँटीली झाडियाँ एव ऊँची-नीची कटी चट्टाने सी दीख पडने लगी। कुछ पत्थरो के विशाल खड भूत की छायाओ से लग रहे थे। खेतसी ने एक बार उन पत्थरो को स्पर्श करके देखा। अन्तराल की भय सजक भावनाओ का भ्रम दूर हो गया।

रात्रि का सौंदर्य-चन्द्र अब दुर्ग के पीछे छुप गया था। घोर तिमिर के मध्य पथ का अवलोकन दूभर हो गया था। अँधेरे मे ठोकर खा-खाकर वे अत्यन्त सावधानी से कदम रखते हुए आगे बढ रहे थे। वे प्रयत्न-शील थे कि उनके कदमो की आहट भी न हो।

गतव्य जब समीप आता है तब विषमताएँ बढ जाती हैं।

दुर्ग की प्राचीरो के सन्निकट पहुचते ही एक पहरेदार ने उन्हे देख लिया। देखने के साथ उसके मुह मे से एक आश्चर्य-भरी चीख निकल गई। उसकी चीख सुनते ही मेरा ने धनुष ताना और वह खेतसी तथा शेरा को पकड कर दूसरी ओर अत्यन्त शीघ्रता से लपक गया। उसे अदेशा था कि अभी थोडी देर मे यहा कई बाणो की वर्षा होगी। हुआ भी वही। कई बाण एक साथ उस जगह पर आकर टकराए। वे तीनो साँस रोक कर बैठ रहे—एक पत्थर की ओट मे। तीनो पसीने से लथपथ हो गए थे। कुछ देर तक वे इसी तरह बैठे रहे, अन्त मे वे

फिर आगे वढे।

इस वार उन्होंने अपनी तलवारो व ढालो को सँभाल लिया। वे अन्धकार में पाँवो व हाथो के स्पर्श मात्र से पथ का परिचय पाते थे और आगे वढ जाते थे।

खेतसी ने दुर्ग की दीवार के समीप पहुँच कर गगन को निहारा। असीम शून्यता व्याप्त उस तारो भरे आँचल को वह अल्पकाल के लिए देखता रहा। किरत्याँ की ओर दृष्टिपात करके वह वोला, "चार वज रहे मेरा, अव शीघ्र ही कार्य समाप्त किया जाय।"

अव समस्या थी कि दीवार पर कैसे चढा जाय ? दीवार वहुत पुरानी और खुरदरी थी। जगह-जगह टूट जाने के कारण उसमे गढे भी पड गये थे। वे तीनो दीवारो को देखने लगे। दीवार के कँगूरे पर किसी आदमी के चलने की ध्वनि आई। तीनो जनें जमीन पर लेट गएँ।

कदमो की आहट शनै-शनै लोप हो गई। खेतसी ने दोनो की गर्दनो को अपने समीप लाकर कहा, "अव क्या होगा ?"

शेरा ने कहा, "यदि यह पहरेदार यही पर पहरा दे रहा है तो हमारा यह कार्य सफल नही हो सकता। हमे वापस लौट जाना पडेगा।"

क्यो ?"

"क्योकि इस पहरेदार से यह वात स्पष्टरूप से ज्ञात होती है कि हर वुर्ज पर सैनिक तैनात हैं।"

"असफल लौट जाने से तो अच्छा है कि लडकर मर जाएँ।"

शेरा गभीर वना रहा।

खेतसी का मस्तिष्क भी भनभना उठा। उनके विचारो की शक्ति और कल्पनाओ की उडान मर-सी गई थी।

शेरा दृढ भावना को अपने स्वर मे घोलकर वोला, "मैं इसका प्रवन्ध करता हूँ। मैं आपको निराश नही होने दूँगा।"

क्या होगा ? इससे खेतसी और शेरा दोनो नितान्त अपरिचित थे। उनके समक्ष अन्धकार था, घोर अन्धकार।

– शेरा ने कहा था, मुझे आप ऊपर चढ़ाइए, पर ठहरिए, पहले मैं यह पता लगा लूं कि यह पहरेदार कितनी देर में लौटकर वापस आता है। उसे लौटने में सात क्षण लगे। अबकी बार वह पहरेदार आकर गया तो शेरा अपनी तलवार को मुंह में दाबकर दीवार पर चढ़ा। तनिक सम्बल दीवार पर चढ़ने के लिए पर्याप्त था। दीवार पर चढ़कर शेरा ने अपने आप को बुर्ज के कंगूरे में आत्मसात-सा कर लिया। उसके हृदय में विचित्र आन्दोलन मच गया था। जीवन और मृत्यु का संघर्ष। उसकी सांस रुकी हुई थी।

वह पहरेदार निशंक सा शेरा की ओर आ रहा था। उसके पांवों की आहट शेरा को मृत्यु दूत के आगमन की सूचना दे रही थी। पर जैसे ही वह शेरा के समीप आया शेरा ने लपक कर भरपूर प्रहार अपनी तलवार का उस पहरेदार के गले पर कर दिया। पहरेदार की गर्दन धड़ से अलग हो गई। रक्त की धारा पूर्ण वेग से प्रवाहित हो गई। प्रहार इतना सधा-तुला था कि वह हल्का क्रन्दन भी नहीं कर सका।

शेरा ने तुरन्त अपना शिरस्त्राण बदल कर उस पहरेदार का पहन लिया और फिर राव खेतसी को पुकारा। खेतसी के आते ही शेरा ने सारी स्थिति से अवगत कराया। शेरा के नेत्र अश्रु से छलछला आए। खेतसी ने उसे प्रगाढ़ आलिंगन में आबद्ध कर लिया।

प्रश्न उठा कि अब क्या किया जाय?

योजना बनाई जाने लगी।

इस बार खेतसी के मस्तिष्क ने तुरन्त काम किया। उसने कहा कि गढ़ के बाहर शत्रु की सेना नहीं के बराबर है, अत: शेरा शत्रु के भेष में दुर्ग के तोरण द्वार पर जाए और हम मशाल जलाकर राणाजी को आने का निमन्त्रण दे दें। जैसे ही वे दुर्ग के समीप आए, वैसे ही हम दोनों जोर से चिल्लायेंगे। हमारे चिल्लाने से दुर्ग के सैनिक हक्के बक्के हो जाएंगे और भागेंगे तब शेरा दरवाजा खोल देगा।

दोनों ने आकर दुर्ग के तोरण-द्वार के सम्मुख आकर चिल्लाए।

"ऐसा ही होगा।"

दुर्ग के कँगूरो की ओट लेकर दो मशालो का सकेत किया गया।

राणा हम्मीर साँस रोककर उनकी प्रतीक्षा कर रहे थे। वे तुरन्त अपने सामन्तो एव सरदारो को लेकर दुर्ग पर चढ आए। दुर्ग वाले इस आकस्मिक शत्रुओ के आगमन से आकुल हो उठे। वे सँभल कर कँगूरों पर आए, इससे पहले ही दुर्ग के तोरण द्वार पर मेरा और खेतसी ने शत्रुओ को ललकार दिया।

मेरा दुर्ग के सैनिको मे सम्मिलित था। शत्रु की ललकार सुनकर मारे के सारे पहरेदार आवेश मे मेरा और खेतसी की ओर भागे तब तक मेरा ने तोरण द्वार खोल दिया।

हम्मीर ने दुर्ग मे प्रवेश कर लिया।

शत्रुओ की स्थिति ही बदल गई। वीर बाकुरे राजपूतो ने उन आततायियो को गाजर-मूली की तरह काटना प्रारम्भ कर दिया।

भोर का तारा उगा।

देखते-देखते तलवारो की झकार मे भास्कर भगवान भी उदय हो गए। प्रखर धूप का साम्राज्य नसृति पर विस्तृत होकर मानवो के आत्म-लोक मे उल्लास की उर्मियो का सचरण करने लगा। पक्षियो का कल-रव कृपाणों की भयानक खनखनाहट मे लुप्त हो गया। ऐसा प्रतीत हो रहा था मानो आज दुर्ग के लिए यह सूर्य परिताप हरण न होकर मृत्यु का निमत्रण देने को आया हो। मेवाडी सिंहो की भाँति गर्ज गर्ज कर उन लुटेरो को मारने लगे।

सूर्य रश्मि-रथ पर आरूढ होकर थोडा ही अग्रसर हुआ कि दुर्ग जीत लिया गया। हम्मीर का अतुल शौर्य उस दिन देखने योग्य था। सब ने देखा—किस तरह हम्मीर पर्वत की भाँति अटिग होकर शत्रुओ का सहार कर रहा है। उसका लहूलुहान खग एक-एक वार मे दो-दो शत्रुओ को धराशायी कर रहा है। शत्रुओ के तीर उसकी वक्ष से टकराते थे पर उसके वक्ष की लौह-चादर इतनी मोटी थी कि तीर उससे

टकराकर ही रह जाते थे। उसकी ऐसी अद्वितीय वीरता देखकर सब ने मन ही मन सोचा—वास्तव मे हम्मीर ही चित्तौड का राणा बनने योग्य है।

दुर्ग जीत लिया गया।

हनुमान की मूर्ति अंकित लाल ध्वज फहरा कर दिया गया।

शेरा आहत था। वह मिमकता हुआ हम्मीर के पास आया। उसको देखते ही सुख का सागर दुख की वारिधि मे बदल गया। हम्मीर को अपना अन्तरग खेतसी स्मरण हो उठा। कोई जोर से चिल्लाया, "मेरा कहाँ है?"

तुरन्त शवो मे से दोनो लाशे ढूढी गईं। हम्मीर उन दोनो को देखते ही काँप उठा। खेतसी के प्राण पखेरु उड गये थे। नरकात्मा की सी घिनौनी आकृति लिए हुए खेतसी की लाश थी। रक्त तन से इतना निकल गया था कि चेहरा युगो की रुग्ण की भाति श्वेत-पीत हो गया था। दाएँ हाथ की पाँचो अँगुलियाँ कट गई थी। एक कपोल पर भाला चुभ गया था। दो तीर छातियो मे घुसकर पीठ मे निकल आए थे। एक जांघ पर तलवार का वार लगा था जिससे मांस का एक बडा लोथडा कट कर वही गिर गया था।

इस भयकर दृश्य को देखकर सभी जनो के आत्म-लोक मे व्यथा का झझा उठ खडा हुआ। पवनसी का कलेजा मुह को आ गया। वह चिघाड मार कर रो उठा। हम्मीर और सभी ने उसे धैर्य दिया पर पवनसी की आखो के आसू क्षण भर के लिए भी नही रुक रहे थे।

एक सनिक भागकर जल लाया। उसने शेरा के मुह पर छिडका। शेरा मे कम्पन उत्पन्न हुआ। हम्मीर तडप उठा। उसकी रग-रग मे दुख की लहर दौड पडी। मनुष्य जीवित रह कर जिन अनुभूतियो का अपने मानव लोक मे स्वप्न देखता है, उसे वह मर कर नही कर पाता। हम्मीर की इच्छा इन अनुभूतियो के कारण ऐसी कायर हो गई कि उसने तत्क्षण चाहा कि वह मर जाए, ताकि वह इस वीभत्स मृत्यु की यत्रणा से बच

जाए। उसके नेत्र अश्रुओ से भर आए। उसने टूटे हुए आदमी की तरह अपने शरीर को खेतसी की लाश पर झुकाया। तभी शेरा टूटते हुए स्वर मे बोला, "राणा जी !"

हम्मीर उसके समीप गया।

"राणा जी !"

"क्या है शेरा ?"

"एक इच्छा है ?"

"बोलो, तुम्हारी हर इच्छा को हम्मीर अपना सर्वस्व त्याग कर के भी पूर्ण करेगा।"

"नही दीवाण, आप मेरे समीप आ जाएँ।"

हम्मीर उसके समीप चला गया।

शेरा ने अपने काँपते हाथो से हम्मीर के दोनो हाथ पकडे। उन्हें स्नेह से अपने भाल पर रखा। फिर मधुर जीवनदायिनी मुस्कान के साथ उसने अपने वक्ष के घाव से रक्त निकालकर हम्मीर के ललाट पर खून का टीका लग दिया। तव शेरा के तरल लोचनो मे उज्ज्वल रश्मियाँ विकीर्ण हो उठी। एक अद्भुद-अलौकिक आनन्द की सर्जना हो गई। हमीर रुँधे स्वर मे बोला, "शेरा !"

"आप चिरायु हो।"

"शेरा मैं !"

"चित्तौड की प्रजा और भील का हर फला और पाल का मुखिया तथा गमेती आपके चरणो मे अपना मस्तक सदा रखेगा। अपने बाहुओ को आपकी सेवा मे लगा देगा। जहाँ मेवाड के कर्णधारो का पसीना वहेगा, वहाँ हमारा खून वहेगा।"

हम्मीर और उसके सरदारो को कलेजे मुँह को आने लगे।

शेरा के मुख पर अन्तिम वार आह्लाद का प्रकाश पुज आलोकित हुआ। उसने स्नेह से मेरा को पुकारा और दूसरे ही क्षण उसका शरीर ठडा हो गया, पर मेरा वहाँ नही था।

तभी मेरा गिरता पड़ता और लड़खड़ाता हुआ उन दोनों लाशों के समीप आया जो पुराने चर्मपत्रक की भाँति जीर्ण-शीर्ण हो गई थी। उसका मुख चरम दुख के कारण विकृत हो गया था। नेत्रों से गंगा-यमुना निरन्तर बह रही थी। वह पछाड़ खाकर उन लाशों पर गिर पड़ा। वह इतनी करुणा से चीत्कार कर रहा था कि पत्थर भी पिघल उठे। तब वह भर्राए स्वर में बोला 'मेरे स्वामी और नाती मुझे भूल मत जाना, हम सब फिर मिलेंगे, भगवान महादेव की सौगंध, हम जरूर मिलेंगे, इस लोक में न सही, पर उस लोक में हमें कोई अलग नहीं कर सकेगा। मेरे मित्र, मुझे मौत क्यों नहीं आती? मुझे मौत क्यों नहीं आती? मेरा अपना शेरा चला गया।

मेरा अचेत हो गया। उसे तुरन्त उपचार के लिए ले जाया गया।

हम्मीर ने अपने कमर से दुपट्टा खोलकर उन दोनों को ओढ़ा दिया और महाप्रभु एकलिंगेश्वर को उनके मोक्ष पाने की वह प्रार्थना करने लगा।

'टीका दौड़' की रस्म पूर्ण हो गई।

पवनसी ने समस्त कार्यों को सम्पूर्ण करके अंतिम बार गिरी दुर्ग का दर्शन करके कहा 'दुर्ग जीत लिया राणा जी पर शक्तिमान शत्रुओं का बटा कर।'

हम्मीर का मस्तक नत हो गया। पवनसी के नेत्रों में अविरल अश्रु बह उठे।

५

अब हम्मीर पूर्णरूप से केलवाड़ा पर्वतीय भाग का अधीश्वर होकर चित्तौड़ की मुक्ति का उपाय सोचने लगा। राजा मालदेव की शक्ति को क्षीण करने के अनेकानेक उपायों में हम्मीर संलग्न हो गया। सर्वप्रथम

उसन ढिंढोरा पिटवाया कि जो वीर मेवाड़ी चित्तौड की मुक्ति चाहता है और अपने आपको राणा हम्मीर का रक्षक तथा उसे चित्तौड व अपना राणा एव एकलिंगेश्वर का दीवाण मानता है, वह वीर अपने परिवार सहित पूर्व-पश्चिमी पर्वतीय प्रदेशो मे आकर बस जाए अन्यथा वे शत्रु समझे जाएँगे तथा उन्हे शत्रुओ की भाँति नाना प्रकार की आपदाओ का सामना करना पडेगा ।

इस घोषणा के सुनते ही मेवाडी वीर, भील, मीना तथा अन्य प्रजागण अपने गृहो का त्याग कर पर्वतीय प्रदेश मे आ गए। इनमे हम्मीर को दो बडे लाभ हुए—उसके विश्वासी साथी सगठित हो गए तथा उसको इस बात का भी अनुमान हो गया कि उसे कितनी प्रजा 'राणा' के रूप मे स्वीकार करती है ? वह रत्नसिंह का पुत्र नही था किन्तु सिसोदिया सामन्त का पुत्र अवश्य था। प्रजा मे यह एक भयानक प्रश्न खडा हो सकता था कि केवल हम्मीर ही क्यो राणा बने ? अन्य गर्वी सामन्त जो महाबली थे, इस पद के लिए सघर्ष प्रारम्भ कर सकते थे, पर हम्मीर ने देखा कि किसी ने हल्के स्वर मे भी इस प्रश्न को नही उठाया है। वह सर्वप्रिय है। उसे सभी सामन्त अपना राणा स्वीकार करते हैं। उसने जाना कि इस समय समस्त वीर गणो के मन मे एक ही लगन है, एक ही प्रतिज्ञा है, एक ही भावना है—गौरव के स्मृति चिन्हो का साकार, मेवाडियो के स्वाभिमान एव सम्मान का प्रतीक चित्तौड दुर्ग की मुक्ति। शत्रु के हाथ मे गई सूर्यवंशियो की श्री और कीर्ति की पुन प्राप्ति। अन्याय, अधर्म और अत्याचार की समाप्ति ! स्वतन्त्रता, स्वतन्त्रता का आह्वान !

हम्मीर ने मेवाडियो की तत्परता देखी। वे लोग कैलवाडा की ऊँची-नीची धरती पर अपने घर बनाने लगे। देखते-देखते वहाँ नई नगरी बस गई तथा मेवाड के अन्य प्रात निर्जन होने लगे। जब राजपूत पूर्णरूप मे ऊपरी हिस्से मे आ आकर बस गए तो हम्मीर ने आने-जाने के रास्तो का बीहड कर दिया। शत्रु की सेना या उसके अधीनस्थ सामन्त-सरदार

सुगमता से यात्रा न कर सके, इसके लिए उसने मुख्य-मुख्य पथो को ध्वंश करना प्रारभ कर दिया तथा उसने यात्रियो एव मालदेव के सरदारो को लूटना प्रारम्भ कर दिया।

गुरिल्ला युद्ध-पद्धति से हम्मीर को दो बडे लाभ हुए। पहला लाभ यह हुआ कि शत्रु की शक्ति क्षीण होने लगी और दूसरा हम्मीर को शत्रु के अस्त्र-शस्त्र मिल जाते थे। इससे हमीर अपनी शक्ति सचय करने लगा तथा उसकी बढती शक्ति को देखकर मुगल जाति के आतको से प्रताडित राजस्थान के कई सरदार इस स्वाधीनता प्रेमी वीर की सहायता करने लगे। हम्मीर की शक्ति दिन-प्रतिदिन बढने लगी।

× × ×

मुहम्मद तुगलक पूरा अहमक था तथा उसने अनेक दुस्साहसपूर्ण अदूरदर्शी कार्यो का बीडा भी उठाया, फलत उसकी शक्ति छिन्न भिन्न होने लगी, तथा प्रजा मे असतोष की ज्वाला जाग उठी।

इसी बीच हम्मीर के साथ भाग्य एक खेल खेल गया। अभी वह पूर्णरूप से अपने को सगठित कर भी नही पाया था कि उसने यह विचार कर लिया कि वह चित्तौड पर हमला करेगा। चाचा मना करते रहे पर हम्मीर नही माना। उसने कहा, "पहाडी चूहो की भाति जीवन निर्वाह करने से अच्छा है कि एक दिन सम्मान की मृत्यु पा जाएँ।"

मृत्यु को सर्वोपरि मानने वाले चतुर राजनीतिज्ञ नही हो सकते। बेटा, सफल राजनीति का तात्पर्य यही होता है कि यन केन प्रकारेण अपने प्रभुत्व को बढाया जाय।'

'नही मैं चाहता हू कि अतिशीघ्र आक्रमण करके चित्तौड पर अधिकार कर लिया जाय।"

मालदेव इतना दुर्बल नही है?"

'सिसोदिया के समक्ष चौहान तिनके के सदृश है।"

नही, अभी जालौर के चौहानो की शक्ति क्षीण नही हुई है।'

हम्मीर ने अपने हठ को नही त्यागा। उसने अपने साथी अनगसिह

को वुलाया और चित्तौड पर आक्रमण करने की योजना वना डाली। भील योद्धा मेरा अपना धनुष सँभाल चुका था। चाचा अजयसिंह आत-क्लात-से चहलकदमी कर रहे थे। अन्त मे वे गहरे मौन को तोडते हुए वोले, "टीका-दौड मे तुमने अपनी दो वाजुएँ कटवा डाली थी हम्मीर। शेरा और खेतसी की मृत्यु को हम कभी नही भूल सकते। आज तुम फिर शीघ्रता करके ।"

हम्मीर उत्तेजित हो उठा। वह झुँझलाता हुआ वोला, 'आप मुझे सदा निरुत्साहित कर देते हैं। मुझे विश्वस्त सूत्रो से ज्ञात हुआ है कि मुहम्मद तुगलक अभी मूर्खता भरे कार्यों मे लगा हुआ है, ऐसे समय किया गया आक्रमण कभी भी विफल नही हो सकता।"

अनगसिंह महावली जागीरदार था। श्यामवर्ण और लम्वा कद। सदा 'अमल' के नशे मे रहता था। क्रूर प्रकृति का दयाहीन। चित्तौड नरेशो का समर्थक। जीवन के इस परमध्येय का हामी—"युद्ध करो! जो राजपूत युद्ध के विना रहता है वह अवश्य वर्णशकर होता है।"

अनगसिंह ने हम्मीर की वात का समर्थन किया। उसने अपना खड्ग म्यान से निकाल कर कहा, "राणा जी ठीक फरमा रहे है। हमे भय से मुक्त होकर अति शीघ्र चित्तौड पर आक्रमण कर देना चाहिए।"

"युद्ध!" वीच मे अजयसिंह वोले, "विना पूर्ण शक्ति युद्ध घातक सिद्ध होता है।"

"वीरो के लिए युद्ध कभी भी घातक सिद्ध नही होता।"

उस दिन वात ने विवाद का रूप धारण कर लिया। विवाद भी कुछ ऐसा उलझा कि फिर सुलझा ही नही। रात के समय माँस पकाया गया था। मेरा दो हिरन मार कर लाया था। उसका सुस्वादिष्ट माँस जव भुनकर अजयसिंह जी समक्ष रजत-थाली मे ले जाया गया तव उन्होंने 'नहीं' का सिर हिला दिया। वे तनिक व्यग्र जान पड रहे थे। हम्मीर के हठ के समक्ष वे पराजित अवश्य हो जाते थे पर अव उन्हे यह स्पष्ट लक्षित हो रहा था कि उसका भविष्य अन्धकारमय है। अभी तक उस

की शक्ति का पूरा सगठन नही हुआ है, अभी तक उसके सारे सरदार हिंदुआग छत्र के नीचे एकत्रित नही हुए है तब वह जालोर के सोनगर चौहान मालदेव का सामना कैसे करेगा ?

यह रात्रि महारात्रि बन गई। उसका अन्त नही। अजयसिंह विचारो के द्वन्द्व मे बार बार प्राची के प्रागण मे सूर्य-देवता के आगमन देख रहे थे।

उधर हम्मीर को भी चैन नही।

निशीथ पहर के नीरव क्षणो मे उसके एक दूत ने समाचार सुनाया कि कोई घुडसवार शत्रु सैनिक गुप्त रूप से मार्ग मे जा रहा है। उसके पास मिश्री की दो बडी-बडी थलिया है।

हम्मीर यह सुनकर उत्साह से भर उठा। उसकी आखो मे चमक आ गई। अभाव की दशा मे थोडी भी प्राप्ति वरदान सिद्ध होती है। उसने अपना धनुष और खड्ग सभाला और अनगसिंह को जगाया।

पर्वतीय पथ की चट्टानो पर उन दोनो की पगरखिया धीमी-धीमी आवाज कर रही थी। कभी-कभी हम्मीर का अंगरखा किसी झाडी के काटो मे उलझ जाता था। अनगसिंह ने अपने दुपट्टे के बने कमरबन्द मे एक लघु स्वर्ण-पेटिका निकाली और उसमे से अमल का एक टुकडा तोडकर वह चबा गया जैसे वह विषाक्त पदार्थ उस योद्धा के लिए एक साधारण खाद्य हो।

एक सैनिक के हाथ मे मशाल थी। जली हुई नही, बुझी हुई। वह पहाडी रास्तो से पूर्णत परिचित था। वह उन दोनो के आगे जा रहा था। उसके चरण उन तिमिराच्छन्न बीहड पगडण्डियो के हार्दिक मित्र से जान पडते थे, तभी वह अत्यधिक शीघ्रता से पहुचाने वाली पगडण्डियो पर भाग रहा था।

आखिर वे तीनो गन्तव्य पर आ पहुचे।

रास्ता रोककर वे खडे हो गए। एक सैनिक ने मशाल ज्वलित की। मुसलमान अश्वारोही सहम कर रुक गया। उसका काला घोडा अगले

कदम उठाकर हिनहिना उठा। उसकी थैलियो के सिक्के बोल उठे। सिपाही के पीछे तीन घुड़सवार और थे, वे भी सावधान होकर खड़े हो गए।

हम्मीर ने कड़ककर कहा, "सिपाही, प्राणो की रक्षा चाहते हो तो थैलियाँ सौंप दो।"

सिपाही अर्थभरी जलती दृष्टि से हम्मीर को देखने लगा।

हम्मीर उसके और समीप आया। सिपाही ने अपने घोड़े को पीछे कर लिया। उसकी दृष्टि अपनी दोनो थैलियो पर थी।

"युद्ध करोगे ?" अनर्गसिंह ने आगे बढ़कर पूछा।

"हाँ, जब तक जान है तब तक अपने मालिक से दगा नहीं करूँगा। यह उसकी दौलत है, उसके दरबार मे हाजिर करूँगा।"

हम्मीर ने अनर्गसिंह की ओर उन्मुख होकर कहा, "यह अभिमान का पुतला है। इसे ।"

बीच मे ही सिपाही बोला, "जान शान से कीमती नही। मैं और मेरे साथी मरते दम तक आपको यह दौलत नही देंगे।"

हम्मीर समझौते के स्वर मे बोला, "क्यो जान के पीछे पड़ रहे हो, मैं व्यर्थ मे खून बहाना नहीं चाहता, पर यदि तुम मेरी आज्ञा को नहीं मानोगे तो तुम सबकी गर्दनें जमीन पर लोटती नजर आएंगी।"

"एक कुत्ता भी वफादार होता है, फिर हम तो आदमी हैं। वफा को कैसे छोड़ सकते हैं, बहादुर !"

"फिर ?" लघु शब्द एक बड़ा प्रश्न उत्पन्न कर गया।

"आप अपना काम करें और हम अपना करेंगे।"

तीन तीर आए और घुड़सवार जमीन पर लोट गए।

हम्मीर ने अपना खड्ग निकालकर उस पर वार करना चाहा। सिपाही थैलियाँ लेकर कूद पड़ा। वह अँधेरे मे भागना चाहता था पर हम्मीर के सैनिको ने उसे रोक लिया। वह आकुल-व्याकुल सा इधर-उधर देखने लगा। अनर्गसिंह को उसके स्वेदकणों से आच्छादित मुख को

देखकर करुणा आ गई। वह स्वय वीर था। उसे शत्रु को इस तरह घिरे देखकर उचित न लगा। यह अन्याय है, वीरोचित आदश नही। वह कडककर बोला, "नही, ऐसा नही होगा, रुक जाइए राणाजी।"

हम्मीर की उठी हुई खड्ग उठी रह गई। भावनाओ से उद्वलित सिपाही ने अपनी कमर म छिपी कटार को निकाल कर हम्मीर पर हमला करना चाहा पर तत्काल अनगसिह ने अपने विशाल बाजू को उठाकर सिपाही के हाथ पर दे मारा। इस आघात के लिए सिपाही तैयार नही था, अत कटार उसके हाथ से गिर कर दूर जा गिरी। हम्मीर का मशालची पागलो की तरह चिल्लाकर बोला, "शत्रु का विश्वास न करो।"

अनगसिह उन दोनो के मध्य पहाड-सा आ गया। वह अपनी दोनो थैलियो को बाएँ हाथ मे पकडे हुए था।

दु खद दुघटना के पूव ही अनगसिह ने एक नूतन निणय लिया। वह सिपाही का कन्धा पकड कर बोला, "वफा को तुम छोडना नही चाहते हो और राणाजी इन थैलियो को, फिर क्यो नही उसका उचित निणय कर लिया जाय ?"

"लेकिन मैं अकेला हू।"

"द्वन्द्व युद्ध कर लो।"

सिपाही ने अपनी ओर भयभीत चूहे की तरह देखा।

"तुम वीर होकर इतना डरते हो ?"

"नही।"

"फिर तलवार हाथ मे लेकर मुझ से लडो, जो जीतेगा, वही थैलिया ले लेगा।"

सिपाही इस सहजता मे थैलियो को अपने से दूर करना नही चाहता था। 'क्या पता, यह छल द्वारा उससे थैलियाँ प्राप्त करके हवा हो जाए।' उसने ऐसा विचारा और सावधान हो गया, "नही, तुम हुशियारी से मुझे धोखा देना चाहते हो ?"

"नही राजपूत युद्ध मे धोखा नही करते है।"

"मुझे विश्वास नही होता।"

"यह स्वभाव की बात है।"

हम्मीर के मन मे अनगसिंह के प्रति विचित्र अनुभूति हुई। वह विजित बाजी को पराजय में क्यो बदल रहा है ? राजनीति के उद्देश्यो-ध्येयो के विरुद्ध चलकर वह विजय की उपलब्धि नही कर सकता।

अनगसिंह ने अपनी तलवार को नमस्कार करके कहा, "तुम्हे मुझसे लडना ही पडेगा। मैं तुम्हारे खून से इस तलवार की प्यास बुझाऊँगा।"

"लेकिन ।"

"लेकिन मैं नही मान सकता। तुम नही लडोगे तो भी मैं तुमसे लडूंगा। न्याय भग नही होगा। देखो, सिपाही; राणाजी मेरे स्वामी है, मैं उनके चरणो की सौगन्ध खाकर कहता हूँ कि हम सच्चाई के साथ लडेंगे।

अन्त मे सिपाही ने निश्चिय कर लिया कि वह अनगसिंह से द्वन्द्व युद्ध करेगा। वह अपनी तलवार को सँभालने लगा। उसने दोनो थैलियाँ अपनी कमर के बाँध ली। जब दोनो द्वन्द्व युद्ध के लिए तत्पर हुए तब क्षण भर के लिए दोनो के मन मे मृत्यु की बात आ गयी।

थोडी ही देर मे स्थिति बदल गई। हम्मीर उन दो द्वन्द्व युद्ध-वेत्ताओ का न्याय करने के लिए एक ओर चट्टान पर बैठ गया। उसका हृदय निश्छल था। अन्य सैनिक दर्शक की तरह विस्मित उत्सुक दृष्टि से उन दोनो को टुकुर-टुकुर देखने लगा। मशालें जल रही थी।

अनगसिंह और सिपाही आमने-सामने आए।

दोनो बलिष्ठ और खूँखार लग रहे थे।

हम्मीर ने अन्तिम बार यह प्रयास किया, "यह निश्चय समझो कि तुम दोनो मे से एक को मरना पडेगा, क्यो नही प्रेम भाव से निर्णय कर लो।"

अनगसिंह ने व्यगपूर्ण तीखी मुस्कान के साथ कहा, "वीर लोग विश्वासघाती नही होते हैं। प्राण रहते वे अपने स्वामी को हानि नही

पहुँचा सकते ।"

सिपाही ने कहा, "राजपूत ठीक कहता है ।"

सिपाही यह कह गया, पर उसकी दृष्टि में बेचैनी थी जिस से उसके मानस का अन्तर्द्वन्द्व स्पष्ट झलक रहा था । कदाचित उसे विश्वास नहीं आ रहा था कि उसके साथ छल नहीं किया जाएगा ।

अनर्गासिह अब व्यग्र हो उठा था । समीप पड़ी विकराल चट्टान के एक खड्ग से अपनी तलवार को टकराकर बोला, "हममें से एक की निश्चित मृत्यु है, मैं समझता हूँ वह तुम्हारी होगी ।"

"नहीं जनाब, यह आपकी होगी ।"

"अभी पता लग जाएगा, उठाओ तलवार ।"

विकट पथ था । चतुर्दिक चट्टानों के लघु-दीर्घ खंड विस्तृत थे । मशाल से हिलती वृक्षों की छायाएँ प्रेतात्माओं सी प्रतीत हो रही थीं । लगता था—ये छायाएँ अभी किसी के प्राण को अपने में निगल जाएँगी ।

टन्—दोनों की तलवारें टकराईं ।

हम्मीर की आत्मा आन्दोलित हो गई । इस एकाकी प्राणी के प्राण लेना उसको नितान्त अनुचित लगा । फिर दुर्भाग्य का क्या भरोसा कब और कैसे आ जाए ? नहीं अनर्गासिह !

हम्मीर विचलित हो गया । उसने एक बार पुनः प्रयास किया ।

"तुम द्वन्द्व युद्ध मत करो सिपाही धन देकर लौट जाओ ।

अनर्गासिह को एक साथ क्रोध-घृणा आ गए । वह शिष्टता की परिधि के भीतर ही बोला, "राणाजी, यह बालकों जैसी बातें सर्वथा व्यर्थ हैं । यह युद्ध होगा और अवश्य होगा । शत्रु के खून से मेरी तलवार की प्यास बुझकर ही रहेगी । शत्रु-रक्त की तृप्ति ही वास्तविक तृप्ति है ।"

सिपाही उन्मत्त गज सा झूमता हुआ बोला, "जिस आदमी में नशा नहीं है उस आदमी के लिए जिन्दगी बेइज्जती का सामान है ।"

अनर्गासिह की आत्मा उबल पड़ी । नेत्रों के डोरे रक्तिम हो उठे, "मुझे लड़ने में ही जीवन का सच्चा सुख प्राप्त होता है ।"

द्वन्द्व युद्ध प्रारम्भ हो गया।

तलवारो की भयानक आवाज उस शून्य विजन पथ पर गूँजने लगी। मुसलमान योद्धा भी कम वीर नही था। वह भी अजीब पैंतरे दिखला रहा था। किन्तु अनगसिंह की आत्मा निर्भय होकर वार कर रही थी। सिपाही हर क्षण लाख प्रयास करने के बावजूद भी शकित हो उठता था। अप्रत्याशित उसने एक वार अनगसिंह की बाजू पर कर दिया। अनगसिंह यदि उस वार से अपनी सुरक्षा नही करता तो बाजू धड से पृथक हो जाता फिर भी रक्तस्राव नही रुका।

हम्मीर का मन दहल उठा।

अनगसिंह का पौरुष आहत साँप-सा फुत्कार कर उठा। उसकी आँखें पैशाचिक भावनाओ से दीप्त हो उठी। वह हुँकार कर सिपाही पर टूट पडा। ऐसा डरावना दृश्य था कि हम्मीर एव दर्शक सैनिक की रक्त-शिराएँ जम गई। तदनन्तर उसने अपनी तलवार युगल करो मे पकड कर सम्पूर्ण शक्ति से आघात किया। सिपाही के हाथ की तलवार छूट पडी। वह अत्यधिक चपलता के साथ चट्टान के टुकडे के पीछे हो गया। आघात बच गया पर अनगसिंह पागल हो गया। वह उसकी ओर झपटा। निहत्था शत्रु था। भय से आक्रान्त ! मृत्यु से शकित !

अनग दैत्य की भाँति क्रूर अट्टहास कर उठा। मृत्यु-दूत की भाँति उसकी धनुषाकार भौंहें उर्ध्वोन्मुखी हो गई। उसने सिपाही की पगडी को पकड कर अपनी ओर खीचा। पर दूसरे ही पल सिपाही ने एक बघनखा निकाल कर अनग के उदर की ओर प्रहार किया।

दोनो चतुर वीर थे। अनगसिंह ने हठात् सिपाही को छोड दिया और एक निकटवर्ती चट्टान पर चढ गया। बघनखा अनग पर फेंका गया। वार निष्फल हुआ। अनग उसकी ओर बढा। प्रतिपल मृत्यु सिपाही की ओर बढी। सिपाही की आत्मा की गहराइयो मे निहित रोदन चीख पडा, "नही, नही, मुझे छोड दो।"

हम्मीर दुख से द्रवित हो चिल्लाया, "इसे मत मारो।"

एक अट्टहास, दानवी अट्टहास !

हम्मीर ने देखा, अनग के हाथ मे सिपाही का सिर है। सिर से बहती खून धारा देखकर विह्वल हो गया, "यह क्षत्रियो की नैतिकता और धर्म नही है। यह अधर्म अनीति और महापतन है। किसी को अभय न देना वीर बप्पारावल के वशजो के विश्वास पर आघात है, कुकृत्य है।"

अनग एक विचित्र सी अनुभूति मे अपने दांत किटकिटा उठा। एक चट्टान को प्रस्तर-पीठिका मान कर उस पर बैठ गया।

उपदेशात्मक शैली मे अनग बोला, "युद्ध ही योद्धा की महान् लिप्सा होती है रिपु का यह मर्दन और उसके रक्त से नित्य नूतन तर्पण ही उसके राज्य और हृदय के लिए श्रेष्ठ वरदान सिद्ध होता है। क्योकि हृदय जब तक युद्ध-पिपासु नही होगा तब तक राज्य का विस्तार और लिप्सा की क्षुधा अन्तहीन नही होगी। शत्रु की मुक्ति स्वय का पतन बनती है। इसलिए राणा जी अपनी वीरता के आतक का डका उत्तर से दक्षिण और पूर्व से पश्चिम तक बजा दीजिए ताकि शत्रु आपके आह्वान के साथ पराजय स्वीकार करते।"

अनगसिह ने थैलियां हम्मीर को सौप दी, "यह लिप्सा है राणा जी, इससे जिस दिन मन भर जाएगा, उस दिन सूर्यवशीय क्षत्रियो का प्रताप धुधला हो जाएगा।"

तब अनगसिह ने सिपाही के सिर को कदुक की तरह उस तिमिर-लोक मे उछाल दिया।

चतुर्दिक नीरवता मे हम्मीर की दृष्टि खो सी गई। उसका मन शोकित हो गया। उन चट्टानो के पजीभूत तिमिर मे हम्मीर को उस सिपाही की कातर और चिन्तित आख दीप्त अगार सी दीख पडी।

Part 3 over

रात्रि अन्तिम साँसे ले रही थी। नील गगन मे तारे कुम्हलाए फूलो से प्रतीत हो रहे थे। दूर पर तमसाकार शृ ग-मालाओ की ओट से अरुणिम आभा के दर्शन होने लग गए थे। हम्मीर अभी-अभी शय्या त्याग कर उठा था। उसकी अलस तन्द्रिल लोचनो मे भारीपन स्पष्ट झलक रहा था। वह पर्वत की ओर से बिखर कर आती हुई सूर्य-रश्मियो का अनिमेष दृष्टि से अवलोकन करने लगा।

उभरती हुई दूरागत चारण की ध्वनि हम्मीर को प्रतिध्वनि बन कर कर्ण-कुहरो मे टकराती हुई जान पडती थी। चारण किसी क्षत्रिय-वीर का यशोगान कर रहा था। चारण का स्वर बीन सा मधुर और कर्ण-प्रिय था। हम्मीर उसमे खो-सा गया। चारण धीरे-धीरे पगडडियो पर अमर यात्री की तरह चलता गया। उसका स्वर मदा होता गया।

बीन का तार टन्न की मर्मान्तक ध्वनि करके टूट गया। हम्मीर का अग-अग झनझना उठा। उसे भय से काँपती उस सिपाही की सतप्त अबोध आँखें स्मरण हो उठी। वह मर्म-भेदी चीख हम्मीर के मन में आन्दोलन कर उठी। अनग का अट्टहास उसे क्रूरता की पराकाष्ठा लगा। उसका अन्तर सिपाही की मृत्यु के अवसाद के आवर्तन मे आवेष्टित हो गया।

राजपुरोहित मत्रोच्चारण करता हुआ हम्मीर के आगे से गुजरा। हम्मीर पुरोहित की वाणी सुनकर स्वप्नाविष्ट-सा चौंक उठा। एक दीर्घ निश्वास प्रस्फुटित हुई जिसमे गहरी अन्तर्वेदना झलक रही थी।

आज दरबार मे चाचा ने इस बात पर जोर दिया कि मालदेव के साथ असहयोग का सघर्ष शुरू किया जाय। असहयोग आन्दोलन से वह घबरा उठेगा।

कुशल नीतिज्ञ पवन सी ने अजयसिह जी की बात का समर्थन किया,

"जब तक हमारे पास अस्त्र-शस्त्र पर्याप्त रूप से एकत्रित न हो जाए तब तक हमे अपनी सेनाओ का यहाँ से कूच नही होने देना चाहिए।"

अनगसिंह बोले, इसके पहले अजयसिंह ने पुन कहा, "असहयोग आन्दोलन और छापेमारी का युद्ध स्वतत्रता के लिए बडे सहायक सिद्ध हुए हैं। हमे मेवाडियो मे निरन्तर इसी बात का प्रचार-प्रसार करना चाहिए जिससे राजा मालदेव का यहां जीना ही दूभर हो जाए। उसके पास असंख्य सेना है, वह सपरिवार जालोर को छोड कर यहाँ पडा है, इतना व्यय है कि यदि मेवाडी जनता उसके साथ सम्पूर्ण असहयोग करना प्रारभ कर दे तो वह स्वय चित्तौड से अपना डेरा उठा लेगा। हमे घर-घर जाकर यही कहना चाहिए कि पर्वत पर चलो, मालदेव को लगान न दो, उसका बात-बात मे विरोध-अवरोध करो। जब हम पूर्ण रूप से शक्ति-सम्पन्न व सगठित हो जाएँगे तब हमारा ध्वज गौरव सहित लहराएगा, अन्यथा शीघ्रता मे किया गया विवेकहीन कार्य पश्चाताप के आँसुओ के अतिरिक्त कुछ नही छोडेगा।"

अनगसिह ने अर्थ-भरी दृष्टि सारी उपस्थिति पर डाली। तनिक अपने पदासन से हटकर वह बोला, "चाचा जी अपनी अवस्थानुसार बात करते है और युक्तियाँ सुझाते हैं। चाचा जी श्रांत यात्री की तरह युद्ध और असन्तोष मे घबराते है। अब इनका मन महाप्रभु एकलिंग की अभ्यर्थना के अतिरिक्त हिंसा की ओर प्रवृत्त नहीं हो सकता। उनकी आत्मा हिंसा के नाम से काँपती होगी। अब वे वृद्ध हो चले इसलिए वे संघर्ष से हटकर शांति से शत्रु को पराजय देना चाहते है। हिंसा को त्याग कर अहिंसा के आधार पर उस राज्य की प्राप्ति के स्वप्न देख रहे है जिसकी हर ईंट मे शत्रु के खून के लाल छींटे अकित है।"

पवनसी ने विरोध किया, "बात हिंसा-अहिंसा की नही, बात है विनय की। पराजय की आशका होने पर आक्रमण करना मूर्खता ही है।"

जमाकर बोला, "आप ठीक कहते हैं, पर अभी शत्रु की दशा डाँवाडोल है। आक्रमण निश्चय सफल होगा। अहिंसा की बात नानी की कहानी सी निरुद्देश्य ही लगती है।"

अजयसिंह उठ खड़े हुए, "मैं इस बार अहिंसा की बात ही करूँगा। जब स्वयं मे प्रतिरोध की प्रबल शक्ति न हो तब अहिंसा का युद्ध ही शत्रु को देश-निष्कासन के लिए विवश करता है।"

अनगसिंह कटु-स्वर मे बोला, "भीख मे स्वराज्य नही मिलता काका-सा, भगवती माँ को खून दो, उसके खप्पर को रुण्ड-मुण्ड से भर दो, वह आपको स्वतन्त्रता देगी, आपकी जन्मभूमि को मान-मर्यादा देगी।"

हम्मीर ने अनगसिंह की बात का समर्थन बड़े शान्त-स्वर में किया। सिंहासन पर अकड कर वह बोला, "शत्रु की विषम स्थिति का हमे लाभ उठाना चाहिए। मुहम्मद तुगलक अभी मालदेव की सहायता नही कर सकेगा, ऐसे समय हमारा आक्रमण निष्फल नही होगा।"

अनगसिंह अपनी भयानक आकृति पर घृणा को नचाता हुआ तीव्र स्वर मे बोला, "युद्ध की ओर से कभी भी उदासीन न रहो, वीर के लिए युद्ध न करने का विचार ही मृत्यु है।"

बस फिर क्या था?

चित्तौड पर आक्रमण की तैयारियाँ होने लगी। अजयसिंह जी भी अब युद्ध की तैयारियो मे कोई बाधा उत्पन्न नही करते थे। वे अहिंसा एव असहयोग पर बार-बार जोर देने की रट लगाते थे पर उन की क्षीण ध्वनि हथियारो की भीषण खनखनाहट मे लुप्त हो जाती थी। पर्वत की विस्तृत गृह मेखला मे हथियारो की ध्वनि हर घडी आती रहती थी। अनगसिंह उन्मत गज-सा घर-घर युद्ध का निनाद करता रहता था। खून की होली खेलने मे उस युद्ध पिपासु पुरुष को एक विचित्र उत्तेजना और आनन्द की उपलब्धि होती थी। उसने उन विषाक्त तीरो की अनवरत सर्जना करनी प्रारम्भ कर दी जो शत्रु के तन को स्पर्श करते ही उसे परलोक का यात्री बना देंगे। वह खूँखार भेडिया

बना यत्र-तत्र सर्वत्र घूमा करता था। वीरो को उत्साह प्रदान करता था। उन्हे लम्बे-लम्बे भाषण और उपदेश दिया करता था कि जो राजपूत युद्ध से जी चुराता है, वह नरक का भागी होता है। वह कभी पाप से मुक्त नही होता।

वह ओजस्वी वाणी मे कहता, "का-पुरुष को परम प्रतापी पुरुष बना सकने का मेरा आत्मविश्वास नही टूटा है राणा जी! इन दया के पात्रो मे हिंसा की उस दुर्निवार आग को जन्म दूँगा जो करुणा की हल्की रेखाओ से भी इन्हे वंचित रखने लगेगी। राजपूतो के आस-पास मैंने चारणो का जाल फैला दिया है। ये चारण निरन्तर इन्हे युद्ध के लिए उकसा रहे हैं। उनकी वाणी सुनकर का-पुरुषो मे क्या, मुर्दो मे भी जान आ जाती है। मैंने सुना है, वे कहते हैं—ओ बप्पा रावल के वंशजो! ओ उज्ज्वल कीर्तियो के स्तम्भो! तुम्हारे राज्य मे एक निरंकुश आततायी मुक्त क्रीडा विहार कर रहा है। तुम्हारी पावन शीतल धारा मे एक यवन-चाकर निर्द्वन्द्व तरणी विहार कर रहा है। तुम्हारे पर्वतीय प्रदेश की उन्मादित समीरण मे एक रिपु यहाँ की नारियो के कोमल अंगो एवं मुक्त लास्यो मे प्रमत्त हो गया है, ऐसे समय मे ओ मृग वंशियो, तुम हाथ पर हाथ धरे क्यो बैठे हो! तुम्हारी उपत्य-काओ मे महाअनर्थ हो रहा है इसलिए वीर पुत्रो जागो, महाकाल को जगाओ ताकि शत्रु तुम्हारी जननी को स्वतन्त्र कर दे।

"राणा जी हमारा तीर निशान पर है। मुझे विश्वास है, समरांगण मे युद्ध के लिए उन्मत्त वीर शत्रु पर टूटेंगे तो विजय निश्चय ही हमारी होगी।"

अन्त मे वह रात्रि भी आई जिसकी समाप्ति पर युद्ध घोष किया जाना था। हम्मीर अपने कक्ष मे गंभीर मुद्रा बनाए शय्या पर बैठा था। समीप उसके दीप का प्रकाश जगमगा रहा था। उसकी शय्या की मयूर पीठिका पर नाचने मयूर का चित्र एवं स्थिर निगूढ उन्नाम की भंगिमा मे था। हम्मीर ने उस निष्प्राण मयूर पर कोमलता से हाथ फेरा। स्वच्छ वाता-

वरण मे शून्य प्रदेश की सांय-सांय स्पष्ट सुनाई पड रही थी। वह सांय सांय को दत्तचित होकर सुनने लगा। उसे लगा कि यह वन-प्रातर की सांय-सांय कह रही है कि प्रत्यूष के प्रथम पहर मे तूर्यनाद होगा और महामरण की छाया मे, प्रलय के आघातो में, पवन की चीत्कारों मे यह वीरो का दल जो आज सुख की निद्रा मे निमग्न है, जो आज वीर क्षत्राणियो की गोद मे प्यार, ममता, वात्सल्य लिए पडा है, जूझता हुआ दीखेगा! और धरित्री का आंचल रक्त से भीग जाएगा!

वह उद्वेग मे भर उठा।

तभी एक परिचारिका ने आकर निवेदन किया, "अनग आया है?"

"इस वेला?"

"हां!"

"भीतर आने दो!"

अनग अपनी एक भुजा का दूसरी भुजा से सरल स्पर्श करता हुआ हम्मीर के कक्ष मे आया! प्रणाम करके बोला, "वीरो को निद्रा नहीं आ रही है। राणा जी, वे युद्ध के लिए उन्मत हो गए हैं!"

"यह शुभ है अनगसिंह!"

"शत्रु का कलेजा उनकी हुंकारो से थर्रा जाएगा!"

"अनगसिंह, किसी भी तरह चित्तौड को प्राप्त करो!"

अपनी मूंछो पर ताव देता हुआ अनगसिंह बोला, "चित्तौड अवश्य जीत लिया जाएगा!"

७

सूर्य के साथ तूर्यनाद सुनाई पड़ा।

प्रलयकरी राजपूतो का दल चित्तौड की ओर चल पड़ा। उन की

दामिनी सी प्रत्यचाओ पर विनाश के तीर चढने को ललक उठे। युद्ध-शालाएँ आज शस्त्रो से खाली हो गई थी। शौर्य, वीर्य और तेजस्वी व्यक्तित्व के सम्राट हम्मीर अश्व पर आरूढ होकर सेना के प्रमुख रूपमे आगे-आगे बढ रहे थे। अप्रकट आक्रमण को प्रकट होते देर नही लगी। राजा मालदेव मुसलमानी सेना को लेकर पवनवेग मे आगे बढा। तब धूल बादलो से अनन्त आकाश धुँधला हो गया।

मालदेव के शास्त्रागारो की शिलाएँ शस्त्रो को धार देने के लिए वचैन हो उठी। मालदेव असंख्य सेना लेकर मैदान मे आ डटा।

घोर युद्ध आरम्भ हो गया।

शस्त्रो के टकराने से चिनगारियाँ निकलती थी। योद्धाओ के टकराने मे प्रतीत होता था कि धरती पर भूकम्प आ गया है।

भीषण युद्ध हुआ।

परिणाम भी आशा के विपरीत निकला। हम्मीर को भीषण पराजय मिली। ऐसी पराजय कि हम्मीर का हृदय टूक-टूक हो गया। अपने साथियो के अतुल पराक्रम के पश्चात ऐसी पराजय? हम्मीर चिन्ता, उद्वेग और भय से विचलित हो गया। अनगसिंह को कोई दुःख-सताप नही था। वह भी घूम-घूम कर कह रहा था 'जय-पराजय भाग्य की बात है। इससे साहस और धैर्य को नही त्यागना चाहिए। आह! जब मैने एक शत्रु को अपनी बगल मे दबाकर मारा तो उसका सिर ही फट गया। ठाकुर सा! एकलिंगेश्वर की सौगन्ध खाता हूँ, एक चौहान को पाँव से रौंद डाला था।'

अजयसिंह ने अनगसिंह को सुनाकर कहा, "जिस वीर को हिंसा भरी अमानवीय बातो मे आनन्द आता है, वह वीर थोडे ही दिनो मे शैतान हो जाता है। उसमे देवता के स्थान पर दैत्य का वास हो जाता है।"

अनग ने इस उपदेश मे तनिक भी रुचि नही दिखाई। वह उसी स्वर मे बोला "प्राणो के खून की धारा मे रंगते हुए बलखाने मे भी सावन

मे पडती हुई वर्षा की बूंदो की स्मृति दिलाते हैं।"

अजयसिंह भी व्यथित हो उठे। कडक कर बोले, 'तुम मनुष्यता से पृथक होते जा रहे हो। अनग! अधिक क्रूरता और दयाहीनता अत्यन्त कठोर परिणाम का आधार बनाती है।"

अनग अपने विचारो पर दृढ था, पर हम्मीर की मन स्थिति विचित्र हो गई। उसके जीवन मे उत्साह की जगह निरुत्साह छा गया। मालदेव विजयी होकर हम्मीर का चैन तक लूटने लगा। अब उसने हम्मीर के सरदारो एव सामन्तो को कष्ट देना प्रारम्भ कर दिया। जहाँ-जहाँ हम्मीर जाता था, राजा मालदेव उसका पीछा करता था और उसके सगठन पर आघात पहुँचाता था, उसके प्रत्येक कार्यक्रम को वह निष्फल बनाने का प्रयास करता था। इससे हम्मीर का मन उचट गया और उसे अपना भविष्य घोर तिमिर के अक मे खोया सा प्रतीत हुआ।

एक दिन अचानक उसने निर्णय किया कि वह मेवाड की भूमि को ही छोड देगा।

रात्रि की वेला थी।

चाचा अजयसिंह भी बैठे-बैठे गीता का पठन-पाठन कर रहे थे।

हम्मीर को अपने सम्मुख उन्मन् खडा देखकर पूछा, "क्या बात है बेटा ?"

"काका, मैं मेवाड को कुछ दिन के लिए छोडना चाहता हूँ।"

"क्यो ?" चाचा की आँखो मे प्रश्न नाच उठा।

"मुझे लगता है कि अभी मेरा यहाँ ठहरना उचित नही है। मैं एक बार गुप्त रूप से द्वारकापुरी की ओर जाना चाहता हूँ।"

"मैं नही चाहता। कोई वीर शत्रुओ के आघातो से घबरा कर अपनी मातृभूमि का परित्याग कर दे, इसे मैं उचित नही मानता। यह बहुत बडी दुर्बलता है।"

'किन्तु मेरा मन इन सभी वस्तुओ से नितान्त पलायन करना चाहता है। मैं प्रत्याक्रमण के लिए सजग होकर सोच भी नही सकता।"

"आखिर क्यों ?" उन्होंने इन शब्दों पर जोर दिया।

"क्योंकि मेरी शक्ति का पतन हो चुका है। इस पराजय के पश्चात हम किसी भी तरह विरोध के उपयुक्त नहीं रहे।"

"यह तुम किस आधार पर कह सकते हो ?" चाचा के विशाल नेत्रों में इस बार तनिक उत्तेजना उभर आई।

"आधार यही है कि इस पराजय में हमारे बड़े बड़े कई सामन्त मारे गए हैं और हमारी आर्थिक स्थिति भी ठीक नहीं है।"

चाचा उठ खड़े हुए। हम्मीर के समीप आकर उन्होंने अपने दोनों हाथ उसके कन्धे पर रख दिए। तत्पश्चात वे स्नेहसिक्त स्वर में बोले, "तुम्हें इतना निराश नहीं होना चाहिए। आशाहीन प्राणी कर्म-क्षेत्र में नितान्त असफल सिद्ध होता है। तुम्हारे सामन्त-सरदारों के पास अभी भी अतुल कंचन पड़ा है। वे अपने राणा के सम्मान के लिए अपनी स्त्रियों के गहने तक बचने को तैयार हैं।"

हम्मीर ने कोई उत्तर नहीं दिया। वह वहाँ से हटकर अपने निजी कक्ष में आ गया। एकान्त में उसके विचार-सागर में घोर उद्वलन चल रहा था - यह उद्वलन केवल पलायन के इर्द-गिर्द घूम रहा था।

निरुत्साहित उसके विचारों ने दृढ़ता धारण की और उसने चुपचाप सेना और अपने अन्य साथियों के साथ चित्तौड़ से प्रस्थान कर दिया।

वह थोड़ी दूर गया ही नहीं था कि पीछे से अनगसिंह आ पहुंचा। वह आकर बोला, 'राणाजी, आप गीदड़ों की तरह समर-क्षेत्र छोड़कर भाग रहे हैं? क्या पता कब आप पर विपत्ति आ जाए और आप के मान पर कोई कलंक लग जाए, इसलिए मैं भी आपके साथ चलकर आपकी रक्षा करूँगा क्योंकि मुझे सच्चाई के साथ युद्ध करने में ही आनन्द आता है।"

हम्मीर के अप्रत्याशित गमन पर चाचा चिन्तित हो उठे, पराजय के पश्चात मालदेव के रणवाद्यो का घोष निरन्तर उपत्यकाओं मे चाचा को चुनौती दे रहा था। शखनाद व तूर्यनाद स्वप्न मे चाचा के अग-प्रत्यग मे प्रकम्पन भर देते थे। उर-उदधि की एक-एक लहर कह उठती थी पराजय, पराजय, पराजय ! आवेश और आवेग मे उनकी मुट्ठियाँ बँध जाती थी। वे त्वरापूर्वक अपने कक्ष मे टहलने लगते थे।

शक्ति के अभाव मे चाचा शांति के तरीके अपनाने के आदी थे। वे युद्ध के प्रयोजन, परिणाम और परिणामोत्तर स्थिति का भलीभाँति विश्लेषण कर संग्राम भूमि में पाँव रखते थे। हम्मीर द्वारा किए गए असफल आक्रमण से वे विचलित हो गए। व्यर्थ का रक्तपात, हिंसा और हानि ! अनगसिह की युद्ध करने की अहर्निश प्रवृति ! यह सब क्या है ? यह मनुष्य के पतन की आधार शिलाएँ है।

चाचा चाह कर भी इन सभी बातो को विस्मृत नहीं कर सकते थे। कभी-कभी वे हम्मीर के प्रति भी रुष्ट हो जाते थे। वह अप्रत्याशित क्यो चला गया ? इस प्रकार घबरा कर मैदान छोड़ने का तात्पर्य यही हो सकता है कि उसमे चित्तौड को सँभालने की क्षमता नही है।

दोपहर का समय था। नीलाम्बर मे भास्कर भगवान अपने सम्पूर्ण पौरुष के साथ दीप्त हो रहे थे। दूर शैल-शिखरो एव उपत्यका मे गहरा सन्नाटा छाया हुआ था। उस सन्नाटे को विदीर्ण करता हुआ एक भील यात्री का स्वर गूंज रहा था—

डालने तरुवारे
पीली ने परवाते*

---

* एक भील लोक-गीत

ढाल और तलवार ! चाचा के कर्ण-कुहरो मे इतना ही शब्द पडा । वे उद्भ्रान्त से शून्य की ओर हाथ पसार कर तीव्र स्वर मे बोले, 'युद्ध ! युद्ध !! युद्ध !!! मेवाड का हर बेटा ढाल-तलवार की बात करता है, विरोध, प्रतिरोध और संघर्ष की बात करता है। किन्तु उस युद्ध से लाभ ही क्या, जो मनुष्य को ऐसी भयकर पराजय दे जाए जिसका परिणाम जीवित मृत्यु-सदृश हो ।'

उद्वेग मे चाचा का हाथ अपने उन्नत कक्ष पर चला गया। वे आवेश मे बडबडाए, ऐसी पराजय आत्म नाश और जगत नाश दोनो का कारण बनती है। पर मैं ऐसा कदापि नही होने दूगा !

प्रतिहारी को पुकारने पर उसने कक्ष मे प्रवेश किया।

प्रणाम के साथ वह चाचा के हुक्म की प्रतीक्षा करने लगा।

चाचा बोले, 'पवनसी को बुलाओ !"

चाचा के आमन्त्रण पर उसने त्वरा के साथ कक्ष मे प्रवेश किया। पाद-स्पर्श के पश्चात नत-मस्तक होकर खडा हो गया।

"पवनसी मैं तुम्हे बहुत बडी जिम्मेदारी सौपना चाहता हूँ। मेवाड की महिमा और प्रताप उसकी मिट्टी मे नही है, वह है हमारे बाजुओ मे। किन्तु भाग्य चक्र निर्मम होकर हमारा विरोध-प्रतिरोध कर रहा है। प्रकृति की प्रत्यक्ष चितवन हमारे साथ मनमाना खिलवाड खेल रही है। तब हमे असीम धैर्य और विवेक से कार्य करना है। हमे ऐसा संघर्ष करना है, जिससे गौरव की सौरभ निरुत्साहित प्राणो मे उत्साह का सागर लहरा दे, जो अचल शत्रु-दुर्ग की नीवे हिला दे !"

पवनसी मौन स्थिर खडा था। उसने तनिक भी समर्थन नही किया।

'तुम चुप क्यो हो ?"

'बापा सा, बात यह है कि मै केवल आपकी आज्ञा का पालन कर सकता हूँ। आप आज्ञा दीजिये मै मानदेव का सिर काट कर ला सकता हूँ। अपनी बुद्धि से मै कुछ भी राय देने को तैयार नही हूँ। बस, आप आज्ञा दीजिए।

पवनसी महावलिष्ठ योद्धा था। उसका हृदय विशाल और निर्भीक था। उसके सम्मुख अच्छे-अच्छे योद्धा हार खा जाते थे। उसकी आखो मे ज्वलन्त शौर्य चिनगारियो की तरह चमकता रहता था। वह अजेय और अपराजित योद्धा केवल वचनो का अनुसरण करना जानता था, केवल आज्ञा का पालन करना ही अपना धर्म समझता था।

चाचा एक वार अपने आसन से उठे और बैठे तब बोले, "सैन्य-शक्ति के अभाव मे हमे ऐसे तरीके अपनाने चाहिए जो अधिक से अधिक रक्तपात और हिंसा से दूर हो। हमे अहिंसा का युद्ध लडना चाहिए।"

पवनसी के तेजस्वी मुख पर आश्चर्य नाच उठा। अन्तर के विस्मय को अनावरण करता हुआ वह वोला, "अहिंसा का युद्ध ? काका सा! युद्ध और वह भी रक्तहीन युद्ध।"

"हाँ पवनसी, हमे रक्तहीन युद्ध लडना है। अल्पकाल के लिए इन आयुधशालाओं एव शस्त्रागारो के द्वार वन्द करने हैं। व्यर्थ ही स्वजनो और परिजनो का नाश कराना अधर्म और अनीति का कृत्य है।"

"तनिक स्पष्ट कीजिए!" उसने सहजता से कहा।

चाचा ने एक दीर्घ-निश्वास लिया, "यह वात तुम सवकी कल्पनाओ से परे है। तुम लोगो के मन मे अहिंसा के सग्राम की वात स्पष्ट नही है। तुम लोगो ने कभी भी थोडा भी परिवर्तन विना रक्त वहाए नही किया। चाहे तुम समथ हो अथवा असमर्थ, पर तुम समर भूमिमे अवश्य खडे हो जाते हो और युद्ध का घोष कर देते हो। फिर अपार क्षति पाकर सदा-सदा के लिए अपने भाग्य को परतन्त्रता के वन्धनो मे वाँध लेते हो। पर मैं ऐसी परिस्थिति मे नए ढग से विचारना चाहता हूँ। वह नया विचार है—रक्तहीन क्रांति! अहिंसा का युद्ध। शत्रुओं से घोर असहयोग!"

पवनसी की आकृति एक निरीह शिशु-सी हो गई। उस पर अज्ञान का भोलापन हिलोर ले उठा। उसकी युगल नीली गहरी आखो मे औत्सुक्य के भाव कम्पित छाया की तरह आने-जाने लगे। उसने अत्यन्त

विनम्रता से कहा, "सचमुच हमे रक्तहीन क्रांति और हिंसाहीन युद्ध की कल्पना ही नही थी।"

"फिर सुनो—सुदूर प्राची क्षितिज पर सूर्य के दर्शन-काल के आगमन पर समस्त सरदारो एव सामन्तो मे तुम यह घोषणा कर दो कि राणा जी जब तक तीर्थ यात्रा करके न लौट आए तब तक हम अहिंसा का युद्ध लडेंगे।"

तुम हमारे पुराने और विश्वासी सखा हो। राणा के पलायन का रहस्य गुप्त ही रहे।"

पवनसी ने कहा, "आप विश्वास रखे, पर इस आन्दोलन की रूप-रेखा क्या होगी ?"

"उसकी रूप रेखा यही है कि चौहान मालदेव के साथ हम किसी भी तरह का सहयोग नही करेंगे। हमारे वीर आज से किसी प्रकार की हिंसा किए बिना गुप्तरूप से इसी उद्देश्य का प्रचार-प्रसार करेंगे—

वे मेवाड़वासियो को कहेंगे—जितना सम्भव हो, वे शैल मालाओ के ही घरो मे जाकर बस जाएँ।

वे अपना व्यापार बन्द कर दे।

वे दूकान नही खोले।

वे मालदेव के आतंक को सहकर भी उसकी मदद न करे।

उन्हे चाहिए कि मालदेव की आज्ञा की अवज्ञा करे, उन्हे शांति से न बैठने दे तथा उन्हे कोई भी कार्य सुचारु रूप से न करने दे।

मेवाड़-वासियो मे इस मन्त्र का अधिक से अधिक प्रचार हो कि वे अपने व्यापार व व्यवसाय को बन्द करके धन की बचत करे ताकि उससे शक्ति का सचय किया जाय। उन्हे बढ़ोती ही नही, केवल अल्प बचत करनी है और उससे पुनः चित्तौड़ की स्वतन्त्रता प्राप्त करनी है। क्योंकि बूंद बूंद से सागर भरता है।

किसानो का मार्गदर्शन किया जाय कि वे मालदेव को लगान न देकर वे उन रुपयो को महाराणा हम्मीर की सेवा मे रखे। अन्न का हिस्सा वे

मालदेव को न देकर हमें दें ।

इन सभी वातो मे इस वात का ध्यान विशेप रूप मे रखा जाए कि मालदेव के सैनिको से लडाई न हो, क्योकि आततायी मालदेव किसी भी समय साधारण रैयत से भीपण खून की होली खेल सकता है । अत मालदेव हमारे व्यक्तियो पर यदि अत्याचार भी करे तो मेवाड वासियो को उसे सहर्ष सहन कर लेना चाहिए और विरोध अत्यन्त निपुणता से करना चाहिए ।"

पवनसी ने अनुरोध सा किया, "ये सिद्धान्त सभी सामन्तो एव मरदारो को अत्यन्त विचित्र लगेंगे । मेरा ऐसा विचार है कि कुछेक इस अभिनव-अभिमत से सहमत भी न होगे ।"

"ऐसा सम्भव है किन्तु जो चित्तौड की जय यात्रा के सम्पूर्ण रूप से समर्थक हैं, उन्हे राणा जी की आज्ञा का पालन करना ही होगा । तुम्हे महाराणा हम्मीर की ओर से इस वात का प्रचार-प्रसार करना है तथा जो विरोध करे, उन्हे उत्साह और विश्वास के साथ इसके महत्व को समझाना है ।"

पवनसी प्रणाम करके चला गया ।

कक्ष मे घोर निस्तब्धता छा गई ।

६

पार्वत्य प्रदेश के सीमान्त के अतलात से तिमिर का आविर्भाव होने लग गया था । उत्तुग शृग श्रेणियाँ घोर तमसा मे आवृत्त होते हुए नीले आकाश का अन्तिम आलिगन करती हुई दीख पड रही थी । मानों थोडी देर मे इनका यह मिलन ससृति के लोल लोचनो से छुपने के लिए समावृत हो जायगा ।

पवनसी के गृह में दीपक जल चुका था। वह दीपक के प्रकाश में बैठा हुआ चाचा के हिंसाहीन युद्ध व रक्तहीन क्रांति के बारे में सोच रहा था कि वह इस बात का प्रचार करे या न करे ?"

क्षितिज-आकाश का पारस्परिक आलिंगन तमसा में आवृत हो गया। तारे उज्ज्वल नीलमणियों में दीप्त हो गए। सुदूर पर्वत-श्रेणियों के पीछे चमकते हुए तारे पृथक आनन्द की सर्जना कर रहे थे।

पवनसी प्रकृति के इन अनुपम दृश्यों को निरन्तर देखकर विचार रहा था। उसके विचार केवल 'करूँ या न करूँ' की परिधि का उल्लंघन न कर पाए। जैसा कि वह अधिक विचार नहीं सकता था, अतः उसने यही निश्चय किया कि वह चाचा के नवीन ढंग के युद्ध का ही श्रीगणेश करेगा। वह चित्तौड़ का स्वामीभक्त सेवक है। उसका काम स्वामी का हुक्म मानना है।

तत्काल उसने सामन्तों सरदारों एवं चारणों को निमन्त्रण भेजा। उनसे प्रार्थना की कि एक विशेष बात के लिए आप सब से मन्त्रणा करनी है, प्रभात होने के साथ ही हमारी बैठक प्रारम्भ होगी।

सवेरा होते ही पवनसी के घर पर सामन्त सरदार और चारण एकत्रित हो गए। पवनसी ने सारी बात समझाकर अन्त में सिंह की भांति गर्ज कर कहा, "हमें राणाजी की आज्ञा का पालन करना ही है।"

कुछेक सरदार इस बात से व्यग्र प्रतीत हुए, हालांकि उन्होंने अपने को संयत रखते हुए अपनी वाणी में किंचित भी उग्रता नहीं आने दी। फिर भी इस नवीन संग्राम के लिए लोगों में जिज्ञासा और उत्सुकता होना थी।

सरदार भूपसिंह ने व्यंग्यमिश्रित मुस्कान के साथ कहा, 'यह रक्तहीन क्रांति और हिंसाहीन युद्ध पागलों का प्रलाप ही हो सकता है।'

सामन्त पद्मसिंह ने खिलखिलाकर हँसकर कहा, "राणा जी ने हमें अवश्य निकम्मा समझा होगा, तभी हमें ऐसा नपुंसकत्वमय कार्य करने को कहा है।

एक अन्य योद्धा ने गज कर कहा, "राणा जी यह विचार हमारी प्रतिष्ठा के सर्वथा प्रतिकूल है। खून के विना युद्ध हो कैसे सकता है?"

चारण अमरदान नितान्त शात था। राणा जी के राज्य का यह चारण अत्यन्त स्वामीभक्त एव ओजस्वी वाणी का सम्राट था। राणा जी की यश और कीर्ति को देश-देशान्तर फैलाने मे चारण अमरदान का वहुत हाथ था। वह पवनसी के हिंसा-हीन युद्ध की वात गम्भीरता से सुनता रहा और सुनकर उस पर चिन्तन-मनन करता रहा। उसे यह ढग तनिक उचित लग रहा था। उसने उठ कर विनम्र शब्दो मे कहा, "हमे असहयोग आन्दोलनो को व्यर्थ नही समझना चाहिए, शस्त्रो के सग्राम मे विपक्षी को अधिक शक्तिवान समझने पर ऐसे तरीके अत्यन्त लाभप्रद सिद्ध हुए है।

कुछ सामन्त अट्टहास कर उठे। उनके अट्टहास ने चारण के रोम-रोम मे क्रोध भर दिया। वह उन्हें फटकारता हुआ वोला, "आप हँसते हैं, आप मेरा उपहास करते हैं किन्तु मैं इस कथन मे उस सत्य के दर्शन कर रहा हूँ जिसके पीछे चित्तौड की विजय छिपी है। राणा जी अभी तीर्थ-यात्रा पर गए हुए हैं उनकी अनुपस्थिति मे असहयोग आन्दोलन और अल्प वचत ही श्रेयस्कर सिद्ध हो सकते हैं। कल मैं आदरणीय श्रीमन्त अजयसिंह से भी मिला था। उन्होंने भी मुझे कहा—हम्मीर की अनुपस्थिति मे हमे अधिक से अधिक धन-सग्रह एव मालदेव को निर्बल करना चाहिए। इधर हम मालदेव को धन नही देंगे, उधर दिल्लीपति तुगलक वादशाह उन्हे सहायता देना वन्द कर देगा। तव वह विवश होकर यहाँ से अपनी सेना हटा लेगा। और आप सव गम्भीरता से विचारे विना ही किसी नए विचार का उपहास करते हैं? राणा जी की आज्ञा का अपमान करते हैं।" चारण क्षण भर के लिए शात रहा फिर स्वर मे ओज भर कर वोला, "आप मेवाड की विजय-श्री के उज्ज्वल स्तम्भ हो, उसकी मान-मर्यादा के रक्षक हो, ध्यान रहे, आपका प्रत्येक कदम, प्रत्येक शब्द और आपकी प्रत्येक आज्ञा मेवाड के मार्तण्ड की

विधायिका है।"

सभा में गहरा सन्नाटा छा गया।

उपस्थिति के अन्तर प्रदेशों में परिवर्तन के झंझा उठे। कुछेक की भौंहे भी वक्र हुई और चितवनें भी तनी। तभी पवन-सी ने सबको अनुरोध किया, "चारण जी ठीक फरमा रहे हैं। फिर हमें एक स्वामी-भक्त सरदार की भाँति अपने पूज्य प्रातः स्मरणीय राणा जी की आज्ञा का ही पालन करना चाहिए।"

सभी सरदारों ने इस बात को स्वीकार कर लिया। केवल भूपसिंह अन्त तक इस नीति का विरोध करता रहा।

अमरदान चाचा के पास गया और उन्हें आश्वासन दिया कि आपकी इस नीति से चित्तौड़ का अत्यन्त उपकार होगा।

चाचा खिड़की की राह अपनी दृष्टि गिरी-शृंगों पर जमाते हुए भावाभिभूत से बोले, 'मैं सोचता हूँ कि क्या एक युग ऐसा भी आएगा जब इस धरती पर अहिंसा का संग्राम लड़ा जाएगा। चारण जी जौहर की ज्वाला में जलती उन कोमल और फूल सी निर्दोष सुकुमार बालाओं की कल्पना मात्र से मेरा मन संताप से चीत्कार कर उठता है। अपने अंतस में जीवन की आशाओं और अभिलाषाओं के लिए वे वीरांगनाएँ हँसती हँसती आग की भीषण लपटों में अवशायिनी हुई थीं, तब मेरा मन अप्रत्याशित कह उठता है — उन में वे स्त्रियाँ भी होंगी जो उस दारुण दुख को नितान्त विवशता में वहन कर रही थीं। उस समय तो, ये युद्धोन्मत्त मानव नहीं समझ सकते। सेना की मृत्यु और मेरे सगे भाइयों का बलिदान इतिहास में निज गौरव की वस्तु हो जाती है परन्तु क्या किसी ने केवल मनुष्य होकर भी सोचा कि यह महान जीवन की असंख्य आशाओं अन्तहीन प्यारी पत्नियाँ का यह हृदय जब निश्चित मृत्यु का आलिंगन करेगा तब यह कितना प्रचंड हाहाकार करेगा? उन्माद में आन के पश्चात् प्राणी भय, प्रीत, नाते रिश्ते एवं समस्त परिणामों को

प्राप्त कर लेता है। किन्तु साधारण स्थिति मे वह विनाश के लिए कटिबद्ध नही हो सकता। और विनाश भी कैसा, जिसका परिणाम केवल स्वजनो की आहुति के अतिरिक्त कुछ भी नही हो सकता।

चारण के मन में शका जागी। तनिक आतुर स्वर मे वह बोला, "हिंसाहीन सग्राम का यह आन्दोलन मेवाडियो की आत्मा मे निर्बलता को तो नही जन्म देगा? उनके पौरुष के लिए घातक तो सिद्ध नहीं होगा?"

'नही। मेरा यह आन्दोलन स्थिति विशेष के कारण चलेगा। अभी वह समय नहीं आया है कि हम सर्वथा अहिंसा का युद्ध लडें। अभी इस भूमि मे तलवार का ही बोलवाला है। हमे, विशेषत मुझे इस आन्दोलन की प्रतिक्रिया को देखना है। हम्मीर निराश होकर चला गया है। हमारा सगठन खण्डित हो चुका है। मालदेव चित्तौड पर अत्याचार करके आतक फैला रहा है। प्रजा त्रस्त एव परेशान है। ऐसी विषम स्थिति मे विरोध का सहज साधन एक ही है कि जो सत्ता है, उससे असहयोग करो। जब आपको अपनी शक्ति पर विश्वास हो जाय और शत्रु की स्थिति खोखली लगे तब आपको अपनी भूमि के लिए उत्सर्ग हो ही जाना चाहिए।"

"मैं प्रत्येक वीर को निशक देखना चाहता हूँ। मैं चाहता हूँ कि हम अपनी जन्मभूमि को पुन प्राप्त करें। किसी भी सबल को यह अधिकार नही है कि वह निर्बल के घर पर अधिकार प्राप्त करले। अपने अधिकार के लिए परिस्थिति विशेष पर शोणित भी बहाया जा सकता है।"

चारण ने चरण-स्पर्श करके विश्वास दिलाया, "मैं आपकी नीति का दीप घर-घर जला दूँगा। बच्चे-बच्चे मे इस बात का प्रचार-प्रसार करूँगा—अहिंसा परमो धर्म।

हम्मीर निरुद्देश्य यात्री की भाँति चलता रहा। चलता-चलता वह गुजरात के 'खोड' गाँव मे पहुँचा।

सारे दिवस के श्रांत हम्मीर, मेरा और अनगसिह जब अश्वो स उतरे तब उन्हे प्रतीत हुआ कि उनका अग-प्रत्यग टूट-सा रहा है। निरन्तर यात्रा के कारण उनके मन तक अब विश्राम करना चाह रहे थे। एक ग्रामीण कृषक के यहाँ उन्होने डेरा डाला। अभ्यागतो के आगमन पर उस किसान को अतीव आनद हो रहा था। उसका सारा परिवार अतिथियो के स्वागत-हेतु तत्पर दीख रहा था।

पवन वासती मरमराहट लिए था। थोडी देर पहले वृष्टि हुइ थी अत सृष्टि पर अलौकिक आनद का संचार हो गया था। मिट्टी म सोधी-सोधी सुग ध उठ रही थी। वर्षा के आगमन पर कृषको मे जो एक उत्साह दीखता ह, वह सबकी दृष्टि म लक्षित हो रहा था।

हम्मीर के मुख पर असाधारण तेज देखकर कृषक परिवार का स्वामी अपनी जिज्ञासा को नही रोक सका। हम्मीर का कर-प्रक्षालन करात समय उसन पूछ ही लिया, 'अतिथिवर, आप कौन हो?'

हम्मीर न प्रश्न भरी दृष्टि से परिवार के स्वामी को देखा और अत्यन्त सहज भाव से उत्तर दिया, "अतिथि!"

मेरा मतलब ह—वंश परिचय से।"

'सिसोदिया राजपूत ह।"

"द्वारकाधीश के दर्शन करने।"

"इस समय।"

"क्यों, क्या कोई विशेष बात है?"

'हमारे गाँव के भी जागीरदार कह रहे थे कि चित्तौड की दशा अच्छी नही है। उसका मुक्ति-मार्ग बन्द-सा हो रहा है।"

हम्मीर का चेहरा उदास हो गया। अपनी दृष्टि को बहती जल धारा पर केन्द्रित करके कहा, "समय का चक्र बडा ही विचित्र होता है। भैया, समय की कोप-दृष्टि अमोघ शस्त्र से भी क्रूर और दयाहीन होती है।

"लेकिन आप जैसे बलिष्ठ व्यक्तियो को ऐसे सक्रांति काल मे चित्तौड छोडते हुए देखकर आश्चर्य होता है।"

हम्मीर ने मौन धारण कर लिया। उसने इतना ही कहा, 'मैंने आपसे निवेदन किया न, समय बडा बलवान होता है।"

परिवार का स्वामी कुछ नही बोला। उसने अपनी उत्सुकता को अत्यन्त चातुर्य के साथ अपनी मुस्कान मे छुपा लिया।

भोजन से निवृत होते ही परिवार के स्वामी ने आकर हम्मीर से अनुरोध किया, "हम आपको एक देवी का दर्शन कराना चाहते हैं। यदि आपको कोई कठिनाई न हो तो उनकी हवेली मे चलिए।

हम्मीर ने अनगसिंह की ओर देखा।

अनगसिंह ने अपने मुख पर हाथ फेर कर कहा, "मैं नही चलूंगा। क्यो भैया, आप यहाँ पर मुझसे कोई द्वन्द्व युद्ध करने वाला ला सकते है?"

"नही।"

"फिर आप राणा जो . ।"

"अनगसिंह !" हम्मीर ने अनगसिंह को सावधान किया पर जो तीर तरकश से निकल चुका था, वह भीतर नही गया।

परिवार के स्वामी ने अत्यन्त सम्मान से प्रणाम करके कहा, "मैं पहले ही समझ गया था कि आप किसी श्रेष्ठ-कुल से सम्बन्धित हैं। मेरे मन मे एक उत्कठा थी कि मैं आपका वास्तविक वश परिचय पाऊँ पर

हम्मीर निरुद्देश्य यात्री की भाँति चलता रहा। चलता-चलता वह गुजरात के 'खोड' गाँव मे पहुँचा।

सारे दिवस के श्रान हम्मीर, मेरा और अनगसिह जब अश्वो से उतरे तब उन्हे प्रतीत हुआ कि उनका अग-प्रत्यग टूट-सा रहा है। निरन्तर यात्रा के कारण उनके मन तक अब विश्राम करना चाह रहे थे। एक ग्रामीण कृषक के यहाँ उन्होने डेरा डाला। अभ्यागतो के आगमन पर उस किसान को अतीव आनद हो रहा था। उसका सारा परिवार अतिथियो के स्वागत-हेतु तत्पर दीख रहा था।

पवन सामती सरसराहट लिए था। थोडी देर पहले वृष्टि हुई थी, अत सृष्टि पर अलौकिक आनद का सचार हो गया था। मिट्टी मे सोधी-सोधी सुगध उठ रही थी। वर्षा के आगमन पर कृषको मे जो एक उत्साह दीखता है, वह सबकी दृष्टि मे लक्षित हो रहा था।

हम्मीर के मुख पर असाधारण तेज देखकर कृषक परिवार का स्वामी अपनी जिज्ञासा को नही रोक सका। हम्मीर का कर-प्रक्षालन कराते समय उसने पूछ ही लिया, 'अतिथिवर, आप कौन हो'

हम्मीर ने प्रश्न भरी दृष्टि से परिवार के स्वामी को देखा और अत्यन्त सहज भाव से उत्तर दिया, "अतिथि!"

मेरा मतलब है—वश परिचय से।"

'सिसोदिया राजपूत हू।"

'मेवाड के '

"हा।"

"कहा जा रहे है श्रीमन्

'द्वारकापुरी।'

"द्वारकाधीश के दर्शन करने।"

"इस समय।"

"क्यो, क्या कोई विशेष बात है ?"

'हमारे गाँव के भी जागीरदार कह रहे थे कि चित्तौड की दशा अच्छी नही है। उसका मुक्ति-मार्ग बन्द-सा हो रहा है।"

हम्मीर का चेहरा उदास हो गया। अपनी दृष्टि को बहती जल धारा पर केन्द्रित करके कहा, "समय का चक्र बडा ही विचित्र होता है। भैया, समय की कोप-दृष्टि अमोघ शस्त्र से भी क्रूर और दयाहीन होती है।

"लेकिन आप जैसे बलिष्ठ व्यक्तियो को ऐसे सक्राति काल मे चित्तौ छोडते हुए देखकर आश्चर्य होता है।"

हम्मीर ने मौन धारण कर लिया। उसने इतना ही कहा, 'मैंने आपसे निवेदन किया न, समय बडा बलवान होता है।"

परिवार का स्वामी कुछ नही बोला। उसने अपनी उत्सुकता को अत्यन्त चातुर्य के साथ अपनी मुस्कान मे छुपा लिया।

भोजन से निवृत होते ही परिवार के स्वामी ने आकर हम्मीर से अनुरोध किया, "हम आपको एक देवी का दर्शन कराना चाहते हैं। यदि आपको कोई कठिनाई न हो तो उनकी हवेली मे चलिए।

हम्मीर ने अनगसिंह की ओर देखा।

अनगसिंह ने अपने मुख पर हाथ फेर कर कहा, "मैं नही चलूंगा। क्यो भैया, आप यहां पर मुझसे कोई द्वन्द्व युद्ध करने वाला ला सकते हैं ?"

"नहीं।"

"फिर आप राणा जी ।"

"अनगसिंह !" हम्मीर ने अनगसिंह को सावधान किया पर जो ती तरकश से निकल चुका था, वह भीतर नही गया।

परिवार के स्वामी ने अत्यन्त सम्मान से प्रणाम करके कहा, "
पहले ही समझ गया था कि आप किसी श्रेष्ठ-कुल से सम्बंधित हैं। मे मन मे एक उत्कंठा थी कि मैं आपका वास्तविक वंश परिचय पाऊँ प

मैं स्पष्ट रूप से ये सब पूछने का दुस्साहस नही कर सका । अब यह भेद जान कर मुझे प्रसन्नता ही नही, गौरव का अनुभव हो रहा है । राणा जी, मैं आपका किंचित भी अहित नही करूँगा । देवी सदृश चारण जी की बेटी बरवडी सचमुच करुणामयी है । उसकी वाणी मे सरस्वती का वास है । वह विगत, आगत और अनागत सबसे परिचत है । वह हिंसा, ईर्ष्या और अभिमान से सर्वथा मुक्त है । इस भू-लोक मे जहाँ पाप के विशाल स्तूप खडे है, यहा बरवडी ईश्वरत्व की महान आत्मा के लिए हमारी आत्मा की सच्ची पथ-निर्देशिका है । आप चलिए, उनके वाणी के श्रवण-मात्र से आपको शाति मिलेगी ।"

हम्मीर अल्पकाल के लिए विचारो के वशीभूत हो गया । उसकी पुतलियो की स्थिरता तथा आंगिक जडता उसके अन्तराल की बेचैनी की प्रतीक थी । वह परिवार के स्वामी के हाथो को पकडकर विनीत स्वर मे बोला, "श्रीमन्, एक प्रार्थना है यह रहस्य तुम्हारे और देवी के अतिरिक्त कोई भी जानने न पाए ।"

"मैं वचन देता हूँ ।"

"मैं आपका हृदय से आभार मानूगा ।"

तत्पश्चात हम्मीर व परिवार का स्वामी बरवडी के गृह की ओर गए । बरवडी विपुल वैभव की स्वामिनी प्रतीत हुई । उसके पास सुन्दर हवेली और कई दास दासिया थी । मुख-श्री पर प्रभावशाली ज्योति थी । और विशाल नेत्रो मे था गहरे सागर सा गाभीर्य ।

हम्मीर ने उसके वैभव का अवलोकन करके तुरन्त ही मन ही मन कहा, यह देवी कैसे हो सकती है ? यह तो कोई सुख की उपभोक्ता ही हो सकती है । इस विपुल वैभव मे श्वास-प्रश्वास लेने वाले प्राणी इतने दयामय कैसे हो सकते है ? देवता सदृश लोकप्रियता कैसे प्राप्त कर सकते है ? वैभव और देवत्व ! दोनो विपरीत प्रतिक्रियाए !

उसने बरवडी को श्रद्धापूर्वक प्रणाम किया ।

बरवडी अपने बैठकखाने मे मखमली गद्दे पर आसीन थी । उसके सम्

पर ज्ञान की गभीरता स्पष्ट लक्षित हो रही थी। नेत्रो में सागर सी गह-राई और नीलापन था। मुख चौडा और ललाट पर गहरी तीन रेखाए। कही-कही श्वेत प्रभाव दिखलाते हुए कुन्तल। श्वेत वस्त्र और प्रखर प्रकाश। एक अद्भुत वातावरण।

किसान परिवार के स्वामी ने चरण-स्पर्श करके वरवडी से निवेदन किया "माता-श्री, आप चित्तौड के राणा हम्मीर हैं। द्वारकाधीश के दर्शन करने जा रहे हैं।"

ज्योतिष शास्त्र की प्रकाड मनीषी एव शास्त्रज्ञाता वरवडी ने एक वार तीखी दृष्टि से हम्मीर के आनन को देखा, फिर उसे वैठने का सकेत किया। हम्मीर वैठ गए। उसने अपने कमरवन्द को कुछ ढीला किया। वैठकखाने की दीवारों की ओर दृष्टिपात करके जव उसने पुन वरवडी पर दृष्टि डाली, तव भी वरवडी हम्मीर को उसी पैनी दृष्टि से देख रही थी।

वरवडी ने पल भर नेत्र मूंद कर कहा, "आपकी आँखो में उन भावो के दर्शन नही हो रहे हैं जो एक भक्त मे पाए जाते हैं। आपको देखकर मुझे लगा कि वहां की अव्यवस्था से आकुल होकर आप जन्मभूमि से भाग आए हैं। क्षत्रिय-धर्म की अवज्ञा आप जैसे पराक्रमी पुरुषो द्वारा नही होनी चाहिए।"

हम्मीर की दृष्टि सकोच के मारे झुक गई। उसके हृदय मे ग्लानि का झझा उठा। उसके चेहरे पर स्वेदकण उभर आए।

वरवडी ने गहरा मौन धारण कर लिया। हम्मीर ने एक वार कुछ कहना चाहा पर वह नही वोल सका। शब्द कण्ठ मे ही लटक गए।

फिर भी हम्मीर ने साहस करके कहा, "आपको भ्राति "

वीच मे ही वरवडी ने टोका, "मुझे भ्राति नही हो सकती। मनुष्य की आकृति से उसके अन्तस के भावो को समझने मे मैं सिद्धहस्त हूँ। मुझे कोई भी धोखा नही दे सकता।"

हम्मीर नितान्त जड हो गया।

वरवडी बोली, "आपके आत्मलोक मे जो अवशता और अवसाद है

उसे मैं अपने दिव्य-चक्षुओं से स्पष्ट देख रही हूं। मैं यह भी कह सकती हूं कि सम्राट बनने की महान् लालसा लिए आप जब शत्रु से अत्यन्त प्रताड़ित हो गए तब आप में ऐसा पलायन जागा।"

"हां माता श्री! मैं भलीभाँति अब सोच-विचार भी नहीं सकता हूँ। कभी कभी ऐसी इच्छा होती है कि अब सब छोड़ दूं।"

"उससे क्या होगा?"

हम्मीर आवेग में लाल हो उठा। वह बरवड़ी को क्या उत्तर दे। सूर्यवंशीय बप्पारावल का वंशज मेवाड़ को असहाय अवस्था में इस तरह त्याग कर आना, हेय कृत्य था? वह इस विदुषी नारी को यही उत्तर दे, "तब रार ही मिट जाएगी। स्वप्न ही समाप्त हो जाएगा लिप्सा का ही अंत हो जाएगा?" लेकिन वह चुप रहा—एकदम।

बरवड़ी ने तनिक म्लान-मुख से किन्तु प्रखर स्वर में कहा, "बोलिए न उससे क्या होगा? पूर्वजों के प्रयोजन और आयोजनों की समाप्ति हो जाएगी। मेवाड़ के बलिदानों पर कालिख पुत जाएगी।"

हम्मीर के मुख पर ग्लानि चमक उठी। वह वेदना से मर्माहत होकर बोला, "पर मैं असफल हो गया। शत्रु की अटूट शक्ति के समक्ष मेरा हठ-जनित शौर्य सर्वथा हताश हो गया।"

"राणाजी, आप निराश हो उठे हैं। युग-युग से जय-पराजय के खेल इस आंगन में होते आए हैं। कभी कोई और कभी कोई वीरत्व के दंभ में विजयोन्मद हो झूमा है। इसका तात्पर्य यह नहीं है कि मनुष्य 'नाश' के परिणाम से परिचित होकर कर्म को छोड़ दे। कर्महीन प्राणी का जीवन अर्थहीन होता है। आदर्श और व्यवहार दो हैं। आदर्श उन प्राणियों के लिए अति उपयुक्त होता है जो जीवन से नितान्त उदास हो जाते हैं और व्यवहार हमारा प्रथम कर्तव्य है। हम उससे वंचित होकर स्वयं के प्रति अन्याय ही नहीं, आत्मवंचना भी करेंगे। अब आपको कर्तव्य को पूर्ण करने के लिए अपनी कमर को कस लेना चाहिए।"

दीर्घ आलाप के पश्चात् हम्मीर को तनिक ढाढ़स हुआ। पर अब

ृदय की वास्तविकता को प्रकट करने लगा। बोला, "मेरे हठ ने व्यर्थ ही सग्राम करके अपने सरदारो एव सामतो के प्राण गँवाए है।"

"वलिदान व्यर्थ नही जाता। आपका हठ ठहरिए।" कहकर रवडी न हम्मीर का हाथ अपने हाथ मे लिया। हस्तरेखाओ का अल्प-ाल गभीर अध्ययन करके उसने कहा, "हठ की मात्रा आवश्यकता से धिक है। कभी कभी विवेक का भी उल्लघन कर देती है। यह उचित ही। फिर भी सूर्य अत्यन्त तेजस्वी है। भाग्य-रेखा ओह ! आप नश्चित सफल होगे।"

हम्मीर अपने नेत्रो की पुतलियो को घुमाकर श्रद्धापूर्वक वरवडी की ोर देखकर मधुरतम शब्दो मे वोला, "मैं अन्तरतम से आपकी कला मे वश्वास रखता हूँ। कर्म विधान समझिए कि मेरा समस्त जीवन नाना घर्षो एव आघातो मे ही व्यतीत हुआ। शैशव मे लेकर यौवन तक जीवन विभिन्न मार्गो का दशन ने मुझे ज्ञान-ज्योति एव कार्य-निपुणता ही दान की पर इतना होते हुए भी आप मे अपनी एक शका का समाधान ाहता हूँ, वह यह है कि क्या मैं चित्तौड का पुनर्ोद्धार करने मे सफल हो ाऊँगा ? मैं अपने पूर्वजो की प्रतिष्ठा को पुन प्रतिष्ठापित कर पाऊँगा ?"

"इसका उत्तर मैं आपको कल दूंगी।"

× × ×

हम्मीर नियत समय वरवडी के घर पहुँच गया। उत्तर सुनने के र्व उसका मन आकुल व्याकुल हो रहा था।

वरवडी तत्काल कुश के आसन पर वैठी थी। प्रभु की अर्चना-वन्दना तन्मय थी। लघु मन्दिर मे धूप की सौरभ फैल कर हवा को सुगन्धित र रही थी। हम्मीर ने उसके आराध्य 'देवी' को साष्टाग प्रणाम किया ौर शांत चित्त होकर वैठ गया।

वरवडी अर्चना-वन्दना से निवृत होकर बोली "राणा जी, आप मेवाड ा उद्धार अवश्य करेंगे ही। आप मेवाड के उन राणाओ मे होंगे जिन कीर्ति-ध्वज युगान्तो तक मानव-मानस-पटलो पर लहरायेंगे। आपको

तुरन्त मेवाड़ प्रस्थान कर देना चाहिए।"

"लेकिन ऐसी स्थिति में आकर पुन: जाना [illegible]।"

"लज्जा आती है?"

"स्वाभाविक है, मात श्री!"

"राजनीति में मनुष्य को अपने मन को एक अन्य साँचे में ढालना होता है। वह साँचा साधारण प्राणियों से पृथक होता है। तभी वह मान-अपमान, सच-झूठ, उत्थान-पतन, प्रेम और द्वेष सभी पर भिन्न प्रकार से सोचता है। एक सेनानी का देश से भागकर आना और पुन: चले जाना साधारण बात है। राणाजी, आपकी प्रत्येक गतिविधि एक रहस्य की ओतप्रोत सी प्रतीत होनी चाहिए और आपका कथन एक रहस्य का अभेद आवर्तन ताकि लोग यही समझें, आप जो कर रहे हैं, अपने चित्तौड़ के लिए अपनी जन्मभूमि के लिए।"

हम्मीर ने देखा—बरवड़ी के मुख पर नारी की समस्त महानताओं का आलोक दमक रहा है। यह नारी वस्तुत: एक अप्रतिम और विराट, आगत और अनागत को जानने वाली अलौकिक सर्जना है।

हम्मीर ने कहा, "माँ! कुछ और पथ निर्देश करो।"

बरवड़ी ने एक बार मंदिर से बाहर निकल कर अनन्त आकाश की ओर देखा। उसके चेहरे पर महत्त्व की अपूर्व आभा दीप्त हो उठी। नारी का सम्पूर्ण उत्सर्ग, संवेदना और तेज उसकी दृष्टि में तैर आया। वह हम्मीर के सन्निकट आकर ममता भरे स्वर में बोली, 'वत्स! पथ निर्देश की क्षमता मुझ में नहीं है। मैं अपरिसीम अनुराग के साथ आशीर्वाद दे सकती हूँ। नारी का लोक समाज में पर सूर्य के बराबर है। उस समाज में शील पालन लोक में एक ही धर्म है, वह है कल्याण एक ही प्रेम है वह प्रेम है सङ्कटमोचन, दुखहर्ता! तुम [illegible] लोक के अधिष्ठात्री माँ का आशीर्वाद लो, देश और मुक्ति को प्राप्त करो।

क्षणिक मात्र के लिए गहरा सन्नाटा छा गया।

बरवड़ी मन्त्रमुग्ध सी [illegible] अप्रतिम [illegible] रही थी और हम्मीर [illegible]

छोटा बालक।

भावावेश से जब वे दोनो वस्तुजगत मे आए तो बरबडी तनिक साव-धान होकर बोली, "राणाजी, इतना निवेदन भर है कि आप चित्तौड लौट जाइए। मेरी विद्या कहती है कि वहाँ की स्थिति आपको अपने प्रतिकूल दीखती हुई भी परिणाम 'अनुकूल' ही देगी। आपको विवाह का निमन्त्रण आएगा। आप उसे सहर्ष स्वीकार कर लें। विरोध-प्रतिरोध की चिंता किए बिना ही आप उस लडकी को घर लाएँ, उसका आगमन आपकी विजय का आधार होगा।"

"लेकिन ऐसी स्थिति मे मेरे पास कुछ तो शक्ति होनी ही चाहिए। उसके बिना मेरा लौटना मुझे अत्यन्त पीडाजनक लगेगा।"

बरबडी उत्साह भरे स्वर मे बोली, "समय आने पर मुझे सूचना देना मैं तुम्हें पाँच सौ घोडो की सहायता दूंगी और साथ ही मेरा वीर गायक पुत्र 'बारू' भी तुम्हारे देश आएगा।"

हम्मीर ने बरबडी के न चाहते हुए भी चरण-स्पर्श कर लिए। उसका अन्तरतम अपनी समस्त श्रद्धा और स्नेह उस साहसी एवं धैर्य-शील नारी के आँचल मे भर देना चाहता था।

बरबडी विलगित नेत्रो के साथ कहा, "चिरायु हो।"

११

अजयसिंह का असहयोग आन्दोलन सफल रहा। अरावली के दुर्गम श्रेणियो के मध्य रहकर उन्होंने जो नूतन संघर्ष का श्रीगणेश किया था, वह अत्यन्त सफलता की ओर अग्रसर हो रहा था। आततायी मालदेव यवनो को परमभक्ति करके भी उनसे सहायता प्राप्त नहीं कर सका। महमूद तुगलक दूरदर्शी होकर भी अपनी वाचाल एवं अस्थिर प्रकृति के कारण अच्छा शासक नहीं बन पाया। निदान

उसने मालदेव को ही यवन सेनाधिकारियो एव फौज का खर्चा चलाने का आदेश दे दिया। इधर मेवाडियो द्वारा अहिंसा का संग्राम जारी था। अतः मालदेव इससे चिन्तित हो उठा।

वह प्राय अपने पुत्र जैसा (जयसिंह) से बेचैन होकर कहा करता था, "मेरी समझ मे नही आता कि मुझे क्या करना चाहिए। मेवाडियो की इस नीति के समक्ष मैं शक्तिहीन हो गया हूँ। जिसे देखो केवल मरने को तत्पर है। हाट ढग से नही खुलती। किसान लगान नही देते। जो प्रदेश खाली होता है उसका उपयोगी सामान ये लोग नष्ट-भ्रष्ट कर देते हैं। कहते हैं, हम अहिंसा का युद्ध कर रहे हैं। अहिंसा परमो धर्म! यह सब क्या है?"

जैसा पिता की उद्विग्नता और विषाद को समझ गया। रजत निर्मल आसन की पीठिका का सम्बल लेकर वह बोला, "ये हमे दुर्बल और परेशान कर रहे हैं महाराज! चित्तौड प्राय खाली हो गया है। अब आप सेना को हुक्म दीजिए कि वह इनको गाजर-मूली की तरह काट कर फेंक दे।"

मालदेव हँसकर बोला — नही नही! मैं नृशंस अवश्य हूँ पर ऐसा घोर अनर्थ नही कर सकता। मैं हिन्दू हूँ और एक हिन्दू ने निर्दोष प्रजा पर शस्त्र नही उठाया। हमारे सैनिक उन्हे सताते हैं और वे प्रतिरोध किए बिना हमारे अत्याचार सहते हैं। हमारे प्रत्येक प्रहार पर कहते हैं — एक और मारो! हमारे [illegible] पूछते हैं — तुम [illegible] नही, [illegible] नही। हमारे आदमी कहते हैं — कामचोरो काम करो, वे [illegible] नही। मैं समझता हूँ कि इस नीति का विरोध नीति से ही होना चाहिए। विद्रोह का दमन शस्त्र से निश्चित किए सहारे [illegible] [illegible] इस नीति की समाप्ति आवश्यक [illegible]। मालदेव [illegible] बोला [illegible]। एक बार [illegible] स्वामी का [illegible]। गढ़-स्वामी का मन [illegible] कि यदि वह [illegible] एक सौ [illegible] के सिवाय नही देगा

। मैं उसे जान से मार दूगा । उसने प्रार्थना भरे स्वर मे कहा, "आप लवान हैं, जो आप करना चाहेंगे, कर लीजिये पर मैं आपको विश्वास दलाता हूँ कि मैं बहुत दरिद्र हूँ। किसी भी तरह अपनी प्रतिष्ठा को नाए हुए हूँ।" मुझे विश्वास नही हुआ। मैंने उसे भाँति-भाँति से आरणाए दी। पहले-पहले वह करुरणा स्वर मे चीखता-चिल्लाता रहा, मुझसे दया की भीख मागता रहा। जब वह मेरे अत्याचार से थक गया तब उसने दया की भीख नही मागी। वह अत्यन्त धैर्यशील और अगाध शांति धारण करके बैठ गया और मेरे अत्याचार सहता रहा।

उसकी गतिविधि मे बहुत से परिवर्तन आ गए।

मेरे साथी व मैं स्वय जब-जब उसे यातना देते थे तब तब वह पागलों की भाँति चीख कर कहता था कि मुझे और मारो ? वह अपनी साधा-रण स्थिति को खो बैठा था और यह सब लोग इसी स्थिति को मानकर चलते हैं। तब मैंने घर के स्वामी को दूसरी नीति से पराजित किया। उससे मित्रता गाँठी। अपना कहा और एक दिन उसके हृदय का सब कुछ जान लिया कि उसकी सम्पत्ति कहाँ पडी है। अब मुझे नई नीति का ही सहारा लेना होगा। अत्याचार सहने को जो कटिबद्ध हो जाए, उसे हम कुछ भी हानि नही पहुँचा सकते। उसका हम कुछ भी नही बिगाड सकते।

जेसा ने नया प्रश्न किया "फिर ?"

"मेवाडवासी चित्तौड के उद्धार के लिए घोर असहयोग कर रहे है और यह भी सत्य है कि असहयोग के कारण हमारी सत्ता के पाँव भी हिल उठे हैं।"

"तब ?"

"तब मैंने इसके लिए नई युक्ति सोची है।"

"वह क्या ?"

"मै पुन अपनी जन्मभूमि जालोर को सँभालूंगा और तुम चित्तौड के गढ को सँभालना। मेरा यहां सम्पूर्णरूप से रहना जालोर के लिए

भी अच्छा नही है। बिना घरवालो के घरो मे चूहे भी शासन जमा लेते हैं। अब जालोर की व्यवस्था के लिए मुझे वहां चले जाना चाहिए तथा वहाँ से मैं कामदार मौजीरामजी के साथ हर माह रुपया भेजता रहूँगा। और शीघ्र ही एक ऐसी कूटनीतिज्ञ चाल खेलूंगा जिससे चित्तौड के भाग्य विधाता का सिर धरती को चूमता नजर आएगा।"

जैसा शात गम्भीर था। कुछ क्षण मौन रहकर वह बोला, "वह चाल क्या होगी ?"

"यह मैं फिर बताऊंगा।"

तत्पश्चात मालदेव अपने बडे पुत्र जैसा को चित्तौड का शासन भार सौंप कर जालोर चला गया। जैसा मालदेव का विलक्षण प्रतिभा सम्पन्न पुत्र और योद्धा भी था।

मालदेव की यह दूरदर्शिता लाभप्रद और हानिप्रद दोनो रही। मालदेव जालोर पहुंचकर अपने किसानो से वसूली करने लगा और कुछ ही दिनो मे उसने अपनी स्थिति सुदृढ बना ली।

१२

प्रतिहारी ने गाकर निवेदन किया, 'महाराज की जय, सरदार पवन-सी आपके दरबार मे हाजिर होना चाहते है।"

— हाजिर किया जाय।"

सूर्य क्षितिज की मृदुल बाहो से मुक्त होकर गगन-आंगन की ओर अग्रसित हो रहा था। पवन-रथ पर आरूढ होकर एक मेघ खंड ने किशोरावस्था की भांति सूर्य के समीप आया और [illegible] कर नाना

उनके युगल नेत्रो मे तीव्र जिज्ञासा और उत्कठा थी।

पवनसी ने प्रणाम करके निवेदन किया, "सुना है, आपकी तवियत ठीक नही है। कैसा प्रतीत होता है ?"

"कुछ-कुछ हृदय मे घुटन-सी रहती है। पर वेटा इसकी चिंता को छोडो।" चाचा की आँखो मे स्नेह स्निग्ध और तरल वात्सल्य की दीप्ति दीप्त हो उठी। स्वर मे करुणा का सम्पूर्ण प्रभाव था, 'अपनी जन्मभूमि का क्या हाल चाल है। मेरा सग्राम, मेरी नीति कुछ सफल हुई। मैं सदा यह सुनने के लिए व्याकुल रहता हूँ कि कोई यह कहे कि चित्तौड हमारे अधिकार मे आ गया।"

"आपका स्वप्न पूर्ण होगा। आपकी नीति सफल सिद्ध हो रही है।" पवनसी ने उन्हे आश्वासन दिया।

"मुझे विश्वास था कि एक दिन यह अहिसा का युद्ध अवश्य सफल होगा। और जब कभी मानव जाति ने हिसा का प्रतिकार अहिसा से किया, उस दिन हिसक दानवो का उन्माद पगु हो जाएगा। विना विरोध के सघर्ष जोर नही पकड सकता।"

"आप ठीक कह रहे हैं। राजा मालदेव को जालोर गए एक माह हो रहा है। उसके अपने गुप्त सिपाही घुडसवारो, वनजारे एव व्यापारी राणा जी को ढूढ रहे हैं, पर राणा जी म.जता मे नही मिल सकते।"

"उसे अव आ जाना चाहिए। पवनसी कभी-कभी मुझे लगता है कि मैं अव हम्मीर का मुंह नही देख सकूंगा।"

"ऐसा अशुभ मत वोलिए।"

"शुभ-अशुभ का प्रश्न नही। यह अन्तर की वाणी है। हृदय वार-वार कहता है कि वस अव अपनी यह महायात्रा समाप्त कर दे।"

तभी उसके गुप्त घुडसवार ने आकर सूचना दी कि राणा हम्मीर पधार रहे है।

चाचा के अग-प्रत्यग मे उल्लास की उर्मियाँ नृत्य कर उठीं। युगल नेत्र प्रसन्नता के मारे नीर से भर आए। प्रसन्नता की अतिरेक मे वे वोले,

नही। महायात्रा के अनन्त पथ पर चलने वाले यात्री के लिए अब उसकी अन्तिम लालसा की पूर्ति का आश्वासन चाहिए। हम्मीर! चित्तौड की मुक्ति का स्वप्न लिए आज मैं जा रहा हूँ।"

हम्मीर ने तुरन्त कहा, "जब तक चित्तौड को मुक्त नही करूंगा तब तक इस खडग को म्यान मे नही डालूंगा।"

चाचा के मुख पर ओज के साथ करुणा के भाव भी आए।

'मैं तुम लोगो को उपदेश देना नही चाहता। धर्म के पण्डित की भाँति धार्मिक शब्दावली मे मैं बोल कर व्यर्थ ही आपके समय की हत्या नही करना चाहता। फिर भी एक प्रार्थना है, बहुत छोटी विनती कि हिंसा-हीन युद्ध भी तनिक सफलता की सिद्धि दे सकता है। मैं तुम्हे सघर्ष और विग्रह से मुख मोडने के लिए नही कहता, क्योकि शत्रु अहिंसा के मर्म को किंचित भी नही समझते, अत मैं तुम लोगो को इसके लिए वचन-बद्ध नही करना चाहता।"

हम्मीर मृत्यु शय्या पर लेटे अश्रुप्लावित चाचा के चेहरे को देखकर अधीर हो उठा। चाचा का कथन उसके लिए उपयोगी हो या अनुपयोगी पर उसे सम्पू ' रूप से उसका पालन करना चाहिए। सिसोदिया वश का लाडला अपने हितैषी के लिए बडे से बडा त्याग करता आया है।

उसने चाचा के चरणो पर अपनी दृष्टि टिका कर कहा, "यदि आप चाहे तो मैं हिंसा को त्याग कर सदा के लिए अहिंसक हो जाऊँ।"

"नही, ऐसा मैं नही चाहता। मेरे हृदय की सच्ची वाणी से भी एक सत्य और बडा है—वह है स्वतन्त्रता। अहिंसा मेरे अन्तस का सबसे बडा धर्म और कर्म हो सकता है पर तुम लोगो का सबसे महत्वपूर्ण धर्म है—स्वतन्त्रता! चित्तौड का पुनोद्धार।"

पवनसी ने बीच मे ही कहा, "राणा जी, काका सा के असहयोग आन्दोलन ने मालदेव को चित्तौड छोडने के लिए विवश कर दिया।"

"अच्छा!" हम्मीर ने आश्चर्य से कहा।

"और उसका युवराज जयसिंह (जेसा) भी परेशान हो चुका है।"

"तब हम इस आन्दोलन को और बढ़ावा देना चाहिए ।"

अनगसिंह बीच में ही बोल पड़ा, "मेरा ऐसा विचार है कि आप अब सभी वीरों को चूड़ियाँ पहना कर ही दम लेंगे ।"

हम्मीर ने अनगसिंह को डाँट दिया ।

चाचा को जोर की खाँसी आई । ऐसी भयानक खाँसी कि उनका कलेजा मुँह को आने लगे । नेत्र पानी से भर आए और श्वास उखड़ने लगी ।

वैद्य जी आ गए थे । उन्होंने एक घासा (मिश्रण) दिया । चाचा के नेत्रों में थोड़ी ही देर में सात्वना की झलक दीखी । हम्मीर का मुख उदास हो गया था । वैद्य जी ने औषधि को प्रभावहीन देखकर उन्हें 'धम्वर' की एक मात्रा दी । चाचा में शक्ति का सचार हुआ ।

चाचा ने स्नेह से हम्मीर के सिर पर हाथ फेरा । उसके कुन्तलों में अपनी अगुलियाँ उलझा कर वे एक-एक शब्द पर जोर देकर कहने लगे, "युद्ध पिपासुओं का सत्य ही हिसा है । कर्म ही हिसा करना है । तात्पर्य हीन युद्ध का विनाश करके किसी की शाति और सुख में बाधा पहुचाना मानव-धर्म के विरुद्ध है । मैं व्यर्थ ही हिसा के विरुद्ध हू । मैं अन्यों के अधिकारों पर कुठाराघात करने वालों को हिसक मानता हू । मैं बाप का दड बेटे को देना न्यायोचित नही मानता । बेटा ! प्रार्थना है कि तुम व्यर्थ की हिसा नहीं करोगे ।"

हम्मीर ने आश्वासन दिया, वह ऐसा नहीं करेगा ।

अनगसिंह की भृकुटियाँ तन गईं । उसने मन ही मन सोचा कि यदि राणा जी ने सच्चे मन में यह वचन दिया है तो मैं कह सकता हूँ कि इनकी मति मारी गई है । हिसा के बिना कभी कोई अधिकार नहीं मिलता । रोने से मुक्ति और भीख से राज्य मिला करते हैं क्या ? छि: छि: !

चाचा की [illegible] ने थोड़ी देर के लिए उनकी आशा पर पर्दा डाल दिया । हम्मीर ने वैद्य जी को एक बार और औषधि देने को कहा ।

वैद्य जी ने निराशा से कहा, "नाडी । दान-पुण्य कराइए।"

पर्वतमालाओ के पीछे से गभीर मृत्यु-गीत सहस्रो की आर्तनाद सा ध्वनित प्रतिध्वनित हो उठा।

हम्मीर अपने चाचा के चरण-स्पर्श करके रो उठा।

१३

चाचा की मृत्यु के पश्चात हम्मीर बरवडी की भविष्यवाणी के सत्य होने की प्रतीक्षा करने लगा। मेवाड मे अशांति का साम्राज्य छाया हुआ था फिर भी परिस्थिति उसके अनुकूल ही हुई। राजा मालदेव का प्रस्थान और मुहम्मद तुगलक की अव्यवस्था ने हम्मीर को सगठित होने का स्वर्ण अवसर दे दिया।

इसी बीच एक नवीन घटना हुई।

राजा मालदेव ने अपने विश्वासी पात्र मेहता जूहण और पुरोहित जयमाल के साथ अपनी पुत्री के विवाह का नारियल हम्मीर को भेजा।

दरबार लगा था। मन्त्रिगण व सामन्त सरदार सभी उपस्थित थे।

दोनो व्यक्तियो ने जैसे ही इसकी घोषणा की वैसे ही सारा दरबार सन्नाटे मे आ गया। सब एक दूसरे को चकित-विस्मित होकर देखने लगे।

हम्मीर ने निशक होकर कहा, "पुरोहित जी, जननी-जन्मभूमि पर अधिकार करने वाले शत्रु की ओर से यह प्रस्ताव पाकर हमे सशय और भय दोनो हो रहे हैं ? इस पर तुरन्त विश्वास करने को बनता ही नही।"

पुरोहित जी ने कहा, "ब्राह्मण अपने राजा की आज्ञा का पालन करना जानता है। इस पर विशेष रूप से आपको मेहता जूहण जी ही बता सकते हैं।"

जूहण ने प्रणाम करके अपनी तलवार म्यान से निकाली। बडी श्रद्धा के साथ उसने तलवार को मस्तक के लगाई और राणा जी के चरणो मे

उसे रखकर कहा, "युवा वेटी रावरग के घर मे भी नहीं रह सकी फिर राजा मालदेव की क्या बिसात है ?"

"लेकिन ?"

"वीर पुरुप सदा वीरो से ही हाथ मिलना चाहते है। यह गठबन्धन भविष्य के मधुर सबधो का प्रतीक है। हमारे महाराज का कहना है कि नारियल आपको स्वीकार करना ही है। कुछ भी हो राणा जी, राजपूत वीर ने कभी किसी लडकी का नारियल नही लौटाया है।"

"राजपूत किसी लडकी का नारियल नही लौटाएगा।" हम्मीर ने उसकी बात की पुष्टि की।

कुछ सरदार एक साथ कह उठे, "यह क्या ?"

हम्मीर ने हाथ के सकेत से सबको शात किया। उसे बरबडी की भविष्यवाणी स्मरण हो आई। वह विश्वास से भर उठा। उसने कहा, हमारा शत्रु 'राजा मालदेव है' पर एक बेटी का 'पिता मालदेव' नही। अत मेहता जी हम नारियल स्वीकार करते है, किंतु हमारी भी एक शर्त है कि हम वहा अधिक दिन नही ठहरेगे।"

"महाराणा की जय ! पुरोहित ने कहा।

अनगसिंह जोर से चिल्लाया 'राणा जी ने नितान्त उचित कदम उठाया है।"

पवनसी ने पुकार कर कहा, यह षड्यन्त्र है। घातक षड्यन्त्र !'

मेरा ने पवनसी के कथन का समर्थन किया, 'राणा जी, इस नारियल को स्वीकार करके गलती कर रहे है। हमारी सैन्य शक्ति अभी नहीं के बराबर है। ऐसी दशा मे [illegible]।'

हम्मीर के [illegible] मे [illegible] के शब्द गूज उठे, 'विवाह परिणाम की चिन्ता किए बिना ही आप इस नारियल को स्वीकार कर लेना, उसका आगमन आपकी विजय का आधार होगा। वह आपके लिए बडी शुभ होगी।'

[illegible] ! हम्मीर युद्ध के लिए नहीं, विवाह के लिए जा रहा है। शुभ

सेना और शक्ति की आवश्यकता नही। मुझे यह विवाह करना है। जो सदेह था, उसको मेहता जी की बात ने निर्मूल कर दिया कि यह सबध भविष्य के मधुर सम्बन्धो का प्रतीक होगा।"

हम्मीर के प्रखर मुख को देखकर सभी मौन हो गए। उसके ओजस्वी और प्रभावशाली व्यक्तित्व के समक्ष किसी ने अधिक विरोध नही किया।

पुरोहित और मेहता के लौट जाने पर हम्मीर ने अपने विश्वस्त आदमियो को समझाया, "मैं यह भली भाँति समझता हूँ कि यह एक षड-यत्र है। राजा मालदेव की बेटी का नारियल स्वीकार करने का तात्पर्य स्पष्ट है कि हम अपने आपको एक भीषण सकट मे डाल रहे हैं। वह षड-यत्र महाभारत के चक्रव्यूह के षडयत्र से कम नही होगा। अभिमन्यु की भाँति हम पर आक्रमण हो सकते है। किंतु हम इतने अबोध और नादान नही है जितना अभिमन्यु था। वह चक्रव्यूह की प्रवेश कला का ज्ञाता था, उसको चक्रव्यूह भेदन करना नहीं आता था। हम मालदेव की प्रत्येक चाल को विफल कर देंगे। हमारा हर कदम उसकी विफलता का घोष करेगा।"

"पर अभी .।" मेरा ने कुछ कहना चाहा।

हम्मीर उसके अधूरे वाक्य का मर्म जान गया। मेरा के चेहरे पर अपनी दृष्टि गाडकर वह बोला, "अभी हमारे पास युद्ध सामग्री का अभाव है। मैं भी इसे स्वीकार करता हूँ। लेकिन केवल जन-शक्ति ही युद्ध का विजित शस्त्र नही है। उसके लिए विवेक भी चाहिए। कूटनीति भी चाहिये। इसके लिए मैं आपसे निवेदन करना चाहूँगा कि खोड गाँव की देवी माँ बरवडी का बेटा बारू शीघ्र ही पाँच सौ घोडे लेकर हमारे पास आ रहा है। छोटी सी लडाई लडने के लिए हमारे पास हथि-यार भी पर्याप्त है। फिर नीति ? काका सा के अन्तिम वाक्य को मैं कभी नही भूल सकता। व्यर्थ की हिंसा से मैं उनकी आत्मा को दुख नही पहुँचा सकता। नीति का विरोध नीति से ही होना चाहिए।"

अनगसिंह ने विनीत होकर कहा, "यह युद्ध से घबराते हैं। यह

चाहते हैं कि जीवन सुख और सतोष से व्यतीत हो जाए, चाहे परतन्त्रता भले ही हो। इस धरती का प्रतापी व वीर शिरोमणि का बेटा अब कापुरुष हो रहा है। युद्ध विमुख हो रहा है। परतन्त्रता मे आनन्द और मृत्यु मे सतोष के दर्शन कर रहा है।"

अनगसिंह की उत्तेजनामयी भर्त्सना स मेरा और पवनसी की भुजाएँ फड़क उठी। पवनसी अनगसिह के समीप आकर बोला, "ठाकुर! निष्प्रयोजन ही किसी के पौरुष को ललकारने की चेष्टा अपराध है। किसी का वीरत्व इन शब्दो को सुनने का आदी नही होता है। अधिक इच्छा हो तो दो-दो हाथ कर सकते हो।"

हम्मीर ने कहा, "तुम भी आपस मे सघर्ष करने की इच्छा रखते हो, आप लोगो का खून उबल रहा है तब यही श्रेष्ठ रहेगा कि शत्रु से एक युद्ध लड लिया जाय किन्तु काका सा की नीति स।"

पवनसी ने अधिकारपूर्ण शब्दो मे कहा, "मैं अधिक सोचता विचारता नही हू। केवल राणा जी की आज्ञा चाहता हू। आपकी आज्ञा से सर्वोपरि मै किसी को नही मानता। किन्तु अनगसिह को आप कह दीजिये कि वह वीरो के पौरुष को ललकारे नही अन्यथा आपसी खराखरावी से अहित के अतिरिक्त कुछ नही होगा।"

हम्मीर न पवनसी को ठण्डा किया और अनगसिह को समझाया।

इसके पश्चात हम्मीर विवाहित नारियल को स्वीकार करके क्या करना चाहता है इस पर प्रकाश डालने लगा। उसने कहा, "मैने इस नारियल को इसलिए स्वीकार किया कि देवी मा बरवडी ने मुझे ऐसा करने का आदेश दिया है। उसने इसके साथ यह भी कहा है कि उस वधू का आगमन ही हमारी चित्तौड़ विजय का आधार होगा। ऐसी स्थिति मे इस प्रस्ताव को अस्वीकार करना मेरे वश का नही। मै देवी मा के वचनो को नही टाल सकता। दूसरी बात यह है कि हम क्या इतने बुद्ध है कि इतना सम्मान हुआ के बाद भी यह बाजी हार जायग, पाच सौ घोडे आ रहे है। पाच सौ और क्षत्रिय आयोजन मे हमारे साथ चलेग।

हमे बराबर यह प्रदर्शित करना है कि हम एकाकी है और हमारे साथ कुछ भी शक्ति नही है। हमारी सारी सेना हमारे एक सकेत पर जालोर मे हाहाकार और विप्लव उत्पन्न कर देगी।"

मेरा ने तुरन्त कहा, "एक द्यूत क्रीडा का दाव है।"

अनग ने कहा, "राणा जी के साथ हम रहेगे, हमारी तलवारो से बचकर उन पर आक्रमण करना अत्यन्त दुर्लभ है।"

एकात!

सब चले गए।

हम्मीर सोच रहा था, देवी माँ बरवडी के वचन सत्य हो रहे हैं। उसके पाँच सौ घोडे आ रहे हैं। अपने सरदारो एव सामन्तो को मैंने किसी भी तरह ऊँचा-नीचा करके तैयार कर लिया।

अप्रत्याशित उसको आभास हुआ कि विजय-श्री के चरण उसकी ओर द्रुतगति से अग्रसर हो रहे हैं। उसके चतुर्दिक उल्लास और प्रसन्नता का साम्राज्य सा छा गया है। उसका चित्तौड उसका अपना हो गया।

उसने भावाभिभूत होकर कहा, "जय एकलिगेश्वर! मुझ पर दया कर। मेरे सकट हरो। मैं आपका केवल चाकर-मात्र हूँ।"

शनै शनै घोर शून्यता छा गई।

१४

मागलिक मुहूर्त्त मे बारात जालोर पहुँची।

जालोर के किले की उदासी देखकर हम्मीर का मन आशका से भर आया। शहनाई के व्यथा भरे मधुर स्वर की जगह वहाँ गहरी उदासी थी। कही भी अपार प्रसन्नता व मगल-गीतो की गूँज नही थी। गढ के कुछ आन्तरिक हिस्सो पर वन्दनवार थे और अन्य सजावट अवश्य थी।

पवनसी मेरा और अनगसिह हम्मीर के साथ थे। छद्मरूप से

चारू के नेतृत्व मे पाँच सौ घोडो की सेना व पैदल वीर जालोर के गढ के चारो ओर फैल गए। उस तुरगवाहिनी की किले बन्दी इतनी सशक्त थी कि एक बार सुदृढ मे सुदृढ आक्रमण भी उसे छिन्न-भिन्न नही कर सकता था ।

पवनसी ने गढ मे प्रवेश करते ही गौर से गढ की स्थिति का पर्यवेक्षण किया। पर्यवेक्षण करने के साथ उसने अपने साथ आए बारातियो को सकेत किया। बराती तुरन्त सजग हो गए।

इसी बीच मालदेव को गुप्तचरो ने समाचार दिया कि राणा हम्मीर के साथ बडी सेना है जिसने गढ को घेर लिया है।

मालदेव के तन से फक निकल गई।

उसने अपने सेनापति को कहा, "हम्मीर के साथ किया गया छल हमारे लिए बडा घातक होगा, अब क्या किया जाय ?"

दीवान जीतसिंह ने कहा, 'षडयन्त्र एकदम असफल होगा और मेवाडी फिर दुगने उत्साह से आक्रमण करेंगे।"

"तब ?"

'अब मेरा ऐसा ख्याल है कि बाई सा का उनसे विवाह कर देना चाहिए। इसके अतिरिक्त उठाया गया हमारा कोई कदम, भयकर परिणाम मे टकरा सकता है।"

राजा मालदेव चिन्तित हो उठा। उसकी बुद्धि पगु हो गई। वह भागा भागा रनवासे मे गया। उसकी रानी साँस रोक कर परिणाम की प्रतीक्षा कर रही थी। यह एक बडा षडयन्त्र था जिसके द्वारा राणा हम्मीर की हत्या की जानी थी। मालदेव के सामन्तो एव सरदारो ने ही उसे यह सुझाया था कि इस प्रकार विवाह के लिए हम्मीर को बुलाकर उसको समाप्त कर दिया जाय, ताकि चित्तौड पर सदा के लिए मालदेव का शासन हो जाय।

मालदेव को इस बात का भी आभास मिल गया था कि हम्मीर की शक्ति अभी नितान्त क्षीण है और वह किसी भी तरह से हमारा सामना

नहीं कर सकता।

रानी ने जाते ही पूछा, "क्या हुआ राजा जी ?"

"गजब हो गया राणी जी, हम्मीर को हमारे पडयन्त्र का पता लग गया है। वह विशाल सेना के साथ हमारी वेटी को व्याहने आया है और उस सेना ने गढ को चारो ओर से घेर भी लिया है।" एक सांस में मालदेव यह सब कह गया।

"राम-राम ! अब क्या होगा ?"

"होगा हमारा विनाश।"

रानी विस्मय मे जड हो गई। कुछ देर वाद वोली, "मैं आपका विनाश नही होने दूंगी। आपको खोकर मैं वेटी को नहीं रखना चाहती। आप विवाह की सच्ची तैयारियाँ कीजिए।

"राणी, वह हमारा शत्रु है। शत्रु को वेटी देकर हम अपने को निर्वल वना रहे हैं।" मालदेव ने शब्दो पर जोर देकर कहा।

"कुछ भी हो, मैं हम्मीर को वेटी व्याहाऊँगी।"

देखते-देखते पडयन्त्र खुशियो के वाजे-गाजे मे वदल गया।

सारा गढ और नगर प्रसन्नताओ मे झूमने लगा।

इस प्रसन्नता के वातावरण मे एक व्यक्ति नितान्त गम्भीर मुद्रा मे अपने कक्ष मे बैठा था। उसकी आकृति से स्पष्ट लक्षित हो रहा था कि वह किसी गहरे विचार मे निमग्न है। तभी उसकी चक्षुओ की कुटिल भृकुटि नर्तन कर उठती थी। तभी वह दीर्घ निश्वास छोड देता था। उसकी दृष्टि अनत आकाश की ओर जमी हुई थी।

वह था, मौजीराम मेहता कामदार।

कूटनीतिज्ञ और विचारक।

मालदेव के राज्य की लौह-धुरी।

मौजीराम कामदार होते हुए भी अत्यन्त कुशाग्र एव चपल वुद्धि रखता था। विकट से विकट समस्याओ के समाधान वह चद क्षणो मे प्रस्तुत कर देता था। जव सारे गढवासी वास्तविक विवाह की तैयारी

मे लगे हुए थे तब मौजीराम इस विवाह के रोकने के उपाय को ढूंढने मे व्यस्त था। वह चाहता था कि हम्मीर अपनी ही इच्छा से यह विवाह करने से अस्वीकार करदे।

अप्रत्याशित वह उठा और सीधा मालदेव के पास गया।

"महाराज की जय!"

"मौजीराम इस सकट से हमे मुक्त कराओ।" मालदेव ने व्यग्रता से कहा।

"मैंने उपाय ढूंढ लिया है।

"सच ?"

"हां महाराज।"

'क्या ?" मालदेव की व्यग्रता उत्सुकता मे बदल गई।

मौजीराम ने राजा मालदेव के कानो मे कुछ कहा। मालदेव की आकृति गभीर हो गई। कुछ शान्ति-स्वर मे वह बोला, "यह असभव सभव कैसे होगा ?"

'आप राजकुमारी के अतिरिक्त सबको यह आज्ञा दे दें कि वह इस रहस्य को सर्वथा रहस्य रखे।'

'तब ?

'ऐसी युवती अमगलकारी होती है, वह चित्तौड की साम्राज्ञी नहीं हो सकती। वह सिसोदिया वश की कुल ललना नहीं हो सकती।"

'तब ?' अबोध बालक की भाति मालदेव इतना ही प्रश्न करता गया।

तब महाराज! हम्मीर विवाह करने को तत्पर नहीं होंगे और हमारा उद्देश्य पूरा हो जायगा।

मालदेव राजकुमारी के समीप गया। उसने उसे समझाया कि आपको [illegible] [illegible] [illegible] इतना ही कहना है कि (उन्होंने कान मे कुछ कहा) [illegible]।'

राजकुमारी [illegible] और उसने मुस्करा भर दिया।

दुल्हिन वेशभूषा मे अप्सरा सी प्रतीत हो रही थी। उसने अपनी अजनमय नयनो मे तीखा तीखा काजल डाल रखा था। रेशमी परिधान मे उसका उज्ज्वल और प्रखर यौवन अत्यन्त आकर्षक लग रहा था। उसने टांगो और पांवो मे सोने के गहने पहन रखे थे।

हम्मीर के कानो मे अनगसिंह ने आकर व्यग से कहा, "लेने को देने पड गए।"

हम्मीर ने गभीरता से सिर हिलाकर कहा, "मैंने कच्ची गोलियां नही खाई हैं अनग, जीवन के कर्म और उसकी गतिविधि को मैं खूब समझता हूं। बारू का क्या हाल-चाल है ?"

"उसका हाल-चाल ठीक है पर आपके साथ छल हुआ है।" और उसने हम्मीर के कानो मे कुछ कहा।

दुल्हिन लगन-मडप मे आने को तत्पर थी। पडित जी विवाह की वेदी पर प्रारभिक गणेश पूजन कर चुके थे।

हम्मीर एकाएक खडा हो गया। उनके मुख पर रोष चमक उठा।

तत्काल मौजीराम ने हम्मीर को एकात मे लिया। मौजीराम के चेहरे पर उद्विग्नता की रेखाएं दौड रही थी। वह बहुत हल्के पांव उठा रहा था। हम्मीर को नितान्त एकान्त मे ले जाकर उसने कहा, "राणाजी, अपराध क्षमा हो तो एक निवेदन करूं।"

"कीजिए कामदार जी।" हम्मीर जानकर अनजान बन गया।

'पहले वचन दीजिए कि मातो गुनाह माफ करेंगे।"

"मैंने आपसे कहा न, आप फरमाइए।"

"बात यह है कि ?" मौजीराम कहता-कहता फिर रुक गया।

"आप नि सकोच होकर कहिए, लीजिए मैंने वचन दिया।" हम्मीर ने अत्यन्त मधुरता से कहा। उसके स्वर मे सौहार्द का भाव था किंतु इन सभी बातो मे कृतिमता स्पष्ट झलक रही थी।

"आपका रोष प्रकृति प्रकोप से भी भयानक होता है, अत राणाजी मुझे भय लग रहा है, प्राण सूख रहे हैं।"

"आप व्यथ का अपने आपको क्यो पीडित कर रहे हैं।"

'राणाजी राणाजी ाजकुमारी मा वि ध वा है।"
अत्यन्त कठिनता मे कामदार ने यह वाक्या कहा।

आसमान पल भर के लिऐ सन्नाटे मे आ गया, ऐसा हम्मीर को प्रतीत हुआ—बादल जोर मे क्रन्दन कर उठे और धरती डांवाडोल हो उठी है।

हम्मीर आहत सैनिक सा तड़प कर रह गया, "क्या बकते हो?"

"ठीक कह रहा हू दयानिधान, राजकुमारी सा का विवाह बहुत ही बुटपनमे किसी भट्टवशीय राजकुमार से हुआ था, जो शीघ्र ही समर भूमि म काम आ गए। महाराज अपनी इस पुत्री से अतीव स्नह करते हैं अत पुत्री के स्नह ने उनसे यह अपराध करा दिया। आज आपके समक्ष यह रहस्य प्रकट करते हुए हमे सकोच हो रहा है।"

'यह बात आप ने पहले क्यो नही बताई?'

हमारा विचार तो बाद मे ही बताने का नही था,किंतु आपके गौरव के समक्ष बप्पारावल के पावन सिंहासन पर एक विधवा महारानी बनकर उस दूषित न करे, हमने यह भेद आपके समक्ष प्रकट कर दिया।'

"इस अपराध का दंड भी आप जानते है, मैं जालोर की इट से इट बजा दगा।"

मौजीराम शांत खडा रहा।

हम्मीर तनिक देर तक विचारता रहा। फिर उसने अनगसिंह और पवन सो को बुलाकर यह कहा।

पवनसी न तलवार निकालकर कहा, राणा जी आज्ञा है, इस पाप का दड असम्भव है।'

अनग न भी तलवार निकाल ली, मुझे तब स इस रहस्य का पता लगा है तब स म ा अनधिकारी दुराचारी राजा की गरदन धड स अलग

यह शब्द पवन वेग की भाँति यत्र-तत्र-सर्वत्र फैल गया।

तभी हम्मीर के कानो मे देवी माँ बरवडी के शब्द गूँज उठे, "विरोध प्रतिरोध की चिंता किए बिना ही आप उस लडकी को वर लाएँ, उसका आगमन ही आपकी विजय का आधार होगा।"

हम्मीर मे देवी माँ के वचनो को टालने का साहस न हुआ। वह बहुत देर तक अपने विचारो को अपने कठ मे दबाए खडा रहा फिर उसने पवस सी और अनग को कहा, "मैं विधवा से ही विवाह करूँगा।"

"यह क्या ?" सबके मुँह से ये दो शब्द निकले।

"हाँ, इस विवाह मे विरोध का उत्पन्न होना ही हमारे अकल्याण के लिए पर्याप्त है।"

'यह आप क्या कर रहे हैं ? मुझे युद्ध करने दो।" अनगसिंह ने कहा।

"मैं ठीक कर रहा हूँ। देवी माँ बरवडी का आदेश है कि कैसी भी लडकी क्यो न हो, उसे तुम्हे व्याहना है।"

युद्ध-पिपासु अनग इसे सहन नही कर सका। चित्तौड से पावन सिंहासन पर विधवा महाराणी बन कर आसीन हो, यह समस्त मेवाड भू पतियो के लिए अपमान की बात थी। वह नेत्रो मे ज्वाला सी भडका कर कर्कश-स्वर मे बोला, "ऐसा नही हो सकता राणाजी, पुण्य भूमि मेवाड के सिंहासन पर निष्कलक और निर्दोष आत्मा ही महाराणी बन कर उसकी शोभा बढा सकती है। जिस नारी की माँग का सिन्दूर परमात्मा द्वारा पोछ लिया गया है, उसे मनुष्य वह अधिकार देकर कभी सुख का भागी नही हो सकता।" उसने अपने स्वर को बदल दिया, "राणाजी, कौटुम्बिक मर्यादा को देखते हुए भी विधवा से विवाह कैसे कर सकते हैं। आपको इस दुराचारी को अपनी करनी का दड देने के लिए कटिबद्ध हो जाना चाहिए। मैं कहता हूँ कि युद्ध की घोषणा कर दीजिए।"

राणा का मुख क्षण भर के लिए पीत-वर्ण का हो गया। उस की दृढता पतझड के पीले पात की तरह हरहरा कर गिरने लगी। वह विधवा

को चित्तौड के सूयवशीय अप्पारावल के सिहासन पर कैसे विठाएगा ? यह सवथा पाप कम है और यह कृत उसे जन-जन मे अप्रियता दिलाएगा ।

एकाने भयभीत स्वर मे कहा,"विधवा चित्तौडके राज्यसिहासन ।"

"कैसे बैठ सकती है राणा जी ?" अनगसिह बीच मे ही बोला ।

"पवनसी तुम्हारा क्या विचार है ?" सहमते हुए हम्मीर ने पूछा ।

"विधवा विवाह हमारे धम के विरुद्ध है । ऐसा करने वाले राजपूत बडे निम्नकोटि की दृष्टि मे देखे जाते हैं । उन्हे नातरायत राजपूत कहते है । जो हमारे सदृश सम्मान-प्रतिष्ठा नही प्राप्त कर सकते, किन्तु मुझे केवल आपकी आज्ञा ही चाहिए ।'

हम्मीर का मन विपुल सताप के मध्य भवर मे फसी तरणी की तरह डोल रहा था । यह विवाह चित्तौड की मुक्ति का आधार होगा, फिर धम विरुद्ध कैसे ? लेकिन अनग का कहना भी अनुचित नही है कि इससे उसे अप्रियता प्राप्त हो सकती है ? फिर ? फिर ?

हम्मीर विचारो के उत्थान पतन के बीच मौन अटल खडा रहा । धीरे-धीरे उसका मन बदलने लगा । तभी देवी मा बरवडी के वचन उसे स्मरण हो उठे साथ ही उसके मन मे नया विचार आया कि यदि वह इस को अस्वीकार करता है तो बाप्प उसके विरोध मे न हो जाए क्योंकि बाप्प अपनी मा की वाणी को ब्रह्म वाक्य से कम महत्व नही देता ।

सारी स्थिति पर गभीरता से विचार कर हम्मीर ने निश्चय किया कि वह विवाह करेगा और उसने अपनी स्वीकृति अनग को सुना दी ।

अनग ने भृकुटि वक्र करके पूछा, "आप युद्ध नही लडेंगे, राणाजी आप युद्ध नही लडेंगे ?" जब वह यह वाक्य कह रहा था तब उसका स्वर व्यथा से बोझिल हो गया था ।

'हा अनग, इस विवाह मे ही हमारा उद्धार है ।'

कैसे '

बाप्प हमारी सेना का नायक बना हुआ है और उसकी मा ने

इस विवाह मे ही चित्तौड की विजय बताई है। वरवडी देवी माँ कहलाती है। यह दया और सत्य की ज्योति है और हमारे लिए वरदान से कम शुभ नही। ऐसी विषमता मे विवाह का विरोध हमारे विनाश का कारण हो जाएगा।"

अनगसिह आग बबूला हो उठा, "मैं अपनी शक्ति से उसको समाप्त कर दूंगा। एक चारण के बेटे के भय मे आप एक विधवा से गठबन्धन जोड लेंगे ?"

"अनग तुम विवेक से काम लेना नहीं जानते। बात-बात मे अधीर हो जाते हो। केवल युद्ध ही विजय का सत्य नही, राजनीति का मेरु दड नही। राजनीति का सत्य है, नीति चातुर्य, समझे !"

"लेकिन विधवा !"

हम्मीर का हठ फिर जाग गया। उसने तुरन्त कहा, "विधवा अपवित्र नही होती। शैशव काल मे पति-अस्पर्श्या अपवित्र कैसे हो सकती है ? यदि पिता का पितृत्व स्नेह की धारा मे अपना कौटुम्बिक गौरव विस्मृत करके अपनी विधवा बेटी का लगन भेज सकता है तब हम्मीर उसे ग्रहण क्यो नही कर सकता ? फिर देवी माँ के वचनो का पालन होना ही चाहिए। उसकी कृपा से हम एक दिन अवश्य चित्तौड को प्राप्त करेंगे।"

"ब्राह्मण-वर्ग ?"

"मैं ब्राह्मणो की नहीं, पुरोहितो की नहीं, आपकी चिन्ता करता हूँ।"

अनगसिह मौन हो गया।

पवनसी को को हम्मीर ने अपना मन्तव्य सुनाने को कह दिया। वह मौजीराम जी के समीप गया और कहा, "कामदार जी, यह विवाह अवश्य होगा।"

मौजीराम का रोम-रोम सिहर उठा।

उसने हम्मीर को समझाने की चेष्टा की पर हम्मीर ने तुरन्त कहा,

"धर्म इतना दुर्बल नही कि ऐसी घटनाओ से कलकित हो जाए और सूर्यवशियो की तपस्या इतनी निर्बल नही कि वह एक निर्दोष विधवा का भार भी वहन न कर सके ।"

× × ×

कोमल करो मे मेहदी के मयूरो का चित्राकन देखकर दुल्हिन हर्षोन्माद मे भर उठी । उसके अन्तराल की निझरिणी मे प्रेम का मुक्त मधुर स्रोत एक-एक कर उसकी भाव-लहरियो को प्रेम सिचित करने लगा । उसका नीरजात आनन रेशमी अवगुठन मे अत्यन्त आकर्षक प्रतीत हो रहा था । वह दर्पण मे स्वय के रूप को उतार कर मुग्ध हो गई ।

शहनाई का स्वर बजा ।

मगल गीत स्त्रियो ने गाए ।

पवित्र अग्नि के समक्ष महामत्रो के साथ मालदेव ने अपनी पुत्री का कन्यादान कर दिया ।

विवाह के तुरत बाद हम्मीर ने इच्छा प्रकट की कि वह कल ही यहा से विदा लेगा तथा वह तुरन्त अपनी पत्नी से एकान्त मे मिलना चाहता है ।

उसकी आज्ञा का तत्काल पालन किया गया ।

वह सोनगर रानी से मिला ।

सोनगर रानी के मुख पर [illegible] की प्रभा की सहज लालिमा थी । उसका मुख का आवरण उद्भासित और भली-भाति आवृत था फिर भी सोनगर रानी का [illegible] मुख यौवन की दीप्ति-कान्ति लिए उस [illegible] स्पष्ट [illegible] हो रहा था ।

हम्मीर [illegible] उस अनिन्दित अपूर्व सौन्दर्य को देखता रहा । रानी का मन [illegible] से सिहर उठा । [illegible] अपने [illegible] अवगुण्ठन को [illegible] [illegible] लिया ।

'रानी जी, इस भाति मुझे आपसे नहीं मिलना चाहिए किन्तु परिस्थिति कुछ ऐसा कर रहा है । आप जानती है कि आपका विवाह

विवाह नहीं, एक दाँव है। राजनैतिक सिद्धि है।"

चकित मृग-शावक की भाँति सोनगर रानी की आँखों मे आश्चर्य नाच उठा। वह विचार उठी, प्रथम मिलन पर राजनीतिक दाँव-पेंच ! वह आशका से काँप उठी।

वह सक्षेप मे बोली, "मैं नही समझी राणा जी !"

"बात भी सकेतो मे बताने की नही है राणी सा, आप के पिता श्री की राज्य-लिप्सा इतनी तीव्र हो उठी कि उन्होंने जीवन के परम सत्य क्षत्रिय-धर्म को त्याग दिया। अपनी राजनीति को सफल बनाने के लिए उन्होंने प्रत्येक वस्तु को गौण मान रखा है। वह वस्तु चाहे पत्नी-पुत्र और पुत्री ही क्यो न हो ? किन्तु हम भी सजग हैं। राजनीति के उतार-चढाव को पहचानते हैं, अत इस बार आपके पिता का दाँव नही चला, फलस्वरूप उनसे एक भयकर पाप हो गया।"

"पाप !" इतना कह नववधू काष्ठ-प्रतिमा की भाँति स्तब्ध हो गई।

"हाँ भयकर पाप, जिसका प्रायश्चित आपका बाप युग-युगान्तर तक नही कर सकेगा। परलोक मे भी उसकी आत्मा पल भर के लिए भी सुख की साँस नहीं ले सकेगी। ऐसा अधर्म गौरवाभिभूत मनुष्य नहीं करते, घोर पापिष्ठ ही कर सकते हैं।"

"मैं कुछ भी नहीं समझी। आप मुझे समझाइये !" नववधू के श्वासोच्छ्वास तीव्र हो उठे। मुख-पद्म के मधु की टोह मे उन्मत्त भ्रमर-अलकें जडिया को प्राप्त कर गई थी। कुछ कहना चाहा पर व्यर्थ ! शब्द कठ मे ही अटक कर रह गए।

"पहले वचन दो कि सुनकर तुम मेरा ही कहना मानोगी।" गहरा अपनत्व उसके स्वर मे था, जिसने 'आप' की मर्यादा को तोड डाला।

"आप मेरे सर्वस्व हैं, प्रभु, मोक्ष, सुख और जीवन ! आपकी आज्ञा के अतिरिक्त अब मेरी कोई साव-अभिलाषा नही।"

"तुम वचन देती हो ?"

"हाँ !"

"तुम्हारा निर्दोष चेहरा तेजस्वी नारी-सा प्रभावशाली और अग्नि-शिखा-सा अस्पर्श्य है। तो भी अपरिवर्तित पाषाण-पंक्ति-सा विधि के विधान ने हमारे जीवन को अवरुद्ध कर रखा है। उस पर से जाते हुए हमारी यह दुर्बल आत्मा सिंह के समक्ष शावक की स्थिति जैसी हो जाती है। हमारी प्रत्येक भावना उसका उल्लंघन करती हुई भयभीत हो जाती है। सुना है, विधि-विधान की हम सहजता से अवज्ञा नहीं कर सकते, किन्तु तुम्हारे बाप ने हम्मीर को यमलोक पहुँचाने के लिए उसको धूल की साधारण रेखा समझ कर मिटा दिया है।"

"आपको यमलोक पहुँचाने ?"

"हाँ देवी, आदमी के मन की लिप्सा ज्वालामुखी-सी प्रचंड होती है। उसकी शान्ति के लिए उसे छल द्वेष और कपट के कई हवन करने पड़ते हैं और उसमें कई स्वजनों एवं परिजनों की आहुतियाँ भी देनी पड़ती हैं।"

"बेटी के माँग के सिन्दूर को मिटाने वाला बाप नहीं हो सकता।" नववधू का स्वर कोमल हो गया, "आपको मिथ्या सन्देह हो गया है।"

"न!" हम्मीर दृढ़ता से बोला, "आदमी के मन की लीला अपरम्पार है। वह क्या सोचता है और क्या करेगा, यह हम सहजता से नहीं समझ सकते। उसके विचारों पर अनेकानेक भाव संघर्ष करते रहते हैं। उसका अन्तर-सागर विभिन्न वीथियों का क्रीड़ा-स्थल है। रानी, तुम भोली हो। अभी मेरी बात सुनोगी और अभी तुम एक सामान्य नारी-सी करुण क्रन्दन कर उठोगी। तुम्हारा मन-प्राण-आत्मा सभी क्षुब्ध चीत्कार कर उठेगा और तुम्हें सृष्टि की प्रत्येक वस्तु सत्यानाशिनी लगेगी।'

वातावरण गम्भीर हो गया। पल भर के लिए निस्तब्धता छाई रही जैसे वह बिलकुल निर्जन है।

"राणा जी मैं आपके पाँव पड़ती हूँ और संकल्प भी करती हूँ कि मैं आपके वचनों के विरुद्ध अपनी साँस तक नहीं लूँगी।"

"तुम्हारे वचनो की दृढता पर मुझे विश्वास आ रहा है।"

हम्मीर ने दीर्घ नि श्वास लिया। फिर सम्हलकर पुन बोला, "राणी, तुम अपने जीवन की सारी घटनाओ-दुर्घटनाओ से परिचित हो ?"

"मेरा जीवन राजकुमारी का जीवन रहा है। मर्यादित एव सुखी।"

"बचपन मे तुम्हारा किसी के साथ विवाह हुआ था ?"

वाक्य समाप्त होने के साथ नववधू के नेत्रो मे अशाति का सागर उफन पडा। उसे लगा कि चराचर मे प्रचड भूकम्प आ गया है और उसके आस-पास के सुन्दर भवन खण्ड-खण्ड हो रहे हैं। उसके तन और मन मे अग्नि-शिखाएँ प्रज्वलित होकर उसे दारुण दुख देने लगी है।

उसने हम्मीर की ओर जलती-दृष्टि से देखा। क्रोध मे उसकी वाणी अवरुद्ध-सी रही। हम्मीर ने उसकी ओर कठोरता से देखा और फिर मृदु-तिरस्कार के साथ कहा, "उस समय तुम अबोध थी। तुम्हे स्वय का ज्ञान नहीं था। तब तुम्हारे पिता ने एक भट्टवशीय राजकुमार के साथ तुम्हारा विवाह कर दिया। दुर्भाग्य से वह अति शीघ्र समर-भूमि मे काम आ गया और तुम विधवा हो गई। यह कटु सत्य है, विषाक्त यथार्थ. ।"

रानी के अधर कांपने लगे। कांपते-कांपते उसके मुख से भयानक चीख निकली, "यह सब झूठ है, झूठ है।"

हम्मीर का स्वर अत्यन्त कोमल एव मधुर हो गया, "यह सत्य है राणी ! मैंने तुम्हारे समक्ष जो निवेदन किया है, वह तुम्हारे पिता का कहा हुआ है। इसमे जरा भी इतिवृत नही है। उन्होंने पितृ-स्नेह वश ऐसा किया। वे तुम्हे विधवा के हृदय-विदारक वेप मे नही देखना चाहते थे। तुम्हारी मां ममता के अटूट बन्धनो मे इतनी निर्बल हो गई कि वह भी इस बात का विरोध नही कर सकी।"

वह पुन उन्मादग्रस्त नारी-सी चिल्लाई, "यह सब झूठ है, झूठ ! मेरा धर्म बिगाडकर मेरे प्रति कोई स्नेह नही दिखा सकता।"

हम्मीर के अधरो पर कुटिल मुस्कान थिरक उठी, "तुम ठीक कहती

हो। तुम युवती हो। तुम्हारे अग-अग मे विलास का प्रभाव आच्छ है। फिर क्या कारण था कि तुम्हारे बाप ने तुम्हारा विवाह आज नही किया ?"

नववधू के बोझिल लोचनो मे जिज्ञासा चमक उठी।

"फिर किया तो अपने शत्रु से, अर्थात मुझसे ? जानती हो तुम राजा मालदेव के रक्त का प्यासा हूँ। उसके प्राणो का घातक हूँ, उ विध्वस का इच्छुक हूँ। रानी ! यह सत्य है कि तुम बाल विधवा हो

" ।" नववधू का पुडरीक-मुख चिन्ताओ से धूल-धूमरित प्रतीत हुआ। बोझिल लोचनो की जिज्ञासा लुप्त हो गई। उसकी मे न भाव था और न विभाव। एक शून्यता थी, अर्थहीन शून्यता।

'वस्तुत मुझे यहाँ विवाह के लिए नही बुलाया गया था। विवाह बहाना मात्र था। वास्तविकता यह है कि यह एक षडयत्र था जि द्वारा मैं यमलोक पहुचाया जाने वाला था। पर मैं इस बात के f पहले से ही सावधान था, अत उसका परिणाम आशा के विपर निकला।'

नववधू एक चन्दन-काष्ठ निर्मित चाकी पर टूटी-सी बैठ गई।

हम्मीर का कथन जारी था, "रानी, मैंने तुमसे विवाह जान बूझ किया। देवी के वचनो के आधार पर किया। यह विवाह मेरे अनाग मंगल का सोपान है, वह पावन गंगा है जिसके स्पर्श से चिन्ताएं वे दु दूर हो जायेंगे।

भाव-प्रधान शब्दो पर नववधू ने ध्यान नही दिया। वह अपने म से बोली, 'तभी मुझे विवाह की पूर्व सूचना नही मिली, तभी महल प्रारम्भिक उत्सव-आयोजन नही हुए। ओह ! यह ममान्तक दुःख ! य मेरे जीवन के प्रति दुर्भावना ! मैं मैं ।" उसने अपनी हाथ क चूड़ियो को दीवार से टकराना चाहा, पर हम्मीर ने उस राह ।" वह अत्यन्त सम्मानपूर्ण शब्दो मे नववधू से बोला, 'आपने मुझे वचन दिए है। फिर प्रतिशोध का आधार आत्म-हनन नही, बुद्धि और भी है

'नहीं राणाजी, एक विधवा क्षत्राणी के लिए मंगल-सूत्र पहनने से बड़ा दुष्कर्म और कोई नही। यह तन केवल अग्नि माँ के योग्य है।"

"आप धैर्य से सोचिये। देवी माँ का यह आशीर्वाद है। फिर शास्त्रों मे भी अज्ञान मे किया हुआ पाप, पाप की सज्ञा नही होता।"

"नही, नही, मैं यह सब नही जानती। मुझे यह विवाह स्वीकार नही। मैं विधवा हूँ, विधवा ।"

वह बाहर की ओर जाने लगी। हम्मीर ने उसका हाथ पकड़ लिया। नववधू विगलित कण्ठ से बोली, 'मुझ पापिन को स्पर्श मत कीजिये, माँ की अखण्ड ममता और पिता के नेत्रहीन अगाध स्नेह ने मुझे कलकित कर दिया है। मैं यह सुन भी नही सकती कि मैं विधवा हूँ। उफ! यह जानने के पहले मैं मर जाती तो अच्छा होता।"

नववधू के झंझा-विलोडित नेत्रो से अश्रुओ की धारा वह पड़ी। हम्मीर के मन पर आघात-सा लगा। उसने वधू को आलिगन मे लेकर कहा, "तुम्हारे जैसी विधवा अपवित्र नही होती। तुम निर्दोष हो, भोले शिशु की भाँति अज्ञान। . धिक् उस लोभी और निर्दयी पिता को दो, जिसने तुम जैसी धर्म-प्रिया नारी को दाँव पर लगा दिया। क्या ऐसे अधर्मी बाप के कुकर्मों का यही दण्ड है? क्या किसी नारी की आत्मा से खेलने वाले पामर पुरुष के कुकृत्यो का यही प्रतिशोध है कि तुम स्वय को समाप्त कर दो। राणी! मेरे अन्तराल के आलोक मे तुम्हारा वैधव्य मे कलकित मुख उस मोती की भाँति दीप्त होगा जो अस्पर्श्य है। मैं तुम्हे उतना ही सम्मान दूंगा। जितना चित्तौड की महाराणियाँ प्राप्त करती आई हैं। किंतु इतना याद रखना, हम्मीर की किंचित दृष्टि का एक सकेत यहाँ सर्वनाश का ताडव प्रारम्भ कर देगा।"

नववधू का मुख रक्तहीन हो गया। उसकी कोमल भुज-लताएँ शिथिल होकर अपने घुटनो पर पड गई।

'यह सब क्यो?" आपके कीर्तिमान सिंहासन पर एक विधवा का इतना आदर-सत्कार क्यो?" वह चिढ गई।

"क्योंकि देवी माँ बरवडी का आदेश है। क्योंकि अमंगलकारी विधवा का चरण-स्पर्श चित्तौड़ की मुक्ति का सूत्रधार होगा।"

"हाय!" एक आह-सी निकली नववधू के मुख से।

"राणी! तुम्हारे मुख पर उज्ज्वलता का पावन आलोक है। उस आलोक में चित्तौड़ की भाग्य-श्री विजय-श्री की अवतारणा होने वाली है। मैं तुम्हें अपने क्षत्रिय-धर्म का विश्वास देता हूँ कि यदि तुमने अपने जीवन से खेलने का प्रयास नहीं किया तो मैं तुम्हारे वचनों को कभी भंग नहीं करूँगा।"

"ठीक है। राणा जी, मैं वचनबद्ध हूँ। इस अक्षय आत्मा की शपथ खाती हूँ कि मैं आत्महनन नहीं करूँगी, प्रतिशोध लूँगी।"

हम्मीर के अधरों पर वही कुटिल मुस्कान थिरक उठी। उस कुटिल मुस्कान में हम्मीर के अन्तस के भाव मूर्तरूप होकर नाच उठे जैसे उसके मुख के भाव कह रहे हैं, तुम युग-युगों से शापित नारी हो जिसका उपयोग सदा स्वार्थ के हेतु होता आ रहा है। मुझे नारी-सौन्दर्य और नारी पवित्रता का सम्मोह नहीं, मेरे समक्ष विधवा और कुमारी का प्रश्न नहीं। विलास की मुझे उत्कंठा नहीं, मुझे भोग की लालसा नहीं। मेरी इच्छा और ध्येय है—चित्तौड़ की मुक्ति, उसकी प्राप्ति, उसकी स्वतन्त्रता।

हम्मीर आगे बढ़ा।

नववधू की अलक में फूल टाँकना चाहा, पर उसने ऐसा नहीं करने दिया। उसने कहा—"मैं अभी आती हूँ राणा जी।"

"कहाँ जाती हो?"

"चिन्ता न कीजिए, आपके वचनों को भंग नहीं करूँगी।'

उसके जाते ही हम्मीर ने अपनी तलवार की मूठ पर हाथ रख कर अपने आप से कहा, "नारी प्रतिहिंसा की आग में जल उठी है।"

नववधू उस कक्ष से बाहर निकल कर अपनी माँ की ओर द्रुतगति से चली।

पथ के मध्य उसकी दो खास सहेलियाँ मिल गईं। वे सहेलियाँ इसी

के प्रसग की वातचीत कर रही थी ।

सहोदरा ने वरजी से कहा, "सुना वहिन, ऐसा अनर्थ हमने कभी नही देखा ।"

"ऐसे वाप का मुंह काला कर देना चाहिए ।"

"सुन री, एक विधवा के हाथ पीले करते हुए उसकी आत्मा कांपी तक नहीं ।"

"मजे की वात यह है कि आज तक इस वात का पता तक नहीं होने दिया ।"

नववधू के तन मे रोष की चिनगारियां जल उठी ।

थोडी ही दूर पर वुढिया दासी मेनका मिली ।

नववधू अश्रु पूरित नेत्रो से उसके गले के समीप का आंचल का छोर पकड कर पूछा, "दादी क्या यह सत्य है ?"

"दादी पल भर के लिए शांत रही । रुकती-रुकती वोली, "हां ।"

उसके जाते ही दादी ने कहा, "महाराज की ऐसी आज्ञा है ।"

अव उसके अग-अग मे शूल-चुभन की पीडा का सचरण होने लगा वह उन्मत्त-सी, आहत सांपिन-सी अपनी मां के पास पहुंची ।

"मां, क्या यह सव सत्य है ।" नववधू ने जाते ही पूछा ।

मालदेव की वापस आज्ञा नही आई थी कि इस भूठ को अव छिपाकर न रखा जाय, अत रानी ने महाराज की आज्ञानुसार भयभीत स्वर मे कहा, "हां, यह सव सत्य है ।"

पहाड-सा टूट पडा नववधू पर, "मां, क्या मैं विधवा हूं ?" वह चीख पडी । उसका अग कांपने लगा ।

"हां वेटी ।"

"तुमने यह पाप क्यो किया, मां ? एक विधवा को विधवा क्यो नही कहा । इस भेद को आज तक क्यो छुपाया ?" उसका स्वर व्यथा से कांप रहा था ।

"मेरे ममत्व ने ऐसा नही होने दिया ।"

"वह ममत्व ममत्व नहीं कहला सकता, जो आत्मा को पतनोन्मु[illegible]
करता है, शास्त्रों और मर्यादाओं का उल्लंघन करता हो।"

"तुम माँ के हृदय को क्या समझो। माँ का हृदय अपने वंश के सु[illegible]
के लिए शास्त्र क्या, प्रभु तक की अवज्ञा कर सकता है।"

"अच्छा!" वह सिंहनी की भाँति फुफकारती हुई वापस आ गई।

दुख, विषाद और त्रास नववधू के चेहरे पर छा रहे थे।

× × ×

मालदेव ने ज्यों ही अवकाश पाया त्यों ही वह रावले में आया। रा[illegible]
का चिंतातुर मुख देखकर वह सहज ही पूछ बैठा, "क्या बात है रानी"

"कुछ नहीं।' वह अनमनी सी बोली।

मालदेव ने एक दीर्घ निःश्वास लिया, 'इस बार राणा ने हमें गह[illegible]
पराजय दी है। हमारी राजनीति एकदम असफल हुई।"

'हाँ, और कुमारी के मन में व्यर्थ ही सन्देह हो गया कि वह बा[illegible]
विधवा है।'

विस्मित नेत्रों से मालदेव अपनी रानी की ओर देखने लगा। आ[illegible]
दृष्टि में जड़ता लाता हुआ वह बोला, "जब राणा ही हमारे विरुद्ध प[illegible]
गया, फिर उस भृत्य की आवश्यकता क्या थी?"

'मैंने केवल आपकी आज्ञा का पालन किया।'

'राजाज्ञा पत्थर की लकीर नहीं होती। वह हर समय बदल[illegible]
रहती है। जब राणा जी विधवा से ही विवाह करने को तत्पर हो ग[illegible]
फिर उस भृत्य को प्रश्रय देकर तुमने बेटी को व्यर्थ ही दुःख दिया।"

'स्त्रियों को राजनीति अधिक चतुर नहीं करती है।' रानी ने स्[illegible]
स्वभाव की [illegible] था। [illegible] थी, 'वह नीति भी दूरदर्शी नहीं होती।"

मालदेव ने इसका कोई उत्तर नहीं दिया। उसने परिचारिका को
आज्ञा दी कि वह राजकुमारी को बुला कर लाए।

नववधू का चेहरा म्लान और रक्तहीन था। दृष्टि में [illegible]
स्पष्ट चिन्तारेखा चमक रही थी।

:

मालदेव ने क्षीण-श्रात कठ मे वहा, "वेटी, हम से एक वडी भारी भूल हो गई है।"

नववधू ने शात भाव से कहा, "भूल राजनीतिज्ञों से नही होती। वह अवसर की प्रतीक्षा करते हैं और अवसर आते ही सब कुछ दांव पर लगा देते है।"

"नही नही, ऐसी वात नहीं है। वात यह है कि ।"

बीच मे ही नववधू अमर्ष से लाल हो उठी। तिक्त स्वर मे वह वोली, "वात यही है कि अव मैं फिर विधवा नही हूँ।"

"हाँ, हाँ" नेत्रो में विस्मय लाकर मालदेव वोला, "तुम सचमुच विधवा नहीं हो। यह विधवा का कथन एक राजनीतिक चाल थी, हम्मीर को वहकाने का वहाना था।"

"हर व्यक्ति दूसरो के धोखा देने के लिए ऐसा ही कहा करता है।" वह एक दम चिढ गई "आपको यह भली-भाँति विदित है कि सत्य तो आधारहीन नहीं होता? वह प्रतिवन्ध मुक्त होते ही प्रत्येक जिह्वा पर आ विराजता है। मनुष्य ही नहीं, धरती का कण-कण और अणु-अणु उसका उद्घोष करता है और वह प्राणियो के अन्तराल की गहराई मे पूर्णरूप से स्थापित हो जाता है।"

बेटी के तनिक दीर्घ भाषण पर मालदेव झल्ला पडा। वह रोषपूर्वक वोला, "तुम अपना ही कहोगी या कुछ हमारा भी सुनोगी?"

"मैं अव आपका कुछ भी सुनने को तैयार नही हूँ। मैंने आप का विश्वास करना छोड दिया है। आप पापी ही नही, नराधम हैं।" वह भावावेश मे भर आई। फिर उनकी मुद्रा 'स्व' पर केन्द्रीभूत हो गई। शनै शनै जो कहा, वह ऐसा लगा जैसे वह अपने आपको ही कह रही हो। वह वोली, "आप मानवीय सवेदनाओ के परे केवल राजनीति के चतुर-निराधर्मी और पाषाण प्राणी है, आपका कोई अपना नही और कोई पराया नहीं। आप विवाह भी रचाते हैं तो किसी की हत्या करने के लिए और आप अर्थी का जुलूस भी निकालते हैं तो किसी के प्राण

लेने के लिए। आपका हर कार्य स्वार्थ-सिद्धि का प्रतीक होता है। आप राजनीति के स्वार्थ-लोलुप आवर्तन मे रहते-रहते दूसरो की लालसा-अभिलाषा को एक खेल समझने लगे है। आपका एक ही वस्तु मे प्रेम है, वह है आपकी महत्वाकाक्षा।"

बेटी को इतनी भावुकता मे देखकर मालदेव उसके सन्निकट आया। अब वह बहुत गभीर था। उसके मस्तिष्क मे अपनी बेटी के संदेह जनित आवेश को लेकर संघर्ष का झंझा-सा उठ गया। उसने अपनी बेटी पर हाथ फेरना चाहा, किन्तु राजकुमारी ने ऐसा नही करने दिया। वह दूर हट कर खड़ी हो गई।

मालदेव का हृदय भर-सा आया। विगलित स्वर मे बोला, "मैं तुम से झूठ नही बोलता। शत्रु के विनाश के लिए रचा गया षड्यन्त्र विफल हो जाने के बाद मुझे तुम्हारा विवाह अपने शत्रु के साथ करना पड़ा। यह विधवा सम्बोधन भी उसी षड्यंत्र का एक अग है।"

"और अब मुझे वापस सुहागिन कहना, क्या नया षड्यंत्र नही हो सकता? पिताजी, मनुष्य बार-बार मूर्ख नहीं बनाया जा सकता।"

मालदेव को अपनी बेटी पर क्रोध आ गया। वह फुफकार कर बोला, "तुम्हे मुझ पर भरोसा नहीं, तुम समझती हो कि मै सदा झूठ बोलता हूँ?" मालदेव स्वय कुछ आवेश मे आ गया।

"हाँ।"

"बेटी!" एक चीख सी निकल पड़ी मालदेव के मुख से।

"जो बाप अपनी फूल सी बेटी को शत्रु के हाथो मे दासता दुःख भोगने के लिए भेज सकता है, वह क्या नहीं कर सकता। आज सारा का सारा राजस्थान मुझे देख कर घृणा से थूक रहा है, क्यो? केवल इसलिए कि मैं विधवा हूँ। पिताजी, विधवा लड़की का विवाह आपके कौटुम्बिक गौरव के अनुकूल नहीं, मुझ जैसी क्षत्राणी के धर्मानुसार नहीं, पर, जो भाग्य मे लिखा है, उसे भोगना ही पड़ेगा। जो हो गया है, उसके लिए पश्चात्ताप ही शेष रह गया है।"

मालदेव को बेटी के हठ पर क्रोध आ गया। उस क्षण अपने धैर्य को खो बैठा। उसकी बेटी उसकी बात का विश्वास क्यो नही करती, यह सोचकर वह उद्विग्न हो उठा और क्रोध मे लाल-पीला होकर बोला, "यदि तुम्हे मेरी बात पर विश्वास नही आता तो जा, तू विधवा है, विधवा।"

रानी ने बीच मे अवरोध उत्पन्न किया। "आपको धैर्य रखना चाहिए।"

"धैर्य!" मालदेव बडबडाया, "मैं धैर्य कैसे रखूं? तुम्हारी लाडली मेरी कुछ सुनती ही नही। कह दिया कि यह एक समय का खेल है पर यह मानती ही नही।"

राजकुमारी ने कुछ नही कहा। वह कक्ष से बाहर हो गई। उसने जाते-जाते अपने पिता की आवाज को सुना—"जाती है तो जाने दे, उसके जाने से कौन हमारी ध्वजा टूट जायगी।"

राजकुमारी एक पल के लिए रुकी, फिर हवा की तरह भागकर उन दोनो की आँखो से दूर हो गई।

× × ×

राजमहल मे प्रदीप जल उठे। ढोलनियो के सगीत-नृत्य के बाद हम्मीर ने उस कक्ष मे प्रवेश किया जिसमे नववधू सोलह शृगार करके भी निरन्तर अश्रु-वर्षा कर रही थी। उस के समीप लघु-प्रदीप जल रहा था जिसका हल्का प्रकाश उसके चांद से सुन्दर मुख पर पड रहा था। मखमली शय्या पर चम्पा चमेली और गुलाब के फूल बिखरे हुए थे जिनकी सौरभ से कक्ष महक रहा था।

हम्मीर के चरणो की ध्वनि सुनते ही नववधू संभल गई। उस ने अपने घूंघट का आवरण अपने मुख पर डाल लिया। उसने अपने अश्रु पोंछे और आँचल को ठीक किया।

हम्मीर ने खँखारा।

नववधू सकपकाई।

हम्मीर ने समीप आकर उसके घूँघट को उठाना चाहा। नववधू कोमल स्वर मे बोली, "जरा रुकिए।"

"क्यो ?"

"मुझे एक बात का सच्चा और सही उत्तर दीजिये कि क्या मैं विधवा हूँ ?" नववधू ने स्वत ही कुछ घूंघट उठा लिया था।

"हाँ ?" हम्मीर ने बडे विश्वास के साथ कहा, हालांकि वह उस समय ऐसा भी कह कर उसे सात्वना दे सकता था कि वह विधवा नही है, पर उसने ऐसा नही किया। वह इस सत्य को और मजबूत करना चाहता था ताकि उसके मन मे अपने बाप के प्रति प्रतिहिंसा उत्पन्न हो जाय।

"और आपने यह जानकर मुझसे विवाह क्यो किया ?"

"यह दैव-योग है। देवी मा बरवड़ी की आज्ञा का पालन है। फिर ... ?" हम्मीर ने अर्थ-भरी दृष्टि से नववधू को देखा।

"आप कहते-कहते रुक क्यो गए ?"

"फिर सभी तुम्हारे रूप यौवन की प्रशंसा करते थे। मैं भी चाहता था कि मेरी रानी अतुल्य रूप की देवी हो। उसके सौंदर्य पर मुझे गर्व हो। रानी ! वैधव्य कोई ऐसा कलंक नही है जिसे अमिट कहा जाय। वह साधारण पाप है।"

"साधारण पाप ?" नववधू के मुख से हठात् निकला।

"हां, यह साधारण पाप है। तुम्हारा विवाह उस समय हुआ जब तुम नादान थी। यह अज्ञानता तुम्हारे महापाप को साधारण पाप कर देती है और उसका प्रायश्चित्त तुम आसानी से कर सकती हो।"

"कैसे ?"

"तुम ऐसा प्रयत्न करोगी कि हमें अपना चित्तौड़ मिल जाए। तुम्हारा आगमन तभी मंगलाचरण हो सकता है जब हमें अपना खोया चित्तौड़ मिल जाए।"

"यह सब कैसे होगा ?"

"सोचो कि उस बाप के पाप का दंड उसे कैसे मिलेगा जो तुम्हारे धर्म से खेल चुका है।"

नववधू का मन ईर्ष्या और प्रतिहिंसा से भरा हुआ था। उसने कहा "मैं सोचूंगी।"

हम्मीर के अधरो पर वही कुटिल मुस्कान थिरक उठी जिसमे उसके राजनीति के दाव-पेंच भरे थे।

नववधू ने तब गहरा मौन धारण कर लिया। हम्मीर ने उसे स्पर्श करना चाहा, पर उसने ऐसा नही करने दिया। वह शय्या पर गभीरता धारण करके चुपचाप बैठ गई।

हम्मीर हवा से काँपते हुए दीपक की लौ को देख रहा था। सोच रहा था—वह एक विधवा को चित्तौड के राज्य-सिंहासन पर बिठा कर कोई अनर्थ तो नही कर रहा है!

तभी उसे बरबडी के वचनो की याद हो आई और उसने विधवा विशेषण पर विचारना ही छोड दिया।

वह शय्या पर लेट गया। नववधू के बडे-बडे नयनो मे संघर्ष की रग-बिरगी लपटें जल रही थी।

अप्रत्याशित वह बोली, "आपका कुल-देवता शिव हैं। परम देव शिव से दो तत्व प्रकट हुए, शिव और शक्ति! मैं शक्ति हूँ, निषेध रूपा। वह निषेध तत्व ही नारी है। जो अपने आपको उत्सर्ग और बलिदान करने की भावना रखती हो, वही नारी है। जो अपने अस्तित्व को विस्मृत करके दूसरे की रचना की तन्मय हो, वही नारी होती है। जो स्वय को कलकित करके दूसरो को पाप से मुक्ति दिलाने मे रत हो, वही नारी है। जो अपने रोम-रोम को बन्दी बनवा कर दूसरे के पोषण की प्रबल इच्छुक हो, वही नारी है। उस नारी की सौगन्ध खाकर कहती हूँ कि मैं आपकी हूँ, सम्पूर्ण रूप से आपकी हूँ! बस इतनी सी विनती है कि आप भी मुझे पिता की भाँति राजनीति का हथियार न बनाइए।"

हम्मीर ने उसे अपने आलिंगन मे लेते हुए कहा, "नही-नही, तुम्हें

ऐसा नही विचारना चाहिए। यह देवी की आज्ञा से हुआ है। यह विधि का विधान है जिसे होना ही था।"

"फिर आप रक्तपात का विचार छोड दीजिए। मैं नही चाहती कि मेरे विवाह पर युद्ध के बाजे बजे और मनुष्यो की लाशो से नगर पट जाए। यह मुझ विधवा के लिए अत्यन्त पीडा-जनक होगा।" उसकी वाणी मे असीम कोमलता थी। उसकी दृष्टि अत्यन्त नारी-सुलभ मानवीयता से भरी हुई थी। उसका प्रभाव हम्मीर पर गहरा पडा। नव-वधू की आख आसुओ से भरी हुई थी। हम्मीर ने उसके हाथ को अपने हाथ मे ले लिया और उसके निर्दोष, मधुर मुख को देखता रहा।

"मैंने सुना है कि आपने गढ को चारो ओर से घेर लिया है।" वह पुन बोली, "आपके पास अजेय शक्ति है जिसके द्वारा आप इस नगर को श्मशान बनाना चाहते है, पर ऐसा करना परिस्थिति-अनुकूल न कहला कर यही भ्रम पैदा करेगा कि एक विधवा के विवाह पर इसके अतिरिक्त और क्या हो सकता है?"

हम्मीर द्रवित हो उठा। बोला "रानी! मैं तुम्हें समस्त हृदय से प्यार करता हू जहा तक युद्ध और विनाश का प्रश्न है, तुम निशंक रहो। रोष के लिए मैं विवश हू। मैं तुम्हारे पिता को उसकी करनी का दड जरूर दूगा। उसने मुझे मारने का नाटक रचा फिर मैं उसे कैसे क्षमा कर सकता हूँ।"

"देखिए मैंने आप से एक बार नहीं हजार बार विनती की कि अभी आप संग्राम न कीजिए, ऐसा करना सचमुच मेरे लिए महादुख का कारण हो जाएगा। कदाचित मैं आत्महत्या ही कर लूं।"

'रानी!' हल्की चीख निकली हम्मीर के मुख से।

'आपकी देवी माँ भविष्यवक्ता है। वह भविष्य के प्रकाशमान और अंधकार दोनों पक्षों को जानती है पर मैं इतना ही जानती हूँ कि मैं मनहूस हूँ। मेरा शुभ स्थान में चरण रखना ही अमंगलकारी होता है। फिर कोई अनिष्ट एक ही बात का संकेत करता कि मैं अशुभ हूँ।"

"लेकिन चित्तौड़ की मुक्ति ?"

"मैं चितौड को मुक्त कराऊँगी। आप विश्वास रखें कि आपको अपना चित्तौड मिलेगा।"

"पर कैसे ?

"पिताजी आपको दहेज देंगे। आपसी वैमनस्य के कारण वे आपको केवल सम्पत्ति देना चाहेंगे, पर आप सम्पत्ति के साथ-साथ यहाँ के अत्यन्त चतुर, राजनीजि मे निपुण कामदार मौजीराम को भी माँग ले।"

"इससे ?"

"आपको अपना चित्तौड मिल जाएगा।"

हम्मीर ने नववधू के कपोल का चुम्मन ले लिया। नववधू के नेत्र गगा-यमुना से भर आए। वह दीपक की लौ को छेड़ती हुई भर्राए स्वर मे बोली, "मुझे थोडा अपनी आत्मा की पापाग्नि मे जलने दो। यह सौन्दर्य दिव्य और मोहक अवश्य है पर वर्तमान के अनुसार उसकी दिव्यता पर कलक की छायाएँ मँडरा रही हैं। मुझे घोर एकान्त की अनुभूति मे उसे विस्मृत करने दो। आप चाहे तो मैं पृथक कक्ष में चली जाऊँ। जहाँ निर्जीव मौन है, जहाँ पाषाण-प्राचीर का उन्मन् सगीत है।

हम्मीर ने उसे आज्ञा दे दी।

नववधू तत्क्षण दूसरे कक्ष मे चली गई।

× × ×

प्रभात होते ही कई दास-दासियो के साथ राजा मालदेव ने भयवश हम्मीर को विदा करना चाहा। हम्मीर को प्रथा के अनुसार राजा मालदेव ने आठ जिले मगरा, सेरानला, गिरवा, गोडवाड, वाराठ, श्यालपट्टी, मेरवाडा और घाटे का चोखला दहेज मे दिए।

इसी समय हम्मीर ने नि सकोच होकर दहेज में कामदार मौजीराम को माँग लिया।

दामाद को इसके लिए रुष्ट करना नही चाहा। उसने तुरन्त हम्मीर की माँग को मान लिया।

राणा मालदेव ने हम्मीर को एकान्त मे ले लिया और विनीत स्वर मे कहा, "मेरी बेटी विधवा नही है।"

हम्मीर ने तुरन्त कहा, "कैसा भी हो महाराज, अब वह मेरी पत्नी है। मै उसका सम्मान एक महारानी-सा ही करूंगा। आप चिता न करें।"

हम्मीर अपने दल के साथ चलने को उद्यत हुआ। सारा कार्य सम्पन्न हो चुका था। माँ ने अपनी बेटी को अपनी ओर से विदाई दे दी थी। माँ ने अपनी बेटी को दहेज मे अनेक दास-दासियाँ और धन दिया। वह अपनी बेटी को सच्चे मन से आशीर्वाद देना चाहती थी, पर नववधू ने उसके आशीर्वाद को सुनना नही चाहा।

उसने जाते-जाते अपनी माँ से कहा, "तुम समझ लेना मैंने अपने हाथ से अपनी बेटी को मार दिया है।"

माँ के नेत्र भर आए पर उसने अपने हृदय का उफान हृदय मे ही रहने दिया। बेटी के कथन पर न जाकर उसने माँ के कर्तव्य का पालन किया। उसने धीमा-धीमी बेटी को गले से लगाया और अश्रु भरी विदाई दे दी।

इधर विदाई का कार्यक्रम हो रहा था और उधर अनगसिंह राणा हम्मीर को बार-बार कह रहा था कि अब जाते-जाते जालौर को विनष्ट कर दिया जाय। शत्रु पर दया और उदारता दिखाने का मतलब है अपने आपका निधन करना है।

हम्मीर ने अनगसिंह का कठोर शब्दों मे विरोध किया, 'मै अमानवीय कृत्य करने को तैयार नहीं हूँ। मै जालौर पर रक्त की एक बूँद भी नहीं बहने दूंगा।'

अनगसिंह क्रोधित हो गया, 'आप सदा राजपूती दंभ और आन दान मे ऐसे काम कर देते हैं जो राज्य के लिए घातक सिद्ध होते हैं।

"राजपूतो के पराक्रम का इतिहास भी तभी तक जिन्दा है जब तक उनमें यह उदारता और शत्रु को बार-बार छोडने का साहस है। हमारा धर्म सबसे पहले दया करना ही सिखाता है।"

अनगसिंह का मन इस कथन के खोखलेपन से जल उठा। वह सव्यंग बोला, "आपका कोई धर्म नही, आपका कोई कर्म नही। आपका अपना कुछ है तो अपना हठ, अपनी निरंकुशता।"

पवनसी को अनगसिंह का यह कथन अशिष्ट लगा। वह तुनक कर बोला, "राणाजी के सामने शिष्टता का उल्लघन असह्य हो सकता है। कही तुम्हें इस अशिष्टता का दड न मिल जाए।"

मेरा ने भी उसे डाटा।

हम्मीर ने उसे समझाया। अनगसिंह नही माना।

उसके जाते ही पवनसी ने सिर झुका कर कहा, "राणाजी, यह तलवार को ही जीवन की सफलता, उत्थान और सम्राट मानता है। मेरी यह राय है कि इसे किसी जगली जानवर के सामने फेंक दिया जाय।"

"जगली जानवर ?"

"हाँ—हाँ, किसी नौहत्ये युवक के समक्ष जो इसके अंग-प्रत्यग को चूर्ण-विचूर्ण कर दे और इसकी युद्ध-पिपासा सदा सदा के लिए शात हो जाए, अन्यथा यह कभी न कभी हमे बहुत हानि पहुँचाएगा।"

हम्मीर को पवनसी के कथन मे सत्य का आभास हुआ, फिर भी वह तत्काल शात रहा। अभी राजनैतिक परिस्थितियाँ ठीक नही थी, अत किसी भी सामन्त या सरदार को रुष्ट करना उसके लिए अहित का कारण बन सकता था। हम्मीर ने सभी सामन्तो को शात कर दिया।

बारू ने हम्मीर की आज्ञा से अपना घेरा उठा लिया। जालोर की प्रजा मे छाया हुआ आतक मिट गया। प्रजा को जब विवाह के रहस्य का ज्ञान हुआ तब वह हर्षोत्फुल होकर खुशियाँ मनाने लगी। उन्होंने फूलो और मगल-गीतो से हम्मीर का स्वागत किया।

बेटी अपनी ससुराल चल पडी ।

स्त्रियो ने व्यथा भरे कठ-स्वर से विदाई गीत गाया । रानी का मन अवसाद से भर उठा, पर नववधू के ललाट पर भृकुटियाँ तनी हुई थी । उसकी वक्रिम-दृष्टि मे रोष था, प्रतिहिंसा थी ।

जब जालोर की सीमा समाप्त होने लगी तभी एक गुप्तचर ने पवन-सी को समाचार दिया कि अनगसिह जाता-जाता एक सामन्त की हत्या कर गया और उसकी बेटी का अपहरण कर भाग गया ।

१५

चैत्र का नया वर्ष लगा । नवीन वर्ष के आगमन से कैलवाडा मे संघषरत राजकीय सामन्त और भील प्रजा मे नए जोश और इतिहास की झलक दिखाई दी । लोग क्षण भर के लिए जीवन की सभी विषमताओ को विस्मृत करके कुल-देवता एकलिगेश्वर से प्रार्थना करने लगे कि यह वर्ष हमारे लिए मगलदायक हो ।

स्त्रियो मे इस माह के आगमन पर पृथक हर्ष था । उनकी गणगौर आने वाली थी । वे झीने-रग-बिरगे वस्त्र पहनकर पाँवो की झाँझरो को झनझनाती इधर-उधर गणगौर के उत्सव की चर्चा करने मे निमग्न जान पडती थी ।

राजनैतिक स्थिति भी सुधरी हुई थी । युद्ध की विभीषिका का भय कम हो चला था । हर क्षण हृदय को जलाने वाली आग कुछ ठडी पड गई थी । साधारण जनता का विश्वास था कि राजा मालदेव ने अपनी बेटी गंगारानी को ब्याही है, अत अब वे उनके साथ घात नहीं कर सकते । उनको अधिक तग नहीं कर सकते ।

वर्षों से [illegible] प्रजा मे नव-नव उल्लास की उर्मियो का आविर्भाव हुआ । [illegible] का सुख की लहर मिली । स्थान-स्थान मे

आकंठ डूबा जीवन क्षितिज-सागर से प्रत्यूष-वेला मे उदित होते भास्कर भगवान की भांति उन्मादित और प्रमुदित होने लगा। सामान्य प्रजा ने युद्ध रूपी अजगर की विषाक्त फुत्कारो से दूषित पवन-वीचियो मे अपरिसीम सतोष की सांस ली।

आनन्द, उत्साह और सन्तोष!

राज्य-ज्योतिषी ने नूतन वस्त्र धारण करके राणाजी को नया पचाग भेंट करते हुए कहा—"यह वर्ष आपके लिए अति लाभदायक और शुभ होगा।"

हम्मीर ने ज्योतिषी को दक्षिणा दी। उपस्थिति ने राणाजी की जय-जयकार की। हम्मीर ने सभी सामन्तो एव सरदारो को पुरस्कार बांटे। पवनसी, मेरा, अनगसिंह और कामदार मौजीराम। मौजीराम को पुरस्कार देते हुए हम्मीर ने उससे चेतावनी के स्वर मे कहा, "कामदार जी, आज से इतना ही याद रखें कि अब से आप चित्तौड के रक्षक और हितैषी हैं। अब आप राजा मालदेव के नहीं, राणा हम्मीर के चाकर हैं। अभी से आप का कर्म-क्षेत्र होगा—चित्तौड की स्वाधीनता।

मौजीराम ने अपनी तलवार की शपथ खाकर कहा, "राणाजी निश्चित रहे, इस दास का प्रत्येक पल आपके उत्थान और निर्माण मे ही व्यतीत होगा। मैं वह प्राणी हूँ जो केवल अपने स्वामी का हुक्म मानना ही अपने जीवन का परम धर्म मानता है। चाहे मेरे स्वामी सदा ही क्यो न बदलते रहे।"

तत्पश्चात हम्मीर रानी सोनगर के कक्ष मे गया। कक्ष के अग्र-प्रकोष्ठ मे रानी सूर्य-देवता के समक्ष केसरिया रेशमी पावन वस्त्रो से सज्जित अर्चना-वन्दना कर रही थी। उसके घने काले दीर्घ कुन्तल कटि-प्रदेश पर फैले हुए थे। उसके सुकुमार मुख पर ओज था।

हम्मीर विचारहीन-सा इसे कुछ देर तक देखता रहा। रानी पूजा समाप्त करके राणा के पास आई। उनकी पादुका-रज लेकर अपने ललाट पर लगाई और पूछा, "हुक्म?"

"नया वर्ष है, यह स्वर्णाभूषण भेंट करना चाहता हूँ।"

रानी के मुख पर सूखी-बुझी मुस्कान थिरक उठी।

हम्मीर का मस्तिष्क उसके मानस का मर्म समझ गया। रानी हीन-भावना और सस्कारो के विपुल सघर्ष मे अपने आपको अत्यन्त पीडित कर रही है। अत हम्मीर स्नेहसिक्त स्वर मे बोला, "तुम्हे अपने अतीत को बिलकुल भूल जाना चाहिए। और एक वृक्ष की नूतन कली की तरह नए जीवन मे अपने आपको विस्मृत कर देना चाहिए।"

"अपनी कायाकल्प करने की चेष्टा प्रचेष्टा मैं बहुत करती हूँ। सोचती हूँ, उस स्वामी के महान चरणो मे अपना जीवन उत्सर्ग कर दूँ, उसके एक-एक पल मे सावन की मस्ती भर दू, पर मुझसे ऐसा नही होता। मुझे हर घडी अपनी आत्मा प्रतारणा देती है। यह याद दिलाती है कि तुमने क्षत्राणी का गौरव विस्मृत करके अपने को पाप के पकिल मे फँसा दिया। आखिर मैं पुन विवाहिता द्।"

"तो क्या हुआ ?"

"ऐसा मैं नही सोच सकती।"

"तू बडी भोली है।" अगाध प्रेम से रानी को अपनी बाहुओ मे ले कर हम्मीर धीरे-धीरे बोला, 'तेरी आत्मा बडी निमल और शुद्ध है। उस पर पाप और कपट की अस्पष्ट छायाएँ तक नही ह। फिर भी तुम इतनी चिन्तातुर और दुखी हो रही हो, ऐसी बात नही है। अपने शास्त्रो मे स्त्री का दुबारा विवाह बुरे रूप मे होता था। व्यास की मा सत्यवती का विवाह एक बार नही दो बार हुआ। ऋग्वेद मे भी ऐसा उल्लेख है।—सोम ने सबसे प्रथम तुम्हे पत्नी रूप मे प्राप्त किया। तुम्हारे दूसरे पति गन्धर्व हुए और तीसरे अग्नि! मनुष्य सगज तुम्हारे चौथे पति है।—यह हमारे पावन शास्त्रो का कथन है। रानी! तुम्हारा विवाह अज्ञान मे हुआ है। अत तुम सर्वथा निर्दोष हो।"

रानी मौनगर निरुत्तर रही।

हम्मीर ने वह अलकार रानी के गले मे पहना दिया।

विस्तृत शैल-मालाओ की ओट से मरीची प्रभु ऊपर उठ आए थे। कोई भील अपना लोक-गीत गुनगुनाता हुआ मस्ती से जा रहा था। पवनसी बाहर बैठक मे हम्मीर की प्रतीक्षा कर रहा था। अनगसिंह से उस का वैर बंध गया था। एक जलन होती थी अनगसिंह को देखकर। दोनो ही जाति के गौरवान्वित सामन्त। परिवारिक विद्वेष के कारण पीढी-दर-पीढी का वैमनस्य था ही। हम्मीर के कठोर स्वभाव के कारण दोनो बोलते नही थे फिर भी एक-दूसरे को नीचा दिखाने के लिए प्रयत्नशील रहते थे। चाहते थे कि दोनो मे एक की समाप्ति हो जाय। पवनसी हम्मीर के हुक्म पर सर्वस्व निछावर करना चाहता था और अनग कभी-कभार हम्मीर की आज्ञा की अवज्ञा भी कर देता था। वस्तुत उसे युद्ध मे आनद आता था। युद्ध युद्ध युद्ध! उसके मस्तिष्क मे साधारण योद्धा के विपरीत युद्ध का उन्माद छा गया था। हर घडी और हर पल वह युद्ध के अतिरिक्त किसी की भी चर्चा नही करता था। जीवन मे अनेक कार्य कर्तव्य थे पर अनग को किसी मे कोई वास्ता नही। उसे केवल युद्ध की वीभत्स वार्ताओ को सुनने की इच्छा रहती थी। उसकी प्रवृति मे हिंसात्मक द्रोह की बू आती थी।

उसका ज्येष्ठ पुत्र तथा पत्नी भी उससे आतकित रहने लगी थी और वह पवनसी को देखकर उत्तेजित हो जाता था। तब वह सामती मर्यादाओ का उल्लघन करके पवनसी को कट्टर शत्रु की भाँति ललकारने लगता था और उसे अपमान-सूचक नामो से सम्बोधित करता था। बात-बात पर वह म्यान से अपनी तलवार निकाल लेता था और प्रहार करने को तत्पर हो जाता था। पवनसी ने कई बार उसे समझाया, उसके प्रयोजन-हीन उग्र मनोवृत्ति मे परिचित कराया, किन्तु अनग को बस एक ही बात की लगन थी कि पवनसी अपने धैर्य को लेकर उससे द्वन्द्व युद्ध कर ले।

विवश हो, पवनसी ने हम्मीर के सम्मुख सभी स्थिति को रखना चाहा। कल रात्रि के समय सामत चेतसिह के डेरे पर पातुरों के नृत्य मे अनगसिंह ने पवनसी का अपमान कर दिया। जब वह पातुर

को कुछ सिक्के देने लगा तब अनगसिंह ने उसे मना कर दिया । वह बेचारी अनगसिह की विकराल आकृति देखकर चुप हो गई । पवनसी विष का घूट पीकर रह गया । क्रोध उसे भी बहुत आया, पर श्रेष्ठ आयोजन मे व्यर्थ का रक्तपात न हो, अत मौन रहा । लेकिन उसे समस्त रात्रि निद्रा नही आई । वह विचलित-सा एक-एक क्षण व्यतीत करने लगा । मनोवेगो की तीव्रता के मारे कभी-कभी उसके चरण इतने शिथिल हो जाते थे जैसे उनमे जरा भी शक्ति नही ।

प्रभात हुआ और वह हम्मीर की सेवा मे उपस्थित हुआ ।

प्रहरी द्वारा उसके आगमन के समाचार पाकर हम्मीर ने त्वरापूर्वक उसे भेट करने का आश्वासन दिया ।

मागलिक वेला मे हम्मीर के कुछ काल अर्चना वदना मे व्यतीत होते थे । वह सूर्य देवता की प्रथम पूजा करता था और तत्पश्चात कुल-देवता की। इन सब कार्मो से निवृत होकर वह पवनसी के पास आया ।

पवनसी ने उठ कर उसका अभिवादन किया ।

हम्मीर ने गभीर मुस्कान से उसका स्वागत किया और मधुर स्वर मे बोला, "आगमन का कारण ठाकुर सा ?"

पवनसी कुछ नही बोला । उसका मस्तक नत हो गया और नेत्रो मे अवसाद की छायाए तैर उठी ।

"आप चुप क्यो है ?"

"निवेदन है कि मैं आपके अनेक अनुग्रहो से उपकृत हू । आपने इस बूढे पवनसी को पवनसी का पद प्रदान कराया है । किन्तु आपके इस आज्ञाकारी और स्वामिभक्त चाकर से कोई भूल न हो, इसके पूर्व वह आपको अपनी वास्तविकता से भिज्ञ करना चाहेगा ।" पवनसी एक पल के लिए रुका और पुन बोला, "अनगसिंह के राज्य मे [illegible] है । बार-बार अपमानित तिरस्कृत होकर कोई भी क्षत्रिय जीवित नही रहा है । वस्तुत तिरस्कार के विषाक्त वातावरण मे वह मान तेज का आदी नही होता । फिर मै कैसे यह सब सहन कर सकता हू कि अनगसिंह मेरा

वार-वार अपमान करे और मैं मौन बैठा रहूँ ? प्रत्येक गतिविधि की एक पाराकाष्ठा होती है। आखिर मैं भी क्षत्रिय हूँ।"

हम्मीर ने विनम्रता पूर्वक कहा, "आपका कथन औचित्य-पूर्ण है है किन्तु जो उद्भ्रात है, उसका क्या उपाय हो सकता है ?"

"यदि वह उद्भ्रात है तो उसे किसी कक्ष मे बन्द कर देना चाहिए। उन्मादग्रस्त, उदभ्रात तथा उद्दीप्त स्वभाव वाले प्राणियो को साधारण जन-जीवन मे रहने का अधिकार क्यो दिया जाता है ? क्या वे जन-जीवन को आपदा मे नही ढकेल सकते ?"

"लेकिन पवनसी आप यह अच्छी तरह जानते हैं कि अभी हमारी ऐसी स्थिति नहीं है कि हम किसी सामन्त को रुष्ट करें। ऐसा करना हमारे लिए घातक सिद्ध हो सकता है।" अपने शब्दो पर जोर देकर वह पुनः बोला, "अभी हमे वैयक्तिक रूप से न विचार कर समस्त जन्म-भूमि को लेकर सोचना चाहिए। कही ऐसा न हो कि गृह-दाह मे मातृभूमि की मुक्ति ही विलीन हो जाय।"

"मातृभूमि के लिए मैं अपने प्राण भी उत्सर्ग कर सकता हूँ राणा जी! गौरवमयी मृत्यु महाजीवन होती है। लेकिन अपमानित जीवन मृत्यु सदृश होता है और क्षत्रिय अनाहत जीवन से समादृत मृत्यु अधिक पसंद करेगा।"

हम्मीर क्षण भर के लिए पवनसी के तमतमाए मुख को देखता रहा। उसके नेत्रो मे स्फुलिंग की चमक थी। आन्तरिक व्यथा उसके युगल नेत्रो मे स्पष्ट लक्षित हो रही थी।

हम्मीर ने पवनसी को आश्वासन दिया, "भविष्य मे अनगसिंह तुम्हे कुछ भी नही कहेगा।"

पवनसी अभिवादन करके लौट आया।

हम्मीर का आमन्त्रण था मौजीराम को।

अपने धार्मिक अनुष्ठान से निवृत होकर मौजीराम ने हम्मीर के मन्त्र-णागृह मे प्रवेश किया। हम्मीर अभी अपने कर्ण की स्वर्ण-बालियो को निष्प्रयोजन ही स्पर्श कर रहा था। मौजीराम ने अभिवादन किया और हम्मीर के चिरायु होने और उसके पृथ्वी विजयी होने की कामना की।

हम्मीर का संकेत पाकर मौजीराम कलापूर्ण प्रस्तर-पीठिका पर बैठ गया और हम्मीर के हुक्म की प्रतीक्षा करने लगा।

हम्मीर ने एक दीर्घ श्वास छोड कर कहा, "तुम अब हमारे सर्वेसर्वा हो। अमात्य ही नही महामात्य भी तुम हो। मैं एकलिंगेश्वर का दीवाण हूँ और तुम मेरे। मुझे यह भी विश्वास है कि तुम एक स्वामि-भक्त और सच्चे भृत्य के कर्तव्यो मे भलि-भाति परिचित होगे। नीति कहती है भृत्य वही सच्चा भृत्य है जो अपने स्वामी की अत्यन्त निष्ठा से आज्ञा पालन करे, चाहे उसके स्वामी सदा परिवर्तित क्यो न होते रहे पर भृत्य का धर्म स्वामी के प्रति शुद्ध हृदय मे सेवाभाव रखना ही है।"

मौजीराम व्यंग-मिश्रित मुस्कान अपने अधरो पर बिखेरता हुआ शनैः शनैः स्वर मे बोला, "मैं अपने कर्त्तव्य और धर्म को खूब समझता हूँ। मुझे कर्त्तव्य विमुख हो कर जीवित रहने मे आनन्द नही है। मैं यह भी जानता हूँ—मुझे चित्तौड को आपके हाथो सौंपना है। अवसर की प्रतीक्षा है। अवसर की प्राप्ति पर चित्तौड की मुक्ति अवश्यम्भावी है।

'तुम्हारी मन्त्रणा हममे भी अडिग भावना भरती है। लेकिन यह सब कब तक होगा?' विधवा रानी के आगमन पर सीसोदिया वंश के सभी क्षत्रिय असन्तुष्ट है। उन्हे यह कदापि पसन्द नही कि एक विधवा राज-कन्या उनके पावन और देव-पद तुल्य सिंहासन पर विराजे। किन्तु केवल मेरे इस आश्वासन पर वे सब शान्त है कि यह सब देवी मा बरवड़ी के

आदेशनुसार हो रहा है। देवी माँ की अवज्ञा का तात्पर्य यह है कि हमारा विनाश। और देवी माँ ने हमे पाँच सौ अश्वो की सहायता देकर हमारे सभी सरदारो को उपकृत भी कर दिया है।

मौजीराम अल्पकाल तक मौन बैठ रहा। वह हम्मीर की उद्विग्न आकृति को ध्यानपूर्वक अध्ययन कर रहा था। एक बार उसने यह भी सोचा कि वह हम्मीर के सम्मुख रानी से सम्बन्धित समस्त तथ्यो का उद्घाटन कर दे। उन्हे यह विश्वास दिला दे कि रानी विधवा नहीं है। यह केवल राजनैतिक चाल-मात्र थी। इस चाल का सूत्रधार भी स्वय वह ही है। किंतु मौजीराम हर कर्म की प्रतिक्रिया से पूर्व परिचित रहता था। अपनी तीक्ष्ण मेधा के बल पर वह हर घटना के तुरन्त और बहुत देर से प्राप्त प्रतिफल को जान लेता था। वह यह भी समझता था कि वीर लोगो का विवेक आवेशपूर्ण और व्यग्र होता है। अविश्वास की हल्की छाया उनके विवेक पर हर घडी नाचती रहती है। अगर वह उन्हे कहेगा भी कि यह राजनैतिक चाल है तो भी हम्मीर उस पर विश्वास नही करेगा। उसकी इस बात को नई चाल ही समझेगा। सोचेगा कि उसकी राजकुमारी उपेक्षित व विस्मृत जीवन व्यतीत न करें, यह सब उसके लिए हैं। दूसरा, हम्मीर की मालदेव के प्रति घृणा और प्रतिशोध की भावना भी कम हो जायगी।

अभी इस कुकृत्य से यहाँ का बच्चा-बच्चा मालदेव से गहरी घृणा करता है। और तो और, स्वय रानी जी अपने पिता से भीषण प्रतिशोध लेने के लिए तत्पर हैं। फिर इस सत्य के उद्घाटन से क्या लाभ ? क्या पता कि इसी बात को लेकर कोई नई समस्या उपस्थित हो जाय।

उसका मौन हम्मीर के लिए असह्य हो गया। हम्मीर ने ध्यान मग्न मौजीराम को कहा, "आपने मेरे प्रश्न का उत्तर नही दिया।"

"प्रश्न का उत्तर ही सोच रहा हूँ। राणाजी, मेरा अनुरोध है कि इस समय हमारी स्थिति सुदृढ नही है। मालदेव जालोर से विपुल सम्पत्ति चित्तौड भेज रहा है। चित्तौडवासियों द्वारा असहयोग की भावना बहुत

सफल सिद्ध हुई है। भविष्य मे यह आदोलन हिंसाहीन-युद्ध मे अत्यन्त काम आएगा और क्रांति का अमोघ वस्त्र बन जायगा। इससे एक बात का स्पष्ट पता चलता है कि धीरे-धीरे चौहानो की शक्ति क्षीण ही होगी।"

"प्रतीक्षा की एक सीमा होती है। आखिर हम लोग कब तक पहाडी चूहो का जीवन व्यतीत करेगे। इस कैलवाडा मे बैठकर हम अपने जीवन के महनी ध्येय तक नही पहुच सकते।"

"मैं जानता हूँ पर इससे सुदृढ सुरक्षा और कहाँ हो सकती है? यहाँ हमे अपनी रक्षा की चिंता नही। चिंता है—चित्तौड की मुक्ति की।" मौजीराम देर तक विचारता रहा। उसकी बडी-बडी गहरी आंखो मे अन्तस का गाभीर्य स्पष्टतया झलक रहा था।

"तुम क्या सोच रहे हो?" हम्मीर ने प्रश्न किया।

"चित्तौड की मुक्ति अब शक्ति से नही, नीति से ही हो सकती है। मेरा ऐसा विचार है कि कोई ऐसा अवसर आए जब हम अप्रत्याशित चित्तौड पर आक्रमण कर दे।"

"लेकिन चित्तौड के सुदृढ द्वारो को कौन खोलेगा। गढ की प्राचीरो को सहजता से नही लाघा जा सकता है। फिर गढ पर्वत पर है। उसके कई द्वार है। फिर हम चित्तौड के भीतरी भाग से भी परिचित नहीं है।

"इसकी चिंता आप छोड दीजिए।"

"क्यो?"

कुटिल मुस्कान थिरक गई मौजीराम के अधरो पर, "आप यह जानते ही है कि मैं हर माह चित्तौड वहां के सैनिको के लिए उनकी तनख्वाह लेकर जाता था। वहा का हर अधिकारी मुझसे परिचित है और मेरा सम्मान विश्वास भी करते है। कदाचित मुझे दगाकर व सब विश्वास करते।

"लेकिन अब वे सभी यह जानते है कि आप हमारे चाकर है। भला

मालदेव का बेटा जैसा आपका क्यो विश्वास करने लगेगा ?"

"जैसा मेरा अविश्वास नही कर सकता। फिर जो व्यक्ति आजकल उनके लिए तनख्वाह लेकर आता होगा, मैं उसी को अपना बना लूंगा। अगर अवसर मिल गया तो हम उसकी हत्या भी कर सकते है और राजा मालदेव का प्रवेश का आज्ञा-पत्र भी प्राप्त कर सकते हैं।"

"खूब, मौजीराम खूब। यह काम बड़ी सहजता से किया जा सकता है।"

"शीघ्रता की आवश्यकता नही। आप चित्तौड तक पहुंचेगे कैसे ? मुझे वहाँ तक पहुँचने का कारण चाहिए।"

"कारण क्या हो सकता है ?"

"विचारणीय है।"

दोनो मौन हो गए।

सूर्य देवता शृ ग-श्रेणियो को स्पर्श करके वातायन द्वारा उन दोनो के सन्निकट अठखेलियाँ करने लग गया था। सूर्य के पूर्वी ओर मेघ का बडा खण्ड अपनी काया को विस्तृत कर रहा था। लगता था कि बूंदा-बूंदी न हो जाय।

रसोई से एक दासी आई। हम्मीर के दुग्धपान का समय हो गया था। हम्मीर दासी के आगमन का हेतु समझ गया। उसको जाने का संकेत करके वह बोला, "हाँ मैं अभी आ रहा हूँ।"

दासी चली गई।

हम्मीर ने कहा, 'एक समस्या का और समाधान चाहता हूँ।"

"फरमाइये महाराज।"

"इस अनगसिंह ने सबको तग कर रखा है। उन्मादग्रस्त प्राणी की तरह यह युद्ध-युद्ध चिल्लाता रहता है। उसे अपनी शक्ति पर इतना अभिमान हो गया है कि वह प्रत्येक सरदार का अपमान कर देता है। यह अक्षम्य और अशांति का प्रतीक है। हम उसे स्पष्ट कहना भी नही चाहते और उसे उचित पथ पर लाना भी चाहते हैं।"

"यह साधारण बात है।"

"कैसे ?"

"इसे थोड़े से सैनिक देकर कह दिया जाय कि वह शत्रुओं के साथी एवं समर्थकों को लूटना आरम्भ कर दे। वह उन सामन्तों से छुप कर लड़े जो आपकी आधीनता स्वीकार नहीं करते हैं। ऐसा करने से उसकी शक्ति का सही रूप से उपभोग हो जायगा तथा आपकी हर घड़ी की चिंता भी मिट जायगी।"

मौजीराम की यह बात हम्मीर को बहुत पसन्द आई। उसने तुरन्त एक प्रहरी को अनगसिंह के घर भेजा। मौजीराम चला गया था। हम्मीर अपने कक्ष में चिन्तातुर व अवशायित था। चाचा की अंतिम इच्छा उसे क्षण भर के लिए सुख की साँस नहीं लेने देती थी। हर घड़ी उसके समक्ष चित्तौड़ की मुक्ति का प्रश्न नाचा करता था।

दासी ने आकर उसे सूचना दी कि ठाकुर अनगसिंह जी मंत्रणागृह में आपकी प्रतीक्षा कर रहे हैं। हम्मीर तुरन्त वहाँ गया। ठाकुर ने अपने स्वामी का आदर सहित अभिवादन किया। पूछा, "हुक्म राणाजी ?"

हम्मीर आश्वस्त होकर बैठ गया। उसे भी बैठने का संकेत किया। अनगसिंह की विशाल देह उस प्रस्तर पीठिका में नहीं समा सकी जिस पर मौजीराम बैठा था। अतः अनगसिंह एक पाषाण चौकी पर बैठ गया।

"तुम्हें युद्ध में आनन्द आता है। तुम्हारे जीवन का सर्वोपरि सत्य युद्ध है। तुम चाहते हो कि मैं युद्ध के गौरव और निनादों के मध्य सो जाऊँ? शान्ति में जीवन व्यतीत करना तो तुम्हारी दृष्टि में कापुरुष होना है। अब मैं तुम्हें एक जिम्मेवारी सौंप रहा हूँ।"

"हुक्म कीजिए राणा जी ?"

"तुम यह अच्छी तरह समझते हो कि धन के बिना हम अपनी शक्ति को सुचारु रूप से संगठित करने में सर्वथा असमर्थ हो रहे हैं।

चौहानो के निरकुश सैनिक हमारी प्रजा पर अत्याचार करते हैं, इसलिए हमने यह निश्चय किया है कि तुम्हें कुछ सैनिको का नेता वनाकर शत्रुओ से लोहा लेने के लिए भेज दें। इससे तुम्हारी युद्ध पिपासा को शमन मिलेगा तथा तुम्हारी क्षीण होती शक्ति को सही पथ मिलेगा।"

अनगसिह ने विचित्र भाव-भगिमा से निर्जीव प्राचीर को देखा। हम्मीर उसकी इस विचित्र दृष्टि का तात्पर्य नही समझ सका। इसके अतिरिक्त जव अनगसिह के अधरो पर अर्थ-भरी मुस्कान देखी तव उसके मन की जिज्ञासा वढ गई।

"तुमने उत्तर नही दिया।'

"राणा जी आपका हुक्म सिर-आंखो पर। किन्तु इतना निवेदन है कि आप मेरी शक्ति को युद्ध मे व्यस्त करके क्षीण करना चाहते हैं सो वह क्षीण नही होगी। वह युद्ध मे और उन्मत्त होगी, और सवल होगी, और निशक होगी। जिस व्यक्ति को युद्ध मे आनन्द, मृत्यु मे हर्ष और चीत्कारो मे सगीत की स्वर लहरी सुनाई पडती है, उस व्यक्ति को आप इस तरह क्षीण और दुर्वल नही कर सकते। उसे वस्तुत आप क्षीण करना चाहते हैं तो किसी काल-कोठरी मे वन्द कर दीजिए। घोर एकात और नीरवता मुझे स्वत ही क्षीण कर देगी।" अनगसिह के स्वर मे तनिक व्यथा का समावेश हो गया, "अगर आपने मेरे वल को क्षीण करने के लिए यह प्रपच रचा है तो मुझे हार्दिक सताप है। अगर राणा जी को मेरी युद्ध की प्रवृत्ति से किसी तरह की शका है तो मैं अपने हर्षोल्लास को समाप्त करके उनके चरणो मे अपना जीवन अर्पण कर दूंगा। राणा जी मुझे पतित न समझें। पवनमी से मेरी कोई शत्रुता नही है, फिर भी न जाने क्यो मेरा विवेक उसे देखकर वाचाल हो जाता है। मुझे ऐसा प्रतीत होता है कि वह मेरा प्रतिद्वन्द्वी है। एक अनावश्यक जलन है इसके प्रति मेरे मन मे। किन्तु इसका अर्थ आप यह नही लगा सकते कि मैं मेवाड का अहित चाहता हूँ। मैं राणा जी की वेदना से अनभिज्ञ नहीं हूं। स्वभावजनित दुर्गुणो के कारण मैं आपको

पीडित अवश्य करता हूँ किन्तु जहाँ देश की मुक्ति का प्रश्न है वहाँ अनगसिंह अपने सिर को हथेली पर रखे हुए रहता है।"

हम्मीर भावविभूत हो गया। अपनी दुर्भावना उसे तडपा गई। वह अनगसिंह के विशाल पुष्ट कन्धो को मजबूती से पकडता हुआ बोला, "नही ठाकुर, नही। ऐसा हीन विचार मेरे मन मे नही आ सकता। पूर्व कथन मे मेरी दुरभावना नही थी। शब्द का रूढ अर्थ मत लगाओ। मैंने तुम्हे शत्रुओ के दमन हेतु ही यह काय भार सौंपा है। मैं चाहता हूँ कि तुम अजातशत्रु बन जाओ। अपनी अजेय शक्ति से चौहानो के दांत खट्टे कर दो। इतना परेशान कर दो कि वे विचलित हो उठे।"

"ऐसा ही होगा। आपकी आज्ञा को शिरोधार्य मान कर मैं शत्रुओ को छल-बल और कौशल से आघात पर आघात पहुँचाता जाऊँगा।"

"ठाकुर! तुम चित्तौड के वीर-शिरोमणि हो। तुम्हारे ही बल बूते पर हम राणा बने हुए हैं। क्या अच्छा होता कि तुम मे युद्ध की प्रवृत्ति कुछ कम होती और तुम शाति से, नीति से, किसी समस्या का समाधान ढूढते।"

"हर मनुष्य की अपनी पृथक मान्यता होती है। मान्यता के विपरीत चलना उसकी अडिगता और व्यक्तित्व की निर्बलता सूचित करती है, अत इसके लिए मुझे विवश न करें। मैं शुभ-मुहूर्त मे चुने हुए वीरों को लेकर यत्र-तत्र-सर्वत्र फैल जाऊँगा।"

अप्रत्याशित किसी नारी का कठ स्वर सुनाई पडा—

आज घरे सासु कहे, हरख बधावण काय
बहू बलवा हूंस, पूत मरवा जाय

सुत मरिया हित देस रे, हरख्यो बंधु समाज
मा नह हरखी जनमदे, जतरी हरखी आज।

धरती के गीतो को। यहाँ की नारी-जाति की महानता को। सास कह रही है कि आज मुझे अचानक हर्ष क्यो हो गया। क्योंकि आज उसकी पुत्र वधू सती होने को तत्पर हो रही है और उसका बेटा समर-भूमि मे लडने को जा रहा है। बेटा देश के लिए मर मिटा, कुल मे, समाज मे आनन्द मनाया जा रहा है। और माँ! कुछ न पूछो, वह पुत्र को उत्पन्न करके इतनी प्रसन्न नही हुई जितनी उसकी मृत्यु पर हुई है। और आपके इस सेवक ने जीवन मे मृत्यु के आलिगन के गीत भी सुने हैं। समर के तूर्यनाद और मारू राग का उसने जीवन भर रसास्वादन किया है। उसके अग-अग मे जूझने की मनोकामना बस गई है। अब उसे कुछ भी कहना व्यर्थ है। इसके लिए मैं आपसे क्षमा भी चाहता हूँ।"

हम्मीर ने पश्चाताप भरे स्वर मे कहा, "मुझे दुख है कि मैंने तुमारे हृदय पर आघात पहुँचाया। अब तुम जा सकते हो। मैं शीघ्र ही तुम्हारे प्रस्थान का प्रबन्ध करूँगा।"

हम्मीर अपने विश्रामगृह मे आया।

अनग पर निराधार आक्षेप लगा कर उसने ठीक नही किया, किन्तु इससे एक बात स्पष्ट हो गई कि अनग के मन मे किसी प्रकार की दुर्भावना नही है। उसके मन की गहराइयो के सत्यासत्यो से वह परिचित हो गया। इस वार्तालाप से यह स्पष्ट हो गया कि उसके मन मे कोई कलुष नही है। अपनी वीरता का उसे तनिक भी दभ नही। वह सगठन की भावना से परे व्यक्ति की महानता को ही मानता है और इसमे ही निमग्न रहता है। वह प्राण प्रण से उसका दावेदार है।

पायलिया गीत गाती हुई राणी उसके कक्ष मे आई।

हम्मीर ने अपने गम्भीर नयन उठाए।

नेत्राम्बु से रक्तिम हुए कपोल, उन्मत्त मुख और उस पर उन्मत्त यौवन का आकर्षण! पाषाण-प्रतिमा सी वह खडी हो गई।

"क्या बात है राणी?"

"कुछ नही ।"

"तुम उदास होकर मेरी व्यथा को बढा देती हो । क्यो नही तुम उत्फुल पारिजात की सदृश हास्य बिखेरती । सर्वांग सुन्दरी सिसौदिया-कुल महिमा गरिमा तुम अपनी रोनी सूरत से मुझे निरुत्साहित करती रही तो फिर चित्तौड की मुक्ति अन्धेरे मे जुगनू की तरह क्षणिक आभा दिखाएगी और लुप्त हो जायगी । मैं तुम्हारी वेदना मे अपनी समस्त प्रेरणाओ को समाप्त कर दूंगा । क्योंकि मुझे तुम्हारे मुख पर मधुर मुस्कान और दृष्टि मे नवजीवन का आह्वान चाहिए ।

महाराणी ने हम्मीर के चरण स्पर्श करके कहा, "दासी को क्षमा कीजिए नाथ । आज मैं सोलह शृंगार कर रही थी । समीप खडी थी विधवा दासी जमना । सूना ललाट और सूनी माग । पता नही, मेरी भावना क्यो बदल गई । दर्पण मे अपना मुख देख रही थी । अपने अपरिसीम यौवनाभिमुख रूप पर स्वयं मुग्ध थी । सम्मोहनमयी सी, स्तब्ध सी खडी थी । अप्रत्याशित अपने रूप को विरूप होते देखा । लगा कि यह शृंगार और सज्जा एक आवरण मात्र है । मूल सत्य है— वैधव्य ! जमना का भेष । बस मैं अवाक् हो गई । विस्मृति के गह्वर मे सुसुप्त स्मृतियां सजग हो उठीं और एक काल्पनिक सचित्र कथा मेरे मानस पटल पर घूम गई । एक छोटी सी गुडिया है, उसमे मेल चन्द आदमी सन रहते हैं, आमोद-प्रमोद के लिए वे उसका विवाह कर देते हैं और बेचारी गुडिया सदा-सदा के लिए पराई हो जाती है । फिर उसका गुड्डा मर जाता है । गुडिया का अबोध मन मृत्यु के रहस्य को नहीं समझ पाता । धीरे-धीरे वह सब कुछ भूल जाती है । उसका विवाह फिर हो जाता है । नाथ ! इसमें उस गुडिया का क्या अपराध है ?"

"रानी ! अपने मन से सभी शंकाओं को निकाल दो । मैं तुम्हें उतनी ही पवित्र मानता हूँ, जितनी अग्नि है । व्यर्थ मे दुर्भावनाओं द्वारा आत्मपीडन का नाम देना ठीक नहीं है ।"

हँसने की नाट्य चेष्टा करती है । लेकिन [illegible] आलिंगन मे

आवद्ध होते ऐसा प्रतीत होता है कि मैं कोई पाप कर रही हूँ।"

"छि-छि, यह वचपना है। यह सव निरर्थक विचार हैं।" हम्मीर ने उसको अपनी वाहुओ मे आवेष्टित करके कहा, "तुम मगलमुखी हो। तुम्हारा आगमन यहाँ के लिए शुभ होगा। अरे, आज मैं तुम्हारे लिए हिरन मारकर लाऊँगा। हिरन का मांस वडा स्वादिष्ट होता है।"

राणी ने रोमाचित दृष्टि से हम्मीर को देखा।

"मुस्कराओगी नही, रानी! विधाता का सौन्दर्य भण्डार विराट है। उस भण्डार का शेष आता ही नही। फिर भी उस भण्डार की जो अपूर्व सौण्दर्य-राशि थी, उस राशि से तुम्हारी रचना हुई है। तुम्हारे सामीप्य भाग से मेरे हृदय मे असयम का अहर्निश ताण्डव होने लगता है और तुम्हारी ईषत मुस्कान के लिए मेरे प्राण उत्सर्ग होने के लिए व्याकुल हो जाते हैं।" उसका स्वर वदल गया, "मैं मिथ्या भाषण नही करता। मैं शत-शत जन्मो मे भी तुम्हारी कामना करूँगा। तुम्हारे पावन मुखरित यौवन को अपने प्रेम का आदर्श मानकर जीवन को सार्थक करूँगा।"

राणी अनिमेष नयनो से साभिलाष होकर हम्मीर को देख रही थी। निश्चय ही वह उसे दुर्वार भावना से प्रेम करता है। उसकी कामना मे एक तारुण्य की उत्तेजना और तीव्रता है। वह चित्र लिखित-सी हम्मीर की अकशायिनी होने लगी। उसका समस्त गात चचल हो उठा।

हम्मीर ने स्नेहिल स्वर मे कहा, "राणी! अतीत की सम्पूर्ण रूप से विस्मृति ही नवीन की आधार-शिला है। व्यतीत से आक्रात होकर प्रकृति जनित सुखो की उपलब्धि न करना और अर्थहीन आत्म-पीडा मे जलना तनिक भी श्रेयस्कर नही। केवल आत्म-वचना है। केवल स्वय से छल है। फिर हम आस्तिक हैं। हम किसी कृत्य को ईश्वर के सकेत द्वारा पूर्ण होना मानते हैं। हम कण-कण और अणु-अणु को उसी विधाता की शक्ति स्वीकार करते हैं। जब मेरा और तुम्हारा गठवधन ईश्वरीय इच्छा से हुआ है तब हमे उसके लिए चिन्ता नही करनी

चाहिए ।"

राणी ने सजल नेत्रों से हम्मीर को देखा । उसकी मुखाकृति की उदासी कम होती गई । धीरे-धीरे वह हम्मीर की बातों में खो गई ।

१७

इन्द्र के दीपक के समीप शलभ मंडरा रहा था । पवन का मन्थर मन्थर झोंका दीप की लौ को विकम्पित करके राणी के मन में कम्पित उद्वेग की सजना कर रहा था । अप्रत्याशित शरत्कालीन शुभ्र मेघों में सौदामिनी रूपी हँसी बिखरी । राणी ने उठकर बाहर की ओर झांका । घोर तिमिर का भयंकर आवरण छाया हुआ था । उस तिमिर को और भी गाम्भीर्य प्रदान कर रहा था वहाँ का सन्नाटा ।

राणी ने अपनी दासी को पुकारा । नतमस्तक दासी खड़ी हो गई ।

"दीवाण जी कब पधारेंगे ?"

"मुझे पता नहीं राणी सा ।"

"शीघ्र पता लगाकर आओ ।"

"दासी चली । त्वरा से पुन लौटी ।

"दीवाण जी पधार रहे हैं ।"

हीरक और नक्कासीदार हार। पाँवो मे नूपुर। अधरो पर ताम्बुल की मनोहारी अरुणिमा। खजन से नयनो में अजन का आकर्षण। भाल पर चन्द्र-विन्दु और सीमन्त-रेख मे सिन्दूर।

हम्मीर ने शयन-कक्ष मे प्रवेश किया।

"ओह, यह रूप !"

राणी सकोच से सिहर उठी। उसने अपने युग्म कर कमलों में अपने मुख-मधुप को आच्छन्न कर लिया।

अपने अन्तस के विपुल वेग को सयत करके हम्मीर ने क्षीण स्वर में कहा, "वदली का चन्द्र अधिक सुन्दर और उन्मादक होता है।"

राणी लाड और सकोच से अपने आप मे सिमट कर ढोलिए (पलग) के एक कोने मे वैठ गई। नूपुर मद-मद भन-भन कर झकृत कर उठे। हम्मीर मादक मुस्कान लेकर उसकी ओर अग्रसर हुए।

घूंघट में रानी ने अपनी पलकें उठाई और फिर वन्द कर ली। हम्मीर ने मुस्करा कर कहा, "राणी ! हमे ताम्बुल नही खिलाओगी !"

कह कर हम्मीर ने समीप रखे रजत दीवट पर रखे दीपक को और ज्वलित कर दिया। सारी शय्या दुग्ध धवल प्रच्छदपट (चादर) से आच्छादित थी। राणी का मुख ज्वलित आभा-सा मुखर हो उठा।

"सकोच और लज्जा मे तुम्हारा रूप और निखर उठा है। सचमुच सकोच सौन्दर्य को वृद्ध करता है और उसकी श्री का अलकार वन जाता है। चलो हमे ताम्बुल दो।"

राणी ने लघु रजत थाल पर ताम्बुल रखकर हम्मीर को दिए। ताम्बुल को चबाकर हम्मीर वोला, "राणी ! आज क्या वात है ! आज तुम सरोवर मे खिली कमलिनी की सदृश लग रही हो ?"

राणी ने पतद्ग्रह (पीकदान) हम्मीर के समीप रख दिया। उसने इत्रदान लेकर हम्मीर के वस्त्रो को सुगन्धित किया।

हम्मीर ने उसे अपने सन्निकट खींच कर कहा, "तुम आज सचमुच उर्वसी वन गई हो। सच-सच कहो राणी, क्या वात है ?"

रानी विमुग्ध-सी शनै -शनै बोली। वह अपने घूंघट-पट को आहिस्ते आहिस्ते उठा रही थी, मानो घटा से आछन्न चद्रमा बाहर निकल रहा हो और उसकी प्रभा से जिस तरह ससार आलोकित होता है, उसी तरह रानी के आलोकित रूप से विकीर्ण अदृश्य रश्मियो से वह कक्ष जगमगा उठा।

"आप जानते हैं। बहुत पुरानी कथा है। धरित्री के कलुषित भाग पर एक उपेक्षित और अभागी राजकुमारी रहती थी। विधाता के प्रकोप से वह शैशव से ही अभिशप्त थी। उसका जीवन हर पल जलने वाला अगारा था। आश्चर्य की बात इस पर यह थी कि वह यह भी नही जानती थी कि आखिर उसका दोष क्या है? वह अन्य युवतियो के साथ सम्मिलित होकर आमोद-प्रमोद मे तन्मय रहती थी। उसका स्वाभाविक कायिक विकास हुआ। तब उसका प्रेम एक अपरिचित सार्थवाह से हो गया है। वह सार्थवाह के लिए हर घड़ी बेचैन रहा करती थी। हाट के पूर्वी ओर एक लघु वीथिका थी, उस वीथिका के पास एक प्राचीन खँडहर था। वह खडहर उनके अभिसार का स्थान हो गया। वह वियोगिनी-सी उन्मत और सतप्त होकर उसके चद घड़ी का वियोग सहती थी। उन घड़ियो मे उसका मुख मुरझाए फूल की तरह अनाकर्षक और रुग्ण-सा पीतवर्ण हो जाता था। लेकिन ज्यो ही वह अपने प्रेमी को देखती त्यो ही उसके अग अग मे विद्युत-सी चपल चचल स्फूर्ति नाच उठती थी। उसकी आँखे आनन्द से प्रदीप्त हो जाती थी। चित्त प्रसन्नता की अतिरेक मे गद्-गद् हो उठता था। वे दोनो

कूल आचरण करके महापाप किया है और साथ मे उससे उस रहस्य को छिपा रख कर उसने उसके मन के शेष स्नेह को भी समाप्त कर दिया है। अब बेचारी वह हतभागिनी उन्मादित हो गई। वह उस आघात को नही सह सकी। विक्षिप्ता-सी भटकने लगी और एक दिन समस्त सृष्टि की घृणा, उपेक्षा और दुत्कारो ने उसे आत्महत्या के लिए विवश कर दिया। उसने अपनी इह-लीला समाप्त कर दी। सार्थवाह ने सात्वना की सांस ली। समाज ने गौरव मे मस्तक ऊंचा किया और धर्म नृत्य के भेष मे उल्लसित हो गया। लेकिन क्या वह दोषी थी ? उसका अज्ञान क्षम्य नही था ?"

हम्मीर ने कहा, 'मैं वह सार्थवाह होता तो मैं उस प्रेमोन्मत युवती को अपने हृदय-सिंहासन पर बिठाता। यदि राजकुल इसे राज्य नियम के विरुद्ध बनाते तो मैं उसके लिए राज्य-सिंहासन और राज-मुकुट को सहर्ष त्याग देता और उसे अपनी पलको मे बिठाकर सुदूर किसी ऐसे प्रदेश मे चला जाता, जहाँ वह और हम शांति और सुख से रहते। वहाँ मैं उसकी और अपनी सन्तान को पाल कर उसे एक महान ओजस्वी और मेधावी योद्धा बनाता।"

राणी के मुख पर उज्ज्वल कमनीयता दीप्त हो उठी। उसकी दृष्टि मे भक्ति-जनित पावन श्रद्धा ने जन्म लिया। वह हम्मीर के पार्श्व मे शायित होकर हल्के स्वर मे बोली, "चित्तौड की मुक्ति मेरे जीवन का उद्देश्य है।"

"तुम चिन्ता क्यों करती हो ? बरबड़ी देवी माँ के कथन के अनुसार तुम्हारा आगमन शुभ है।"

"दीवाणी जी ?"

"क्या है ?"

"कुछ नही ?" मधुर स्मिति थिरक उठी रानी के अधरो पर।

"स्मित रेखा कह रही है कि कोई रहस्य है।"

मादक अँगड़ाई के साथ राणी ने करवट बदली। उसका उत्तरीय

राणी का आह्लादकारक मुख लाल आभा से आभासित हो उठा। नेत्र नत हो गए और उसने अपने मुख पर घूंघट डाल कर इतना ही कहा, "यह कहानी है नाथ, यह कहानी है।"

सगीत झकृत होकर शाश्वत सुख की सर्जना करता है, ठीक उसी प्रकार हम्मीर ने अत्यन्त सुकुमारता से कहा, "कौन तुम्हे अमगल-सूचक कहता है ? तुम महादेवी की तरह पवित्र और शुभ हो। मेवाड की राज-माता और सिसौदिया-कुल-ललना।"

१८

प्रात काल सूर्य के प्रथम दर्शन के पश्चात हम्मीर पुन शयनकक्ष मे गए। धवल उज्ज्वल प्रच्छदपट (चादर) पर राणी सोई हुई थी। निद्रा में उसकी तन्वी अग-लता झीने वस्त्रो मे वडी मनोहारी लग रही थी। अविकसित पलक-प्रसून अपनी प्रभा-श्री विखेर रहे थे। स्वाभाविष्ट सुख-मय प्राणी सी वह मुस्करा रही थी।

हम्मीर ने दासी को पुकारा।

दासी ने आकर कहा, "वडो हुक्म।"

हम्मीर ने कहा, "राणी सा जव जागे तव हमारा उन्हे प्रणाम कह देना।" दासी ने उन्हे अर्थ-भरी दृष्टि से देखा पर वह इस प्रभात प्रणाम का रहस्य नही जान पाई।

मन्त्रणागृह मे पहुँचते ही उसने मौजीराम को यह शुभ-सवाद सुनाया। मौजीराम के अधरो पर सदा की तरह वही रहस्य भरी मुस्कान धावित हो गई। अपने नेत्रो को ऊपर की ओर उठाकर वह बोला, "विजय-श्री स्वय हमारे पास आ रही है। शुभ लक्षण शुभ लक्षण।"

"हाँ मौजीराम, शुभ लक्षण है। लेकिन मैं जव तक मालदेव से अपने पूर्वजो का प्रतिशोध नहीं लूंगा, तव तक मुझे चैन नहीं पडेगा।"

"प्रतिशोध ! दीवाण जी, वह देखिए, नया सूर्य। आप समझते हैं कि क्या हम सदा यहीं पर्वत मालाओं पर पड़े रहेंगे। अब मैं एक बार फिर असहयोग आन्दोलन को समाप्त करता हूँ?"

"क्यों?"

"एक नई चाल चलने के लिए।"

"मैं आपसे सहमत नहीं हूँ। मैं इस आन्दोलन को और बल दूंगा। घर-घर में शंखनाद फूंकूंगा कि अपने प्राण दो पर सहयोग न दो!"

"लेकिन उससे शत्रु सावधान हो जायगा। वह सुख में प्रमादित नहीं होगा और इससे हमारी नीति असफल सिद्ध हो सकती है।"

हम्मीर ने अपनी पैनी दृष्टि मौजीराम पर डाली। विहँस कर वह बोला, 'नहीं कामदार मैं एक बार उत्पात मचाना चाहता हूँ। असहयोग और वह अनगसिंह द्वारा। मैं चाहूँगा कि एक बार जैसा, हरिसिंह और अन्य चौहान बौखला उठे। तब आप उनके पास जाएँ और उनसे क्षमा-याचना करके उन्हें धनराशि भेंट करें और यह भी प्रार्थना करें कि हम्मीर को अपने दुष्कृत्यों पर पश्चाताप है। और और ?"

आ रही थी ।

जीवन ने सब वस्तुओ को हम्मीर के चरणो मे अर्पण करते हुए कहा, "पिताजी ने आपको अपनी यह पहली सौगात भेजी है । यह सिर देश-द्रोही महीपसिंह का है । यह गुप्तरूप से उस बात का प्रचार कर रहा था कि हम्मीर इस सिंहासन का वास्तविक अधिकारी नही है । वह सामन्त है । उसने एक विधवा से व्याह करके सूर्यवंशियो की मान-मर्यादा को भंग किया है । वह नृशंस और निरकुश है । पिताजी ने उसे द्वन्द के लिए ललकारा । बडा घमासान द्वन्द्व युद्ध हुआ । पिताजी को कई सख्त चोटें आईं लेकिन महीप उसके वार मे नही बचा ।

रक्त-स्नात सिर सौगात की वस्तु की तरह हम्मीर के समक्ष पडा था । मौजीराम ने तीर्थंकर की अभ्यर्थना की । स्वय हम्मीर चद क्षण निश्चल बैठा रहा । फिर वह बोला, "उसे कहना कि दीवाणजी ने उसे रक्त-पात करने के लिए मना किया है । नही-नही, ऐसा मत कहना, उसे हमारी ओर से धन्यवाद कहना । उसे कहना कि मैं उसके कार्यो से बडा ही प्रसन्न हूँ ।"

जीवन चला गया ।

मौजीराम ने कहा, "राक्षमी वृति मानवीयता के लिए घातक सिद्ध होती है । आप अनगसिंह को अधिकार मे क्यो नही रखते । मुझे इस बात का डर है कि कही वही विद्रोही नही बन जाय ।"

"यह सभव नही है ।"

"सभव, असभव पर मत जाइए । मनुष्य की मनोवृति को देखिए । आवश्यकता से अधिक अधिकार प्राणी को पथ-विमुख कर देते हैं । फिर व्यर्थ की हिंसा विवेक-शीलो का काम नही ।"

"तुम चिंता न करो । हम्मीर इतना भोला नही है । यह हर समस्या का समाधान भी जानता है । हमारे पास योद्धाओ का अभाव नही । यदि अनगसिंह ने कही भी कदम गलत उठाया तो मैं पवनसी से द्वन्द्व करा दूंगा और पवनसी अनगसिंह को समाप्त किए बिना नही रहेगा ।

पवनसी के कुशल हाथ कभी भी धोखा नही खाते।"

"अगर परीणाम उसके विपरीत हो गया तो ?"

"अनर्गसिंह पर दोष लगाकर उसे बन्दी बनाया जा सकता है।"

मौजीराम के अधर पर वही रहस्य भरी मुस्कान नाच उठी।

वह बोला, "दोपहर के विश्राम के बाद आपके समक्ष प्रजा द्वारा अाल्प बचत योजना के अन्तर्गत दिया हुआ धन प्रस्तुत किया जायगा।"

हम्मीर अपने शयनकक्ष मे चला गया। तीन दासियो उसे पखा झल रही थी रानी उसके चरणो को दबा रही थी।

हम्मीर ने कहा, अरे तुम यह क्यो कर रही हो। जाओ तुम विश्राम करो। तुम्हे अब जरा भी कष्ट नही उठाना चाहिए।

"बस रहने दीजिए। वह मादक कटाक्ष से बोली।

धीरे-धीरे हम्मीर की आंखो मे नींद घुलने लगी। रानी अपने आप मे तन्मय हो गा उठी—

'म्हानै रात्या नींद नई आवै

सुपने मे म्हानै टेटे बादीलो भरतार जी

गीत की स्वर लहरी थिरकती ही रही।

भीलो के कन्धों पर धनुष बाण भी थे ।

देखते-देखते देश भक्त प्रजा ने धन का अम्बार लगा दिया। भीलों ने अपने कठोर श्रम द्वारा प्राप्त सारा धन हम्मीर के चरणो में रखकर कहा कि आप चित्तौड को मुक्त कराएँ। हर मेवाडी की यही आवाज थी। मालदेव के अत्याचारो और यवन सैनिको की धींगा-धींगी से प्रजा आतंकित थी।

तभी अनगसिंह आ गया। उसका अप्रत्याशित आगमन सब को आश्चर्य-चकित करने वाला था। वह विशाल और विचित्र वीर राणा के चरणो मे नत मस्तक होकर बैठ गया।

हम्मीर ने उसकी आवभगत की। बोला, "क्या बात है अनग ?"

"युद्ध की घोषणा कर दीजिए।"

"समय आ चुका है।"

"कब आक्रमण होगा ?"

"तिथि निश्चित नही है।' अभी थोडा धैर्य रक्खो।"

"प्रजा मे अभी तीव्र असतोष है। इस तीव्र असतोष का एक फल यही हो सकता है कि हम इन असतुष्ट मानवो को सग्राम भूमि मे उतार दें। ये जुझार बन जाएँगे।"

मौजीराम ने अनगसिंह की वार्ता मे अवरोध उत्पन्न किया, "ठाकुर सा! शाही सेना का समर्थन प्राप्त करने वालो मे युद्ध होना सहज नही।"

"कामदार जी, यह धन पडा है। ये सिक्के पडे हैं, इन्हे गिनिए। युद्ध की चर्चा आपको शोभा नही देती।"

हम्मीर ने उत्तेजित होकर कहा, "अनगसिंह मर्यादा का उल्लघन उचित नही। अपने आपको इतना चतुर और बलवान न समझो कि तुम्हारा प्रतिद्वन्दी जन्मा ही नही है। अपनी इस अशिष्टता की इनसे क्षमा-याचना करो।"

अनगसिंह की लाल-लाल आंखो से अगार बरस पडे।

पवन सी का हाथ खडग पर चला गया।

"हमारा हुक्म है।"

अनगसिंह ने क्षमा मांगी और तुरन्त वहाँ से चला गया।

हम्मीर ने व्यथित होकर कहा, "वीर विवेक से दिन प्रतिदिन दूर हो रहा है।"

"दीवाणजी, आप इसे अधिक सिर पर मत चढ़ाइए, कभी यह हम सब के लिए घातक सिद्ध होगा।" पवनसी ने आवेश में कहा, "यह दरबार की प्रतिष्ठा के प्रतिकूल है।"

हम्मीर ने पवनसी को शान्त करते हुए कहा, "अधिक आवेश हमारे विनाश का कारण बन जायगा। सेरा, तुम जाकर अनगसिंह को बुलाओ। उसे हमारी तलवार दिखाना और कहना कि राणाजी, तुम्हें इसी समय बुला रहे हैं।"

सेरा प्रणाम करके अश्वारूढ़ हो गया। वह पवन-वेग से पर्वत के संकीर्ण पथ पर भागा।

हम्मीर ने पवनसी से कहा, "पवनसी, तुम्हारी स्वामिभक्ति, वीरता और कर्तव्य-परायणता अनुकरणीय होने के साथ-साथ चित्तौड़ के लिए गौरवमयी भी है। मैं तुम से एक प्रार्थना और करना चाहूँगा कि तुम अनगसिंह के स्वभाव के बारे में मौन रहो। देखो, मैं तुम्हें आज्ञा नहीं देता हूँ। मैं यह भी जानता हूँ कि तुम उन से अन्तर में निकट नहीं हो, किन्तु अपने चित्तौड़ के लिए अभी हमारा मौन ही श्रेयस्कर है।"

"आप हर बार मुझे ही टोकते हैं। क्या?" पवनसी ने कहा।

"मन को समझाना दुष्कर होता है और बुद्धिमान को एक संकेत ही पर्याप्त होता है। प्रत्येक व्यक्ति का दबाव हर कहीं पर नहीं। दबाव भी सम्बन्धों पर आधारित होता है। मैं तुम्हें सर्वप्रिय मानता हूँ, इसलिए मैं तुम्हें अधिक टोकता हूँ। क्या मैं अनुचित कह रहा हूँ?"

पवनसी गद्गद होकर बोला, "नहीं दीवाणजी, आपके सरीखे महा-नर के लिए। आभारी हूँ। मुझे आपकी प्रत्येक आज्ञा शिरोधार्य है।"

तत्पश्चात हम्मीर ने अपनी प्रजा को धन्यवाद दिया। उस अवसर

सन दिया कि वह शीघ्र ही आपकी जन्मभूमि को मुक्ति दिलाएगा।

उनके चले जाने के वाद हम्मीर ने सवको जाने का आदेश दे दिया।

हम्मीर मत्रणा कक्ष मे चहलकदमी कर रहा था। उद्विग्नता के कारण कभी-कभी उसके अधर अस्पष्ट शब्दो का उच्चारण कर देते थे। 'अनग वस्तुत उन्मादग्रस्त हो गया है। उसे इस तरह वार्तालाप नहीं करना चाहिए।' इस तरह के वाक्य उसके मस्तिष्क मे घूम रहे थे।

दूरागत पदचाप हम्मीर के कर्णकुहरो के सन्निकट आने लगी।

हम्मीर अपने भावो को परिवर्तन करने लगा। जो उग्रता व कठोरता उसके चेहरे पर व्याप्त थी, वह दूर होने लगी। उसकी जगह सहज-सौम्यता आ विराजी। हम्मीर ने अनगसिंह का सम्मान मुस्कान के साथ किया। मेरा चला गया।

हम्मीर ने मधुरता से, किन्तु अनग की ओर न देखकर, कहा "राज-मर्यादा के विरुद्ध कोई आचरण असह्य होता है। कभी-कभी उसका गम्भीर रूप राज-द्रोह की सज़ा भी ले सकता है। पर अनगसिंह से हमे ऐसी आशा नही थी। वह हमारा दाया हाथ है। हम अपने दाए हाथ को अपने से अलग नहीं कर सकते। लेकिन? हाँ अनग! अगर तुम्हारा अपना दाया हाथ विषाक्त होकर तुम्हारे सारे शरीर को हानि पहुँचाने लगे तो तुम क्या करोगे?"

"काट दूंगा।" अनग ने आवेश मे कहा।

"किन्तु हम इस सिद्धान्त के विपरीत है। हम उसका उपचार करेंगे। अच्छे अच्छे वैद्यो को दिखायेंगे, इस पर भी वह ठीक नही हुआ तो हम उसे काटकर अलग कर देंगे।"

हम्मीर का सकेत अनगसिंह समझ गया। उसका मुख ताम्रवर्ण का हो गया। आन्तरिक क्रोध पर उसने वहुत आधिपत्य करना चाहा, फलस्वरूप उसके सारे शरीर मे जडता व्याप्त हो गई।

"हम तुम्हारा हार्दिक सम्मान करते हैं। वीरो मे तुम्हे वीर शिरो-मणि समझते हैं। हमे यह भी विश्वास है कि तुम्हे केसरी सिंह भी

पराजित नही कर सकता, पर दुख इस बात का है कि तुम शिष्टता की परिधि के बाहर जाने लगे हो अनग! क्या तुम्हारी बातो के कारण समस्त मेवाड की एकता, अखडत, अविच्छिन्नता भग हो जाय? बप्पा रावल द्वारा स्थापित सूर्य-वशियो का शौर्य समाप्त हो जाय? हमारे जागरण को क्षति पहुँचे? लोग तुम्हारे जैसे पराक्रमी को देशद्रोही कहे क्या तुम यह सब सह सकोगे? चुप क्यो हो? बोलते क्यो नही?"

अनगसिह गर्दन झुकाए खडा रहा।

"हम तुम्हारी स्वामिभक्ति का सम्मान करते हैं। हमे तुम्हारी नीयत पर भी तनिक सन्देह नही है। किन्तु यह सब बात तब नितान्त गौण हो जाती है जब तुम भरी सभा मे राजकुल की प्रतिष्ठा को हुकार के सहारे उडा कर चले जाते हो। यह कहा तक उचित हो सकता है?"

गहरा मौन छाया रहा।

हम्मीर दूरस्थ एक मेघ-खड को निहारता रहा। वह भीगे स्वर मे बोला, "तुम नही जानते कि मैं तुम्हे कितने गौरवशाली पद पर प्रतिष्ठापित करना चाहता हूँ। मेरी यह हार्दिक इच्छा है कि तुम मेवाड के सेनापति बन कर चित्तौड को विजय करो। पर तुम्हारी उग्रता, प्रचण्डता और आक्रोश सबको सदिग्ध कर देते है। क्या भविष्य मे मै तुम्हे सतुलित देख पाऊगा।'

अनगसिह व्यथित हो उठा। उसकी आकृति की कठोरता लुप्त हो गई। पश्चाताप की रेखाए उभर कर उसके चेहरे पर आ गई। वह दर्दपूर्ण स्वर मे रुक रुक कर बोला, "मै उग्र हू, प्रचण्ड हू और अशिष्ट भी किन्तु आगामी का मेरी विवशता को भी ध्यान मे रखना चाहिए। क्या ऐसा हुआ कि हृदय का रुदन परिवर्तन योग्य होता है? मै आपकी प्रत्येक आज्ञा मानने के लिए तैयार हू पर मेरी स्वाभाविक वृत्ति का क्या होगा?'

तुम्हारी स्वाभाविक वृत्ति क्या कुछ नही है?'

सकते । तुम हर घडी युद्ध मे व्यस्त रहो, किन्तु इतना अवश्य ध्यान रहे कि वह युद्ध देश के गौरवशाली परम्पराओ को समाप्त न कर दे।"

"ऐसा ही होगा।"

"शपथ खाते हो ?"

अनगसिंह शात रहा।

"तुम्हे शपथ खाकर विश्वास देना ही होगा।"

अनगसिंह ने कहा, "शपथ की क्या आवश्यकता है ? आप ?"

"नही अनगसिंह, मुझे वीर की शपथ का भी उतना ही भरोसा है जितना उसकी वीरता का। तुम्हे शपथ खानी ही पडेगी। तुम्हे मुझे वचन देना ही पडेगा।

'शपथ खाता हूँ कि भविष्य मे ऐसा कोई भी कार्य नही करूँगा जिससे देश की मान-मर्यादा और एकता को भग होने की आशका हो।"

"देवसिंह !" हम्मीर ने प्रहरी को पुकारा।

प्रहरी मस्तक झुका कर कहा, "बटो हुक्म राणाजी !"

"कामदार जी को बुलाकर ला।"

थोडी ही देर मे मन्त्रणाकक्ष मे मौजीराम आ पहुँचा। अब कक्ष मे अनग, मौजीराम और हम्मीर गभीर मन्त्रणा करने लगे। फिर मौजीराम का मुख पीला होता हुआ जान पडा, मानो उसे हम्मीर की बात पसद न आई हो।

हम्मीर ने कहा, "आज हम अनगसिंह को समस्त मेवाड का सेनापति बनाते हैं। यह अपनी अतुल शक्ति से शत्रु के दांत खट्टे करेगा।"

अनगसिंह को हम्मीर ने भेंट के मूंठ की तलवार दी जिसकी म्यान मखमल और चाँदी की बनी थी। जो तलवार कई सहस्त्र रुपयो की थी।

तलवार को सौंपते हुए हम्मीर ने कहा, "आज से तुम मेवाड के सबसे जिम्मेवार योद्धा हो गए हो। भविष्य मे तुम्हारा उठाया हुआ कोई भी कदम मेवाड की जय क्षय का जिम्मेवार होगा।"

अप्रत्याशित हम्मीर के चेहरा का उत्साह समाप्त हो गया। वह

तुरन्त जाते हुए अनंगसिंह को रोककर कहा, "बैठो अभी तुम्हारी प्रमाणिक नियुक्ति नहीं हो पाई है, पद के साथ बहुमत की भी आवश्यकता है। कामदारजी, पवनसी, मेरा, वीरसिंह, खेतसी का पुत्र गेतसी, उमराव गिरिराज आदि को बुलाया जाय।"

चंद ही घड़ियों में सारे सामन्त और उमराव आ गए। कामदार ने सबके समक्ष राणा हम्मीर का मंतव्य रख दिया। पवनसी तमतमा उठा। पवनसी की भंगिमा से असंतोष झलक रहा था। गिरिराज आतंकित-सा हो गया। हम्मीर ने सबके चेहरे के भावों को पढ़ा। वह समझ गया, सामन्त लोग इस बात में प्रसन्न नहीं है। और आज सामन्त और उमरावों के बल-बूते पर मेरा शासन चल रहा है। यदि ये सब लोग रुष्ट हो गए तो परिणाम बुरा ही होगा। तब ?

हम्मीर काफी देर तक विचार-मग्न बैठा रहा।

उपस्थिति में कानाफूसी चल रही थी।

हम्मीर तुरन्त उठा। उसने संकेत से पवनसी को बुलाया और मंत्रणाकक्ष के पार्श्व में एक अन्य लघु वैयक्तिक मंत्रणाकक्ष था, उसमें वे दोनों गए। आसनस्थ होकर बैठे।

हम्मीर ने भोलेपन से कहा, "मैं तुम्हारे मुख के भावों को अच्छी तरह पढ़ चुका हूँ। तुम अनंग का महासेनापति स्थान से रुष्ट भी हो, पर मेरे समक्ष सबसे देश का प्रश्न है। देश के हित में मैं व्यक्ति का गति-

अनुसार मैं आपकी आज्ञा ही मान सकता हूँ।"

"तुमने हृदय का बोझ हल्का कर दिया। अच्छा तुम जरा मेरा को मेरे पास भेज दो।"

थोडी देर मे मेरा आया।

वह उदास था और हम्मीर को वह रोष-भरी दृष्टि से देख रहा था। हम्मीर ने उसके कन्धे को सहलाया और कहा, "अनगसिंह का महासेनापति बना देना तुम्हे भी सह्य नही ?"

"नहीं।"

"क्यो ?"

"क्योंकि जो व्यक्ति पल-पल मे धैर्य खोते हैं, वे देश का हित कैसे कर सकते हैं। फिर अनगसिंह मे क्षत्रिय जाति का झूठा दभ और अभिमान हैं। वह अपने को असाधारण मानता है तथा वह भील-भीणा इत्यादि लोगो को हेय और नीच समझता है। उनके साथ जरा भी भाई-चारा नहीं रखता। उनको वह केवल दास समझता है। राणा जी, वह हम गरीबो का जीना ही दूभर कर देगा।"

"नही, मेरा, नही! तुम उसे गलत समझे हो। फिर तुम मेरी चाल को नहीं समझे। मैं चाहता हूँ कि इसे सेनापति बनाकर तलहटी की ओर भेज दूं। वहाँ अनगसिंह लूटपाट और धन सग्रह करता रहेगा। तुम विश्वास रखो कि वह तुम्हारी जाति के लोगो को जरा भी कष्ट नही देने पाएगा।" हम्मीर संभल कर बोला, "फिर यह राज्य के नियमानुसार सेनापति थोडे ही बनाया जा रहा है। जब तक चित्तौड़ का गढ अपने अधिकार मे नही आ जाता और मैं, विधिवत् राणा नहीं बन जाता तब तक वह नाममात्र का सेनापति ही कहलाएगा। इस निगूढ बात को वह नही समझ सकेगा। पद के प्रलोभन और शान मे वह मतवाला बना खूब जी-जान से काम करेगा और इसमे हमें लाभ ही होगा। देखो मेरा! अभी हमे वैयक्तिक वैमनस्य और द्वेपता को विस्मृत करके अपने देश के उत्थान और उसकी स्वाधीनता के बारे मे

सोचना चाहिए ।"

"कही ऐमा न हो कि पासा उल्टा पड जाए ।"

"नही, ऐमा नही हो सकता । हम्मीर बौद्धिक मार नही खा सकता । वह भी अपने पूर्वजो की तरह दूरदर्शी है । अनागत विपता और आपदा को वह पहले दूर करके ही कदम उठाता है ।"

मेरा ने उसकी बात को मानते हुए कहा, "फिर जैसी आपकी मर्जी ।"

"केवल मेरी मर्जी नही हो सकती । मैं अपने सारे मित्रो को रुष्ट करके किसी एक व्यक्ति विशेष को प्रसन्न करना नही चाहता । तुम्हारा परामर्श चाहता हूँ । यदि वह नाम-मात्र का सेनापति बना भी रहे तो क्या हर्ज है ?"

'मुझे कोई आपत्ति नही ।"

"बस मैं यही सुनना चाहता था ।"

हम्मीर बाहर आ गया । उसने समस्त सरदारो व उमरावो को सम्बोधित करके कहा, "समय और शक्ति देखते हुए ठाकुर अनगसिंह जी हमारे सेनापति बनाए जाते है । उनका शौर्य और स्वामि-भक्ति से सभी परिचित है । मुझे आशा है, आप सब भी इसे स्वीकार करेंगे । किसी को भी किसी प्रकार की आपत्ति हो तो निसकोच होकर कहे । मेरा भय खाने की कोई आवश्यकता नही । क्योकि मैं भी आपकी तरह चित्तौड का सेवक हूँ, एकलिगेश्वर का दीवाण हूँ । मुझ मे आप मे इतना ही अन्तर है कि मैं उनकी सेवाओ के लिये एक जिम्मेवार चाकर हूँ और

अनगसिंह ने एकलिंगेश्वर की जय-जयकार की और बाद में हम्मीर के प्रति उसने अपनी कृतज्ञता ज्ञापन की तथा उसने समस्त सरदारो को विश्वास दिलाया कि वह अपने देश और देश के लोगों के प्रति सदा ईमानदार रहेगा।"

१६

रानी शयनागार में अर्धशायित थी। गाव तकिए का सम्बल था उनकी पीठ को। अपराह्न काल।

हल्का-हल्का शीत आरम्भ हो गया था।

राणी नवागत शिशु की सुखद-स्मृति मे विगत की हीनता विस्मृत कर चुकी थी। लेकिन जब कभी पुरानी दासियाँ छिपे-छिपे उसके तथाकथित कलुष जीवन के पृष्ठ खोलकर कहतीं कि ऐसी कलंकिनी महाराणी के कारण चित्तौड मे कभी भी सुख आनन्द नहीं हो सकता। मगल श्री यहां आ ही नही सकती। हमारे यहाँ महान पवित्र देवी पद्मिनी हुई थी जो धर्म की रक्षा हेतु जौहर मे जल उठी। और यह अशुभ है, अमगलकारी है। तब उसका मन वेदना से भर उठता था। राणी पीडा से अवश होकर उन दासियों की वाणी काटने को आतुर हो जाती पर फिर वह शात हो जाती। यथार्थता कहाँ तक छिप सकती है। उसे कहाँ तक रोका जा सकता है। लेकिन तब उसके मन मे अपने पिता के प्रति घृणा का सागर लहरा उठता और अपने भाइयों के प्रति उसके मन मे द्रोह जाग उठता।

तब वह कामदार को बुलाकर अनुनय विनय करती। उसे चित्तौड को तुरन्त विजित करने के आदेश दे देती, हालाकि वह जानती थी कि चित्तौड-विजय सहज नही है और उसमे उसके आदेशो की जरा भी कीमत नहीं है।

कल पता नही, क्यो हम्मीर उसे प्यार करता करता रह गया। हल्का-हल्का शीत और उन्मादित करने वाली ऋतु।

हम्मीर राणी से आमोद-प्रमोद की चर्चा कर रहा था।

राणी हम्मीर की अंकशायिनी थी और हम्मीर उसे अपने चित्तौड की राणियो की त्याग की कथाएं सुना रहा था। हठात् हम्मीर उठ खडा हुआ और यह कह कर वह शयनकक्ष से बाहर निकल गया कि यह सुख व्यर्थ है। यह भोग अनुचित है। यह विलास पीडादायक है। जब तक चित्तौड की मुक्ति नही, कुछ नही। कुछ नही।"

राणी ने हम्मीर को रोकना चाहा, पर हम्मीर नही रुका। वह सीधा प्रतोली से दूसरे कक्ष मे चला गया। दासी को आज्ञा दे दी कि वह किसी भी को भीतर न आने दे।

राणी गई भी, किन्तु दासी ने विवशता प्रकट कर दी। राणी ने अधिक हठ नही किया। वह जानती थी कि हम्मीर का क्रोध आकाश-पाताल को एक कर देता है।

लेकिन इससे राणी को रात भर निद्रा नही आई।

वह अवश-सी शय्या पर करवटे बदलती रही। मानस-पटल पर तिरस्कृता का अभिशप्त जीवन नाच उठा जो महलो मे राजनैतिक स्वार्थो की पूर्ति के लिए लाई जाती है और सम्पूर्ण जीवन भर उसे रभस-विलास से युक्त कक्ष मे व्यतीत करना पडता है, किन्तु उसकी ओर उसके पति की भोगिक दृष्टि भी नही पडती थी। हालाकि हम्मीर सम्पूर्ण मन से उसे प्यार करता था, फिर भी जो हीनता राणी के मन मे थी, वह उसे हम्मीर की साधारण [illegible] वाचाल कर रही थी, तब वह गहन मन मे अनेक दुश्चिन्ताओ [illegible] [illegible] रही थी, तब वह आत्मपीडा मे

के मुख पर वही भेद-भरी शात मुस्कान खेल रही थी। वह राणी के मनोवेगो को वडी तटस्थता से सुन रहा था। जब राणी ने सब कुछ उगल दिया तब कामदार ने कहा, "मैं आपके दुख को समझता हूं। लेकिन चित्तौड-विजय सहज नही है।"

"फिर आपको यहाँ लाने से लाभ क्या है ?" राणी ने आवेश मे कहा।

"मैं अपना काम सम्पूर्ण निष्ठा से कर रहा हूँ अभी अवसर की प्रतीक्षा है। अवसर आते ही मैं अपना कार्य आरम्भ कर दूंगा।"

"तव तक मैं मर जाऊंगी।"

"ऐसा न कहिए रा ी सा, आप चित्तौड के भावी राणा की राज-माता हो, आपके मुख से ऐसे अणूते (अनुचित) वोल शोभा नहीं देते। आपको अखड धैर्य रखना चाहिए। आप इस तरह उद्विग्न होगी फिर, हो गयी कर्तव्य की पूर्ति ? अव आपको मेरे साथ होना पडेगा। यह भूल जाना पडेगा कि मेरे कोई भाई है, मेरा कोई वाप भी है। आप चित्तौड की विधवा महिषी हैं। यदि चित्तौड विजय नही हुआ तो सारा दोष आपके माथे मढा जायगा। सभी यही कहेंगे कि यह अपशकुनी हैं। इस लिए अव आपको मेरा साथ देना होगा।"

"मैं आपको वचन देती हूँ कि मैं आपका तन-मन से साथ दूंगी। आप जैसा कहेगे, वैसा करूंगी।"

"तव सुनो रानी, हम शीघ्र ही चित्तौड जाएँगे।"

"लेकिन मैं ऐसी दशा मे कैसे जा सकती हूं।"

"मैं राणाजी से अनुरोध करूंगा। यदि राणाजी मेरे अनुरोध के मर्म को समझ गए तव आप और मैं वहाँ चलेंगे।"

"पर प्रयोजन क्या होगा ?"

"हमारा प्रयोजन है चित्तौड-विजय। चित्तौड विजय होने के पश्चात एक विधवा के प्रति जो लौकिक धारणाएँ होती हैं, उनको निर्मूल करना एव मेवाडवासियो को आपके प्रति श्रद्धेय वनाना। आप नही जानतीं

कि परिस्थिति-वश यहां के सरदार चुप बैठे है, वर्ना वे इस प्रश्न को अभी भयकर समस्या बना देते और न मालूम ये रूढिग्रस्त, अध-परम्परावादी वीर आपके जीवन को क्या परिणाम देते ? आन्तरिक विरोध अब भी देखने को मिलता है।"

"ओह ! कौन से जन्म का पाप है जो अब मुझे मिल रहा है। मैं ईश्वर से प्रार्थना करती हूँ कि वह मुझे मृत्यु क्यो नही देता।" वह विचलित स्वर मे बोली,"आप नही जानते कामदार जी ! राणाजी, हँसते-हँसते एकदम विषाद मे डूब जाते है। लगता है, उन्हे भी मेरे कारण सच्चा सुख नही।"

"आप निश्चित रहिए, ईश्वर की कृपा हुई और भाग्य ने साथ दिया तो आप यहाँ की प्रतिष्ठित महारानी होगी। अच्छा, मै चलता हूँ, रात को गुप्तचर समाचार लाया था कि अनगसिंह ने शत्रुओ के एक पूरे साथ को रोक कर लूट लिया। यह भी सुनने मे आया है कि अनग ने तीस व्यक्तियो को मौत के घाट उतार दिया। सचमुच यह पूर्व जन्म मे कोई राक्षस था।'

मौजीराम वहाँ से सीधा हम्मीर के पास गया।

हम्मीर पूजा-गृह म अर्चना वन्दना कर रहे थे। मौजीराम सेवक को यह कह कर चला गया कि जब राणाजी निवृत्त हो जाय तब मुझे सूचना दे देना।

लगभग एक घटिका के बाद हम्मीर पूजा मे निवृत्त हुआ।

जीवनसिंह [illegible] दो-ढाई लाख रुपयों को लेकर आया हुआ था। अनगसिंह सीमा और मीणा था। [illegible] [illegible] का विश्वास जिनान के

"मुहम्मद तुगलक का कोई सिपहसालार था। मालूम हुआ था कि यवन-सेना के लिए यह ले जाया जा रहा था।"

"अच्छी बात है। तुम जा सकते हो?"

जीवनसिंह इधर गया और उधर मौजीराम ने प्रवेश किया।

प्रणाम करके उसने निवेदन किया, "आपसे मैं विशेष मन्त्रणा करने को आया हूँ।"

"कहिए कामदार जी।"

"इन दिनो की घटनाओ के कारण मालदेव चौहान व उनका पुत्र जैसा एकदम परेशान हो उठे होगे। निरन्तर असहयोग और छुप-छुपकर युद्ध की नीति मे उनकी शक्ति क्षीणतर होती गई है। तब मैं और महा-राणी-सा चित्तौड जाकर उन्हे अपनत्व का भरोसा दिलाते हैं। और यह धन उन्हें वापस कर आते हैं। उनसे प्रार्थना करते हैं कि भविष्य मे हम आपको किसी प्रकार की हानि नही पहुँचायेंगे।"

"इससे क्या होगा?"

"यह होगा कि अप्रत्याशित आक्रमण के समय हमे चित्तौड-प्रवेश मे किसी तरह की विषमता का सामना नही करना पडेगा। आप नही जानते कि वह दुर्ग कितना सुरक्षित है। शत्रु को विजय करने मे अपना सारा बल लगा देना पडता है। वह समुद्र की सतह से बहुत ऊँचा है और उसका परकोटा अत्यन्त मजबूत है। इसके अतिरिक्त पाडलपोल, भैरो-पोल, हनूमानपोल, गणेशपोल, जोडलापोल, लक्ष्मणपोल, रामपोल के भीषण लौह व पाषाण के द्वार और भवन तथा चौहानो के वीर सिपाहियो का पहरा, इन सभी को सहजता से नही हटा सकते। इसके लिए छल की आवश्यकता है।"

"वीर-बाकुरे राजपूत क्या धर्म-युद्ध नही कर सकते?"

"धर्म राजनीति का सहोदर नही बन सकता। अलाउद्दीन की बात का विश्वास कर आपके पूर्वजो ने चित्तौड को श्मशान कर दिया था। उस जैसा शक्तिशाली बादशाह भी चित्तौड के लिए छ: माह घेरा डाले

पडा रहा और अन्त मे उसे छल-कौशल का ही सम्बल लेना पडा।"

"लेकिन हमारे राजपूत इसे स्वीकार नही करेंगे।"

"उसकी आवश्यकता ही क्या है ?"

"पर मैं राणी सा को नही भेज सकता। आप जाना चाहते हैं, अकेले जाइये।"

"आपको वहाँ भेजने मे आपत्ति क्या है ?"

हम्मीर ने तनिक विहँस कर कहा, "अभी तुमने कहा था कि धर्म राजनीति का सहोदर नही हो सकता ? और जो नीति धर्महीन होती है, उसका कोई विश्वास नही कर सकता। मैं तुमको इतना ही अधिकार दे सकता हूँ कि तुम चितौड जा सकते हो।"

"जैसा आपका हुक्म ?"

"किन्तु ?" हम्मीर की भृकुटिया तन गई।

"क्या है राणाजी, कोई सन्देह ?"

'तुम कभी कभी ऐसी बाते कह देते है, जिससे मनुष्य को अपने आप पर भी विश्वास नहीं होता। तुम भी कूटनीतिज्ञ हो। कहीं तुम हमारे रहस्यो का उद्घाटन करने के लिए तो चित्तौड नहीं जा रहे हो ? तुम्हे रुष्ट नहीं होना चाहिए, अपनी शका को तुम्हारे समक्ष स्पष्ट रूप मे रख रहा हूँ, उसका तात्पर्य यह नहीं है कि मैं तुम्हारा विश्वास खो बैठा हूँ। मैं तो केवल शका रख रहा हूँ।"

कामदार के मन मे जरा भी कलुष नही था, किन्तु इस अप्रत्याशित आरोप से कामदार का मुख पीला पड गया। वह हकलाता हुआ बोला, "राणाजी, मैं जिस दिन दहेज मे आपको दिया गया था, उसी दिन मैंने अपने आपको आपका दास स्वीकार कर लिया था। मैं उसी का ही ताबेदार और वफादार हूँ जिसकी चाकरी बजाता हूँ। जब आप मुझे किसी और को सौंप देंगे, मै उसका वफादार हो जाऊँगा। सच्चा दास वही होता है जो अपने स्वामी की आज्ञा मानता है। दास के लिए मन मे स्वामी का कोई महत्व नहीं होता। मगर आपको मुझ पर शका है

तो लाइये अपनी हथेली में आग रखकर आपको विश्वास दिलाऊँगा। हथेली जलती रहेगी और मैं तब तक उस अगारे को अपनी हथेली से नही गिराऊंगा जब तक आप यह नही कहेंगे कि मुझे तुम पर विश्वास है राणाजी, आपने अपने हृदय में यह शका उत्पन्न करके अच्छा नहीं किया। मौजीराम चित्तौड को मुक्त कराने के लिए आया है।"

मौजीराम की आंखो से अश्रु छलक आए।

हम्मीर को अपनी भूल का पछतावा आया। वह अपनी बात को संवारता हुआ बोला, "तुम उत्तेजित हो गए हो? मेरे कथन का इतना गम्भीर रूप लेकर तुमने अच्छा नहीं किया। मैंने तुम्हे एक अर्थभरी बात कही थी। तुम्हारे पर दुर्भावना से कोई भी आक्षेप लगाने की मेरी मनसा नहीं थी।"

मौजीराम ने अपने दुपट्टे से अपने आंसू पोंछे। वह अत्यन्त व्यथित स्वर में बोला, "क्षमा चाहता हूँ, पर राणाजी आप अपनी चतुराई को सीमाहीन करने लगे हैं। कथन है—ज्यादा हुशियारी मे कभी-न-कभी किरकिर पडती है।"

हम्मीर नत-दृष्टि करके बोला, "हम्मीर तुमसे क्षमा चाहता है।"

"मुझे व्यर्थ मे अपराधी क्यो बनाते हैं? मैं आपके चरणो की धूल हूँ। चाकर हूँ। बस भविष्य में मन को पीडा देने वाली बात मत कहिएगा, ऐसा अनुरोध करता हूँ।"

हम्मीर ने बात को बदलना ठीक समझा। वह चौंक कर बोला, "तुम चित्तौड कब जा रहे हो?"

"आज ही।"

"यह सारा धन साथ ले जाओगे?"

"हाँ।"

"तुम कहो तो मैं एक क्षमा-पत्र लिख दूं?"

"अवश्य! यह बात और ही ठीक रहेगी।"

"तुम तैयार हो जाओ। मैं अभी पत्र लिखा कर देता हूँ।"

मौजीराम चलने लगा। हम्मीर ने उसे रोकते हुए कहा, "एक बात और है कामदार?"

"क्या राणाजी?"

"चित्तौड़ के द्वारपाल से मित्रता कर लेना। उसे समझा देना कि हम जब कभी आएं तब तुम हमें द्वार खोल देना।"

"जो हुक्म?"

मौजीराज के जाने के बाद ही चारण अमरदान के आगमन की सूचना मिली। अमरदान कई दिनों के बाद आया था। हम्मीर उसे देख कर उल्लास से भर उठा। ससम्मान आसन दिया चारण को। अमरदान ने उसकी प्रशंसा में एक कवित्त पढ़ा।

"बहुत दिनों के बाद दर्शन दिए चारणजी?"

"अब बूढ़ा हो चला हूँ। आना-जाना होता ही नहीं। घुटनों में बड़ी पीर रहती है।"

"राजवैद्य को क्यों नहीं दिखलाते? आज मैं उन्हें आपके घर भेज दूंगा। आपके बिना हमारे में पौरुष को कौन जगाएगा।"

अमरदान ने क्षण भर हम्मीर के मुख को देखा, फिर बोला, "चारण केवल कविता नहीं करता है। वह कविता के साथ खड्ग भी चलाता है। और मुझमें खड्ग चलाने की शक्ति नहीं है। फिर मुझे अब युद्ध से घृणा होने लगी है। व्यर्थ की हिंसा की उपादेयता कुछ नहीं। मैं पूज्यनीय करणी मां की बात को मानता हूँ—अहिंसा का पथ। मैं उनसे भी आगे सोचता हूँ कि हिंसा का प्रतिकार भी हिंसा से नहीं किया जाय। कोई दुष्ट और आततायी किसी भद्र पुरुष पर आक्रमण करे तो उसे उसका प्रतिकार हिंसा से नहीं करना चाहिए, वरन् उसे विनम्रता से पूछे कि आखिर यह व्यक्ति उस पर क्यों आक्रमण किया है? मैं समझता हूँ, इससे वैर और उसकी शांति हिंसा का असर दूर करने का साधन के लिए [illegible] कर देगी।

"आपका यह विचार कभी सफल नहीं हो सकता। हर तरह से

एक सूत्र मे सगठित नही हो जाता, तव तक यह मत्र व्यर्थ है ? प्रजा की एकता ही इसका आधार है। क्योकि जब तक प्रजा के वीर छोटी-छोटी टुकडियाँ वना-वना कर झगडा करते रहेगे तव तक सामूहिक विरोध सभव नही। व्यक्ति की आत्मा की रक्षा भी आवश्यक है।"

हम्मीर ने कहा, "मैं आपके विचारों का स्वागत करता हूँ। चारण जी ! यह अहिंसा का युद्ध या उद्घोष इस काल के लिए उपयुक्त है। आप मेरे एक प्रश्न का उत्तर दीजिए—एक सज्जन पुरुप जा रहा है। उसके शत्रु ने उस पर आक्रमण किया। समझ लीजिए, वह वच गया। उस समय वह क्या करेगा ? अपने शत्रु से कहेगा कि मुझ पर एक प्रहार और कर। यह परम्परा वैयक्तिक नपुसकता को ही जगा देगी।"

अमरदान ने गभीर स्वरमें कहा, "तब घाती दूसरा प्रहार कर ही नही सकेगा। मनुष्य मे करुणा होती है और वह स्वत जाग जाती है। एक रक्तरजित मानव तुम्हारे सामने खडा है। वह करुणा-प्लावित स्वर मे ललकार रहा है, 'मुझे और मारो, मुझे और मारो'—क्या तुम उसे मार सकोगे ? मुझे विश्वास है कि तुम ऐसा नही कर सकोगे ? मानवीय सवेदनाओ से युक्त जीवात्मा ऐसा क्रूर कार्य नही कर सकती। यह दुष्कृत्य क्रूर वृति वाले प्राणियो से ही हो सकते हैं।"

समय आने पर आपके विचारो पर प्रजा अवश्य गौर करेगी।" इतना कह कर हम्मीर ने चारण से निवेदन किया, "आप आ गए हैं तो एक पत्र लिख दीजिए।"

चारण ने पत्र लिखा।

मौजीराम वह पत्र लेकर चित्तौड के लिए रवाना हो गया। वह अकेला ही गया था।

सूर्य आकाश के मध्य में आया था। प्रखर किरणो मे हम्मीर भोजन करके घूम रहा था। तभी अनगसिंह अश्व पर आरुढ होकर पवन-वेग मे आया। अपने अश्व को झील के कगार पर छोडकर वह सीधा 'खास महल' की ओर आया। हम्मीर ने उसे मन्त्रणा कक्ष मे वैठने को कहा।

थोडी देर मे अनग सिंह उकता गया। उसने क्रोध मे अपनी मूछो पर दो तीन वार ताव दिया और उसने ज्यो ही हम्मीर को देखा त्यो ही वह प्रणाम करके बोला, "मेवाड के योद्धाओ के साथ यह खेल उचित नही है। हम चौहानो के समक्ष कभी झुकने को तैयार नही है। आपने वह सम्पत्ति और पत्र भेजकर समस्त मेवाडियो का अपमान किया है।"

हम्मीर ने कनखी से अनगसिंह को देखा और फिर मुस्करा कर बोला, "तुम प्रचण्ड हो। क्षण-क्षण मे उग्र हो जाते हो। बात पर बिना विचार किए कुछ न कुछ कह डालते हो।"

अनगसिह ने तुरन्त कहा, "मैंने उस पत्र को अपनी आंखो से देखा है।"

"अवश्य देखा होगा किन्तु मेरे हाथ का लिखा हुआ नही है। वह चारण जी के हाथ का लिखा हुआ है। हस्ताक्षर भी चारण जी के ही है।"

"ओह!"

"मेरे वीर सेनापति यह नीति-युद्ध है। तुम्हे इससे पीडा होगी, पर इस बार फिर रक्त-हीन युद्ध करने की मनसा है।"

"यू है ऐसे युद्ध को। इससे मेरा यह काय ही अच्छा!" कह कर अनग वापस क्षमा माँग कर चला गया।

हम्मीर खिलखिला पड़ा और शनै-शनै निद्रा देवी की गोद मे सो गया।

२०

सामन्त [illegible] चिन्ता [illegible]।

[illegible] नदी के तट पर [illegible]। [illegible] साथ [illegible] था। [illegible] कि [illegible] सामन्त [illegible] पर [illegible]। [illegible] था, [illegible]

की अवहेलना वह नही कर सकता था। इस के अतिरिक्त कई सैनिक और थे।

मौजीराम पाडलपोल के पास पहुँचे। पहरेदार ने उनकी सूचना जेसा को पहुँचाई। सूचना पहुँचाने और लाने में लगभग दो घटिका लगी। जेसा का छोटा भाई हरिसिंह स्वय उसकी अगवानी करने आया। पवनसी का भी मौजीराम ने उन सब से परिचय कराया। प्रारम्भिक कार्य से निवृत होकर पवनसी और मौजीराम जेसा के दरवार मे पहुँचे। जेसा चित्तौड के राज्य-सिंहासन पर वैठा था। पवनसी की रग-रग मे आग लग गई। उसके मन मे सहसा विचार उठा कि वह अभी इस दुष्ट का खून करके चित्तौड पर अधिकार कर ले।

कामदार पवनसी की आन्तरिक स्थिति समझ गया। उसने तुरन्त पवनसी से कहा, "एकलिगेश्वर जी के दीवाण का पत्र आपको दीजिए। पवनसी ने पत्र को जेसा के हाथ मे दिया। जेसा ने हाथ मे पत्र लेकर पढा और पढते-पढते उसकी प्रसन्नता की वाछें खिल गई।

"मौजीराम ने नत मस्तक होकर कहा, "आपका सारा कोश आपके सामने प्रस्तुत है। राणा जी ने क्षमा मांगी है और भविष्य मे यह आश्वासन दिया है कि आपकी प्रजा और दासो को किसी प्रकार की हानि नही पहुँचाई जायगी ?"

जेसा ने मौजीराम को एकात मे ले जाकर वात-चीत की। वाद मे वडा ही मुदित मन वाहर आया और पवनसी को सम्वोधित करके वोला, "खेद है ठाकुर सा कि हम चित्तौड आपको नही दे सकते। इसके अतिरिक्त आप हमारा सर्वस्व ले सकते हैं।"

पवन सी ने त्योरी वदल कर कुछ कहना चाहा, लेकिन तुरन्त मौजीराम ने वीच मे ही कहा, "चित्तौड आपका ही समझिए। वीर जहाँ भी जाते है, वहाँ नया नगर वसा लेते हैं। मैं आपसे प्रार्थना करूँगा कि भविष्य मे हमारी मित्रता वनी रहे।"

"मित्रता खण्डित कभी नही हो सकती।"

"वस इसी उद्देश्य को लेकर मैं यहाँ आया हूँ।"

इसके वाद मौजीराम और पवन सी लगभग एक सप्ताह भर वहाँ रहे। वहाँ पर उनका राजसी सम्मान हुआ।

× × ×

जेसा ने कई बार अनगसिंह की शिकायत की। उसने उसके चार सैनिकों की हत्या भी कर दी। जिसका विरोध-पत्र भी जेसा ने हम्मीर को भेजा। हम्मीर न उसका उत्तर विनम्र शब्दो मे चारण से लिखाकर भेज दिया, ताकि जेसा उसे कुछ कहे भी तो वह अस्वीकार कर जाए। उस ने पत्र मे शीघ्र ही अनगसिंह पर कठोर कार्यवाही करने का आश्वासन दिया था।

— —

२१

समय अपने पाँव पर उठा।

आज प्रभात के प्रथम पहर से ही समस्त केलवाड़ा के सहस्रो प्राणी तीव्र उत्कंठा मे शुभ संवाद की प्रतीक्षा कर रहे थे। रानी प्रसव पीड़ा मे कराह रही थी। हम्मीर पवन सी, मौजीराम, अनगसिंह, मेरा व अन्य ठाकुर-उमराव सभी वे सभा प्रतीक्षा गृह मे बैठे थे। राज-ज्योतिषी की मुद्रा अत्यन्त प्रफुल्लित थी। उसकी भविष्यवाणी थी कि रानी जी के पुत्र ही होगा।

[illegible] रही थी।

हम्मीर अपने निजी कक्ष में चहल-कदमी कर रहा था। वह धोती पहने हुए था और उसका सभी अग एक ढीले अंगरखे से समावृत था। उसके चेहरे पर बेचैनी थी परन्तु आंखो मे औत्सुक्य झलक रहा था। कभी-कभी उसके मुख पर उल्लास की वीचि धावत हो जाती थी।

एकाएक वरडी दासी दौडी-दौडी आई। उसके मुख पर अनगिनत प्रफुल्ल लहरियां नाच रही थी। वह आनन्द गद्-गद् स्वर मे बोली, "राणा जी की जय, राणा जी की जय, आपके कुंवर हुआ है।"

"कुंवर !" हम्मीर प्रसन्नता के मारे पूरा बोल भी नहीं पाया। वह अवरुद्ध कठ से रुकते-रुकते बोला, "खुशियां मनाओ !"

वरडी की बडी-बडी काली आंखें चमक उठी। उसकी दृष्टि हम्मीर के कण्ठहार पर थी। कठहार के मोती छोटे छोटे जुगनुओ की भांति चमक रहे थे।

"राणा जी मेरी बधाई !"

'लो बधाई", और उसने अपने हाथ के स्वर्ण-ककण वरडी को दे दिए। वरडी हर्षोन्मत्त-सी चिल्ला पडी, "जुग-जुग जिओ राजकुमार, चिर-जीवी हो कुंवर, जय राणा जी की।"

तत्पश्चात यह शुभ समाचार सर्वत्र फैल गया। केलवाडा के निवासियों में नवीन स्फूर्ति का सचार हो गया। अन्त पुर के भीतर और बाहर ढोलनियो की ढोलनियां व पुत्र जन्म के गीत गूंजने लगे। हम्मीर की आज्ञा से प्रजा को धन बांटा गया। लगता था—सारा सताप दूर होकर इन स्वाधीनता के मतवाले मेवाडियो मे केवल आनन्द ही आनन्द रह गया है।

वह दिन आनन्दोत्सव मे ही व्यतीत हुआ।

अब हम्मीर रात-दिवस एक ही चिन्ता में लगा रहता था कि किसी भी तरह चित्तौड को प्राप्त किया जाय। उसने वरडी को बुलाया। उससे निवेदन किया कि वह मेरी ओर से देवी मां को विनय करें कि वह हमें और सहायता करें। बारू भी उसी दिन अपनी मां के घर की ओर

चल पड़ा।

दो माह गुजर गए।

रात्रि का समय।

राणी हम्मीर के सन्निकट बैठी धूप-वर्तिका जला रही थी।

राणी के मुख पर दीयों का प्रकाश पड़ रहा था।

"आज आप फिर चिंतित हैं राणा जी ?"

हम्मीर ने अपने स्वर को बोझिल करके कहा, "मैं तुम्हें पाकर कृत्य-कृत्य हो गया। तुम्हारे आगमन पर शुभ ही शुभ हो रहा है। फिर भी मेरे अविनय पूर्ण आचरण से तुम्हें क्लेश होता है।" उसने कह कर दीर्घ निःश्वास लिया, "लेकिन क्या करूँ राणी, मुझे चित्तौड़ पुनः प्राप्त करने का कोई उपाय नहीं सूझ रहा है।"

"मुझे कोई आज्ञा दीजिए।"

"तुम्हें क्या आज्ञा दूँ ?"

राणी ने अश्रु भरे नयनों से हम्मीर की ओर देखा, "मैं अपने प्राण देकर भी आपके प्रेम का प्रतिदान नहीं दे पाऊँगी। मैं आपको किंचित भी संतप्त नहीं देख सकती। आप कहें तो मैं [illegible] ?"

"राणी उत्तेजित मत होओ। कभी-कभी चित्तौड़ पर मृत्यु की भांति टूट जाना चाहता है लेकिन फिर तुम्हारे भाई-बाप का ध्यान [illegible]।"

राणी बीच में ही बोली, "मेरा कोई बाप नहीं है, मेरा कोई भाई नहीं है। उन पापी राणा को अपना कहते हुए मुझे लाज आती है। लाज के साथ रोष भी आता है। मैं उनका मुख भी नहीं देख सकती।"

हम्मीर ने मन ही मन सोचा—राणी के मन में अपने पीहर वालों के प्रति किसी प्रकार की सहानुभूति नहीं है, तब वह क्यों न राजनैतिक सी [illegible]

[illegible]

सभव होगा ।"

"और तब ?" राणी के नेत्रो मे प्रश्न नाच उठा ।

हम्मीर ने भीति पर अकित नृत्य-चित्र पर दृष्टि जमाकर कहा, "वहाँ तुम्हें और कामदार मौजीराम को मुख्य-मुख्य द्वारपालो को उत्कोच देकर अपने पक्ष मे करना होगा । वहाँ की स्थिति को देखकर हमे गुप्तचर द्वारा समाचार पहुँचाने होगे । तब हम अवसर पाकर चित्तौड पर आक्रमण करेंगे ! राणी ! यदि तुमने इस कार्य को सुचारु रूप से सम्पन्न कर लिया तो जानती हो कि तुम्हारी प्रतिष्ठा यहाँ महाराणी पद्मिनी के समकक्ष हो जायगी । चित्तौड का हर व्यक्ति तुम्हारे चरणो मे मस्तक झुकाएगा । तुम्हारे माथे पर लगा वैधव्य का कलक धुल कर तुम मगलकारी देवी बन जाओगी ! "

राणी पर्यवेक्षक की दृष्टि से हम्मीर को देखती रही । हम्मीर उस दृष्टि को अधिक नही सह सका । जाने को उद्यत होता हुआ बोला, "राणी कार्य बडा कठिन और महत्वपूर्ण है । कही बाप और भाई के मोह में विस्मृत न कर देना ।"

"नही राणा जी, नही !"

हम्मीर ने झपट कर राणी को आलिगन मे आबद्ध कर लिया ।

दूसरे ही दिन एक सदेशवाहक चित्तौड इस आशय का पत्र लेकर गया । हम्मीर और मौजीराम को पूरा विश्वास था कि जेसा इस बात को अस्वीकार नही करेगा । वे सभी लोग प्रजा मे चित्तौड पर आक्रमण करने का प्रचार-प्रसार करने लगे । अनगसिह इन दिनो अत्यन्त उन्मत्त हुआ घूमता था । शस्त्रो का निर्माण घर-घर जारी था । मेरा अपने भीलों को सगठित कर रहा था । जो गयेती उसका सहयोग नहीं करते थे, उन पर देश द्रोह का अपराध लगा दिया जाता था और तब उसका शक्ति से दमन किया जाता था । चारो ओर मेवाडी वीरो मे उत्साह नजर आ रहा था । बरवडी ने पाच सौ घोडो की हम्मीर को और सहायता दी ।

जेसा ने बहिन का अनुरोध स्वीकार कर लिया ।

राणी ने विदाई ली ।

हम्मीर ने अन्तिम बार राणी को एकान्त मे ले जाकर कहा, "राणी ! यह चाल हमारी अन्तिम और अत्यन्त महत्वपूर्ण चाल है । यह विपरीत पड गई तो तुम्हारा सारा सम्मान और मान समाप्त हो जायगा । चित्तौड की प्रजा तुम्हे कलंकिनी और अपवित्र कहेगी ।" हम्मीर के अधरो पर कुटिल मुस्कान नाच उठी, "पवन भी कह रहा था कि राणी कही भाइयो के स्नेह मे दुर्बल न हो जाय और हमारी योजना का रहस्योद्घाटन न कर दे । देखो राणी, यदि तुम्हारे मन मे यह विचार भी आया तो समझ लेना कि तुम्हारा इस संसार मे कोई भी नही है । जिस हम्मीर ने समस्त मेवाड का विरोध सह कर तुम्हे अपने हृदय की साम्राज्ञी बनाए रखा, वह हम्मीर तुम्हारे रक्त का प्यासा हो जायगा । क्योंकि हम्मीर अपने वैयक्तिक सुख से अधिक देश को समझता है । अपने प्राणो से अधिक उसे सारी प्रजा के प्राणो की चिन्ता है ।"

राणी ने सिसक कर कहा, "आखिरी सांस तक मैं आपकी हूँ, चित्तौड की हूँ ।"

"मुझे तुमसे ऐसी ही आशा थी । मै यह भी जानता हू कि तुम उन भाइयो की तनिक भी चिन्ता नही कर सकती, जो तुम्हे राजनीति का एक अस्त्र समझते हो । तुम्हारे हृदय मे उस बाप के लिए किंचित भी आदर नही है, जो तुम्हे अपनी लिप्सा की पूर्णता का साधन मात्र मान कर चलता है ।"

विदाई के सार्थ ने प्रस्थान किया।

अन्तिम बार मौजीराम ने हम्मीर से फिर गुप्त मन्त्रणा की।

लगता था कामदार इस यात्रा से आवश्यकता से अधिक चंचल हो उठा है।

आगे-आगे घोड़े।

घोड़ो पर शस्त्र-सज्जित सैनिक।

बीच में राणी की डोली।

स्वामिभक्त भील कहारो की श्रम से उत्पन्न संगीतात्मक हुँकार।

पीछे से फिर सैनिक।

एक ओर अपना पृथक अस्तित्व बताता हुआ मौजीराम का घोड़ा।

कुछ दासियाँ और दास।

धीरे-धीरे यह सार्थ पर्वत की वक्र-वीथियो मे लोप हो गया।

हम्मीर ने पवन सी से कहा, "हमारी सफलता निश्चित है।"

२२

मन्त्रणा-कक्ष में आज समस्त योद्धा एकत्रित थे।

चित्तौड़ से संदेश वाहक आया था। यह सन्देश वाहक और कोई नही था। महान पराक्रमी पवनसी का पुत्र जैतसी था। उसने सारी उपस्थिति के मध्य खड़े होकर कहा, "राणी ने अत्यन्त कौशल से अपने भाइयो को अपनी ओर मिलया। उन्हें यह विश्वास दिलाया कि वह अब यहां से कभी नहीं जाएगी। वह सदा-सदा के लिए तुम लोगों के पास रहेगी। उसने अपने भाइयो से यह भी कहा कि हम्मीर के पास कुछ नही है। न रण शूरमा और न रण-आयुध। ऐसी दशा मे उससे आक्रमण की आशा रखना मूढता है और कामदार जी ने वहां के नए

द्वारपालो को धनादि देकर अपनी ओर मिला लिया है। हरिसिंह अपने मुख्य सरदारो के साथ मीणो आदि के विद्रोह को दबाने लिए के गए हुए हैं। ऐसे समय मे आक्रमण ठीक रहेगा। जेतसी ने यह भी बताया कि राणी अन्न जल सब की चिंता छोड कर केवल चित्तौड की स्वाधीनता मे तन्मय हो गई है। वह अपने पीहर के विनाश की ही बात करती है।

हम्मीर यह सुन कर कुटिल मुस्कान बिखेर उठा। जैसे उसका प्रयोग राणी पर ठीक बैठा है।

हम्मीर ने उसके बैठने पर उठकर कहा, "बारू भी आ गया है। महासेनापति अनगसिंह की रणवाक्षा उद्विग्न हो उठी है। सारे सरदार कल ब्राह्म मुहूर्त पर प्रयाण करना चाहेगे।"

"हा।"

'फिर यह घोषणा समस्त स्थानो पर करवा दो। आज से हम प्रण करते है कि या तो चित्तौड को मुक्त करा कर दम लेगे अथवा उसके पवित्र आगन म सदा सदा के लिए सो जाएगे। हम शक्तिशाली है। राजनीति दाव पेचो म हम किसी से कम नही है। हमे अपनी रण नीति पर गर्व है। अवसर की प्रतीक्षा भी समाप्त हो गई है। अब अबेर उचित नही। अब प्रयाण करना है, प्रयाण।"

एक सरदार ने खडे होकर कहा, "हम राणा जी की आज्ञा को दवाना मानकर चलेगे। अब देर ठीक नही है।"

अनत ने बीच म आकर कहा 'अभी म म साम दाम भेद नीति

किक निभयता छा गई। उसने अपनी खग की धार पर अपना अँगूठा लगाया। एक पतली रक्त-धारा बह उठी। सभी ने अपने-अपने मस्तक पर हम्मीर के खून का टीका लगाया और प्रयाण की तैयारियाँ करने लगे।

वह केलवाडा की अन्तिम रात्रि थी। मत्रणाकक्ष मे तीव्र दीपक प्रज्वलित थे। हम्मीर, मेरा और अनगसिंह गभीरता पूर्वक मत्रणा कर रहे थे। सैन्य-सचालन कैसे किया जाय ? दो तरह की सेना थी हम्मीर के पास। घोडे और पैदल।

इस मंत्रणा मे यह निश्चय हुआ कि कुछ गुप्तचर वरावर चित्तौड और हमारी प्रयाण-सेना का सम्वन्ध वनाए रहेंगे। हम दिन मे प्रयाण नही करेंगे। दिन मे प्रयाण शत्रु को सावधान कर सकता है। पहली टुकडी अनगसिंह के निर्देश मे रहेगी, दूसरी मेरा के, तीसरी जेतमी के। हम्मीर उस टुकडी का सचालन करेगा जो सर्व प्रथम चित्तौड मे प्रवेश करेगी।

ब्राह्म मुहूर्त मे सेना ने प्रयाण किया।

सुसप्न योद्धा भी इस सवाद को सुनकर हम्मीर के साथ हो गए और एक रात हम्मीर ने चित्तौड के किले पर आक्रमण कर दिया। द्वारपाल उससे मिल चुके थे। जेसा अकेला था।

पडालपोल के समीप वडा घमासान युद्ध हुआ।

नर-मुड और रक्त की नदियाँ वह उठी। जेसा हालाकि तैयार नही था, फिर भी उसने अत्यन्त पराक्रम मे सामना किया। उसका और अनग का द्वन्द्व देखने को वनता था। ऐसा लगता था कि दो मदमस्त गज परस्पर भिड रहे हो ? युद्ध-पिपासु अनग राक्षस की भाँति दहाड मार-मार कर गर्जता था। उन दोनो की तलवारें टकराती हुई ऐसी प्रतीत होती थी मानो विजलियाँ भिड गई हो।

उधर हम्मीर, जेतसी और मेरा ने त्वरापूर्वक गढ को चारो ओर से घेर लिया। जेसा के सैनिक भी सम्पूर्ण शक्ति के साथ लड रहे थे

सख्या मे वे बहुत कम थे पर वीरता उनकी भी दर्शनीय ही थी। ऐसा लगता था कि इस अप्रत्याशित आक्रमण से वे घबरा अवश्य गए थे, पर वे पराजय स्वीकार नही करेंगे। वे टुकडे-टुकडे होकर टूट जाएँगे पर झुकेंगे नही।

रात बीत गई।

दिन निकला।

अनगसिंह और जैसा दोनो लडते लडते टूट रहे थे।

रक्त-भूमि का भयावना दृश्य मन मे घृणा का संचार कर रहा था।

अनगसिंह की तलवार टूट गई थी। जैसा की तलवार हाथ से छूट गई थी। तब दोनो आपस मे बर्बर पशु की तरह भिड गये। उनकी भिडत भयकर थी। लगता—दो नर-पशु समस्त मानवीयता का परित्याग करके लड रहे हो।

अप्रत्याशित हम्मीर की जय जयकार हुई।

जैसा उन्मादग्रस्त प्राणी की तरह अनगसिंह पर टूट पडा। अनग इस आक्रमण को नही सह सका। उसके पीछे बुर्ज था, अनग बुज से गिर पडा। तब जैसा अश्व पर आरूढ होकर भाग गया।

हम्मीर तब तक वहाँ आ गया था। एक बार उसने गढ के रास्ते को देखा। भयकर और निर्गत दृश्य था। आहतो, मृतकों और अर्द्ध-मृतकों से वह रास्ता पट गया था।

हम्मीर ने [illegible] पर महावीर हनुमान का चिह्न अकित लाल रंग का झंडा लहरा दिया।

शान्तिमय उत्सव हुआ।

इस अवसर पर हम्मीर ने अपने सच्चे साथियो को राज-सम्मान प्रदान किया। विशेषतः मेरा, पवनसी और वारूकी तथा एक घुड़सवार चरवडी को लेने के लिए भी भेज दिया।

सिंहासन पर आरूढ होने के बाद कामदार मौजीराम ने उठकर कुछ कहने की आज्ञा मांगी।

हम्मीर ने उसे आज्ञा दे दी।

कामदार मौजीराम हम्मीर को प्रणाम करके बोला, "चित्तौड विजय हमारी सबसे बडी विजय है और महाराज अजयसिंह जी के अंतिम स्वप्न की पूर्ति भी है। मैं इस विजय का सारा धन्यवाद महाराणी सा को देता हूं। उस महाराणी सा को जिसने सच्ची क्षत्राणी की भांति सीसोदिया कुल-लक्ष्मी का नाम सार्थक किया। कौन इसे महाराणी पद्मिनी से कम शीलवान, पराक्रमी और तेजस्वी कहता है।"

बीच में ही राजपुरोहित उठ खडे हुए। उनकी शिखा चाणक्य की तरह गो-पद जितनी थी। उनका उन्मत ललाट श्री से दीप्त था। वे उठ कर क्षमा याचना करके बोले, "कामदार जी, कदाचित अतीव प्रशंसा करके कोई उच्च पद प्राप्त करना चाहते हैं, किन्तु उन्हें इतना ध्यान अवश्य रहे कि वे उपमा देने के पूर्व उस वीरांगना, मर्यादा और धर्म की साक्षात् प्रतिमूर्ति महाराणी पद्मिनी के आदर्श-कृत्यों का भी मूल्यांकन कर ले। निष्कलुष देवीसा का नाम ही तारणहार है। और सोनगर राणी विधवा है।"

हम्मीर का हाथ खग पर चला गया।

राणी आर्तनाद कर उठी।

हम्मीर ने खडे होकर कहा, "राजपुरोहित, राणी सा का अपमान कर रहे हैं। उन्हें मालूम रहना चाहिए, राणी के ही प्रताप से हमे चित्तौड मिला है।"

कामदार ने बीच में कहा, "महाराज शांत रहिए, इसका उत्तर मैं दूंगा। राणी की इस उपस्थिति मे सबसे अधिक मैं जानता हूं। राज-

पुरोहित जी का आक्षेप मेरे सिर आँखों पर है। किन्तु राजपुरोहित जी के पास कोई ऐसा प्रमाण है जिसके द्वारा वे कह सकते हैं, सिद्ध कर सकते हैं कि राणी का बाल्यकाल मे विवाह हुआ था ?"

"प्रमाण ही नही, साक्षी भी है।" राजपुरोहित बोले, "विवाह मडप मे आपने और स्वय मालदेव चौहान ने अपने मुख से यह कहा था।"

कामदार ने तनिक मुस्कराकर कहा, "यह राजनीतिक चाल भी हो सकती है।"

"क्या कहते हो मौजीराम ?" हम्मीर ने बीच मे ही कहा।

मौजीराम ने पुन प्रणाम करके कहा, "अपराध के लिए क्षमा माँगता हूँ। प्राणो की भिक्षा भी चाहता हू। अगर राणाजी मुझे क्षमा कर दे तो मैं आज सारे दरबार मे सत्य और तथ्य प्रस्तुत कर दू।"

"मैं तुम्हे क्षमा करता हू।"

राणी के कान खडे हो गए। वह श्वास रोक कर बैठ गईं।

मौजीराम ने सारी उपस्थिति पर दृष्टिपात करके कहा, "राजा मालदेव राणाजी को विवाह के बहाने जालोर बुलाकर समाप्त करना चाहते थे। उन्हे बुलाने के बाद यह षडयन्त्र विफल हो जाने के कारण चौहान नरेश बडे सकट म पडे। वह तो क्या करे ? वे मेरे पास भागे-भागे आए। मार्मिक शब्दो म अनुनय विनय करने लगे। मैने तुरन्त सोचा और उन्हे यह कहा कि आप कह दो कि राजकुमारी विधवा है। विधवा कन्या चित्तौड की महारानी नही बन सकती और मैने तुरन्त पूरी कहानी बना दी। बचपन का विवाह, पति का रण क्षेत्र मे मर जाना और इस रहस्य का राजकुमारी को न बताना यह सब मेरी काल्पनिक कहानी मेरे द्वारा रचित है। इसके पश्चात परिस्थिति ऐसी बिगडी कि हम राजकुमारी का पुन विवाह नही दे पाए। हालाकि चौहान रानी ने राजकुमारी का कहा [illegible], पर उस [illegible] नही हुआ।

और आज तक किसी ने इस रहस्य को नही जाना।"

'क्या!' पद्मिनी ने पूछा।

"इसीलिए कि राणी सा की विद्रोह और प्रतिशोध की भावना कम न हो। मैं चाहता था कि राणी सा अपने पीहर वालो से गहरी द्वेषता रखें और वह हमारे साथ मिल कर हमे बल प्रदान करें। और आप सबने राणी सा का प्रतिशोध देख ही लिया।"

दरबार में सन्नाटा छा गया।

कामदार ने विश्वस्त स्वर मे कहा, "मैं अपने धर्म और अपने परिवार की सौगन्ध खाकर कहता हूं कि राणी सा विधवा नही है। वह कुमारी है। गंगा की तरह पवित्र और श्रेष्ठ।"

हम्मीर के मुख पर सहस्त्र सूरज चमक उठे।

दरबार मे खुशियो पर खुशियाँ छा गई।

———

Youtube.com/ Alpana Verma

२३

राणी दिन भर चित्तौड के गढ का अवलोकन करती रही। पद्मिनी को जौहर का स्थान। वह सुरग जो भीतर-भीतर जौहर के गौमुख-कुड तक गई हुई थी। इसी कुड में सभी जौहरव्रत की नारियो ने स्नान किया था। महाराणी और अन्य वीरागनाओ ने इसी गुप्त रास्ते से जाकर जौहर किया था।

महाराणी पद्मिनी का जल के मध्य स्थित महल। वह स्थान जहाँ से उमे दर्पण मे पद्मिनी का प्रतिबिम्ब दिखाया गया था।

"सचमुच यह स्थान प्रशसा के योग्य है वरजी, कितना कलात्मक निर्माण है इसका। हम इस दर्पण मे उसकी प्रतिछवि ही देख सकते है पर वैसे नही।" राणी ने कहा।

वह नौका मे बैठकर पद्मिनी के महल मे गई।

उस महल मे वह मत्रमुग्ध सी खडी रही। देखते-देखते, उसके नेत्र

अश्रुओं से भर आए। वह बरजी से बोली, "आततायी खिलजी को क्या मिला? क्या रूप और यौवन मनुष्य को इतना पागल बना सकता है?"

बरजी ने कुछ कहना चाहा। तभी गढ की कोई पुरानी दासी बोल उठी, "उसकी आयु साठ के लगभग थी। चेहरा झुर्रियों से भरा पड़ा था। आँखें भीतर धँस गई थीं। मुँह में दाँत एक भी नहीं था।"

"राणी सा! खिलजी को यहाँ श्मशान मिला। मानवी रक्त मांस से उत्पन्न विषाक्त धुआँ। सच, वह भी चित्तौड की दुर्गति देखकर काँप उठा था।"

रानी महल को देखने लगी।

मुख्य द्वार पर हाथियों की लड़ी।

पृथक जनानी ड्योढी।

दासियों के रहने के लिए पृथक कक्ष।

वहाँ वे बहुत देर तक रहीं। वापस आते हुए वे कालिका जी के मंदिर में भी गईं। मंदिर भव्य-पाषाण खंडों से निर्मित था। पाषाण खंडों पर सूर्य के चित्र अंकित थे।

इधर-उधर घूमते-घूमते संध्या हो गई।

आज चित्तौड की छवि देखते ही बनती थी। सभी घरों में घी के दीए जल रहे थे। लोग जश्न मना रहे थे। नृत्य-गीत का सागर लहरा उठा। लोग मस्ती में निमग्न थे और हास-परिहास कर रहे थे।

हम्मीर की रानी ने जलाशय के मध्य पद्मिनी के महल में रहना पसन्द किया। महल को तत्काल सज्जित किया गया। उसकी अट्टालिकाओं को नाना प्रकार के जल की सुगन्धि से सिक्त किया गया। उस पर मगन पताकाओं को सुशोभित किया गया। वातायन और द्वारों पर पुष्पों की सज्जा की गई।

रानी ने अपने अंग-प्रत्यंग को शोभित आभरणों से सज्जित किया। उसने मौक्तिक कण्ठहार एवं अन्य अलंकार भी पहने। कर्ण-कुण्डल लटकते [illegible] उसके मुख की श्री वृद्धि कर रहे थे। [illegible] के दोनों की [illegible]।

सर्वत्र सुवास का साम्राज्य था।

हम्मीर नौका पर सवार होकर महल आए।

राणी अगवानी करने के लिए आगे बढी।

हम्मीर हतप्रभ-सा राणी के अप्रतिम रूप को देखता रहा।

"आज का दिन कितना शुभ है राणी! हमारे सकल मनोरथ पूर्ण हो गए।"

"हाँ राणाजी, मनोरथ क्या, मुझे ऐसा प्रतीत होता है कि मुझ पर से प्रभु का शाप उतर गया है।"

"नहीं राणी! यो कहो कि रुष्ट प्रभु हम पर प्रसन्न हो गए हैं।"

हम्मीर आगे-आगे थे और रानी पीछे-पीछे। दो दासियो के अतिरिक्त वहाँ कोई नहीं था। रानी ने पेय-पदार्थ के स्वर्णिम-पात्र हम्मीर के समक्ष रख दिए।

हम्मीर ने मुस्कराकर कहा," रानी को यह विदित होना चाहिए कि हम कोई भी मादक-पेय का पान नही करते। हमे मादक पदार्थों से घृणा है।"

"राणा जी, इसमे केवल दूध है। केसरिया दूध।" कह कर राणी ने हम्मीर की ओर प्रसन्न मुख से देखा।

हम्मीर अपना भारी अँगरखा खोलकर बैठ गया। सिर की पगडी को उसने एक रजत-काष्ट निर्मित चौकी पर रक्खा।

राणी ने दासी को पुकारा, "वरजी सुनना।"

हम्मीर ने पूछा, "दासी को क्यो बुलाया है।"

"आपके पादुका के लिए।"

"क्यों, क्या मैं अपनी पादुका स्वय नही खोल सकता। सरदार हम्मीर उन राणाओ मे नहीं है जो अपने निजी कर्म को भी दूसरो के सम्बल बिना नहीं करते। मैं स्वय किसान युवती का बेटा हूँ। प्रत्येक कार्य मैं अपने ही हाथ से करना अधिक पसद करता हूँ। और वह व्यक्ति भी क्या जो अपने कर्म में निष्प्रयोजन ही दूसरों को कष्ट पहुँचाए। ईश्वर ने

हमें ये दो हाथ निरन्तर कुछ कम करने लिए दिए हैं। चरण चलने के लिए है। फिर हम इतने अकर्मण्य क्यो बनते हैं जिसमे समय पर हमे अनुचित कष्ट उठाना पडे। मैं तुम्हे भी परामर्श दूंगा। वीरांगनाओ की भांति विपुल विलास की वारिधि से दूर रहकर अपना काम खुद करो।"

"अगर राणाजी को मेरे कथन से कष्ट हुआ तो मैं क्षमा चाहती हूँ।"

"नही राणी, आज मैं तुमसे क्षमा मागता हूँ। मैंने पति होकर पति के कर्तव्य को नही निभाया। जब मैंने देखा यह युवती युवती नही, राजनीति को सफल बनाने का साधन मात्र है तो मैंने भी तुम्हारे साथ एक सीमा तक वैसा ही व्यवहार किया। हालांकि तुम्हारे सम्मुख मेरी वह भावना मर जाती थी। तुम्हारे मुख की अपूर्व अलौकिक उज्ज्वलता का अवलोकन करके मेरे मन मे वह विचार हठात् उठता कि यह नारी अग्नि मे तपित कुन्दन की भाति शुद्ध है। सच, तुम्हारा सानिध्य शाति और सुख की सृष्टि करता है।"

"राणा जी के स्पष्ट कथन ने मेरे मन मे उनका सम्मान और बढा दिया।"

"राणी! आज पूज्य बाबा सा जीवित होते तो कितना आनन्द

हम्मीर उन पर दृष्टि जमा कर बोला, "मौजीराम ने रहस्य का उद्-घाटन करके मेरे मन के सन्देह को दूर कर दिया, पर यहां के सामन्त और उमरावो के मन में यह सन्देह सदा बना रहेगा। उन्हें विश्वास नहीं आएगा कि राणी विधवा नहीं है। वे मौजीराम के इस कथन को भी राजनीति चाल समझेंगे।

"समझेंगे तो समझते रहें। मैं यह जानती हूं कि कामदार जी इतना भयानक झूठ नहीं बोल सकते। वे अपने पुत्र और परिवार की सौगन्ध नही खा सकते।"

"इसके उपरान्त मैंने उससे एकात मे दुबारा पूछा। वह विगलित हो उठा। प्राय जब मैं उस पर मिथ्या सन्देह करता हूं तब उसे बड़ी पीड़ा होती है और वह असह्य हो जाता है। इसलिए यह निर्विवाद रूप से कहा जा सकता है कि तुम विधवा नहीं हो। चाहे हमारे सामन्त और ससार इसका अर्थ जो भी क्यो नहीं लगाए।"

चांद बदली मे छिप रहा था।

दीए का स्नेह घट रहा था, पर हम्मीर के हृदय मे प्यार का नूतन प्रदीप प्रज्वल्लित हो रहा था।

२४

आदि कुल-देवता सूर्य की अर्चना मे निमग्न था हम्मीर। मदिर से घटाध्वनि और पुष्पो एव धूप नैवेद्य की सुगन्धि आ रही थी।

आकाश की अरुणिमा लुप्त हो गई थी। सूरज की उज्ज्वल किरणें गढ के कगूरो को स्पर्श करने लगी थी। हम्मीर पीताम्बर पहने हुए बाहर निकला। सूर्य को अर्घ्य चढाता हुआ मत्रोच्चारण करने लगा—

"हे सस्कारक और अनिष्टहन्ता सूर्य! तुम जिस दीप्ति द्वारा प्राणियों के पालक बनकर जगत को देखते हो, हम उसी की प्रार्थना करते है।"

"अनुरूप दीप्ति युक्त सूर्य ! आज उदित होकर और उन्नत गगन मे चढ कर मेरा हृदयरोग [या मानस रोग] और हरिमाण ['हलीमक' रोग या शरीर] रोग दूर करो।"

[ऋगवेद, सूक्त ५०, प्रथम अष्टक
अध्याय ४ ले० रामगोविंद त्रिवेद]

अर्चना से निवृत होकर वह विश्राम-गृह मे गया।

एक प्रहरी ने सत्वरता से आकर सूचना दी। "देवी मां बरवड़ी की सवारी आ रही है।" चित्तौड आए काफी दिन बीत गए।

हम्मीर ने तुरन्त राज्य वस्त्र पहने और स्वय सदल बरवडी की अगवानी के लिए गया। हनुमान पोल पर हम्मीर मां से मिला। मां रुग्ण थी और उसके चेहरे पर पीताभा स्पष्ट झलक रही थी। हम्मीर उसे अनिमेष दृष्टि से देखता रहा। क्षण भर के लिए वह विमूढ हो गया। मां कितनी वृद्धाप्राय हो गई है ? फिर उसने आगे बढकर मां के चरण स्पर्श किए।

मा ने डोली से उतर कर हम्मीर को छाती से लगा लिया। उसकी आंखो मे अश्रु उमड़ता आया।

"बेटा इधर मुझे तुम्हारी ओर (याद) बहुत आ रही थी। सोच रही थी कि चित्तौड़ विजय के पश्चात् क्या मेरा बेटा मुझे भूल गया

उस दिन वरवडी के पास हम्मीर वहुत देर तक बैठा रहा। वरवडी ने उसे वताया कि अभी चित्तौड पूर्ण रूप से सुरक्षित नही है। मुझे ऐसा प्रतीत हो रहा है कि अभी चित्तौड पर एक भयानक आक्रमण और होगा। मेरा तुम्हें आदेश है कि तुम रात दिन शस्त्रो के निर्माण मे और सेना की वृद्धि में लग जाओ।"

"जो हुक्म।"

"वडे-वडे सरदारों को हुक्म कर दो कि वे अपने ठिकानो मे सेना को तैयार रखें तथा वे स्वय चित्तौड में ही रहें, ताकि युद्ध के समय योद्धाओ के लिए इधर-उधर दौडना न पडे। मेरी ज्योतिष विद्या कहती है कि अभी एक वार भयानक रक्तपात होगा।"

"माँ! चारण अमरदान जी अहिंसा की वातें करते हैं। चारण जी आजकल हिंसा और युद्ध के विरुद्ध हो गए हैं। अव उन्होंने तलवार और वीरो मे उत्साह वर्धन करने वाली कविता की रचना ही छोड दी है। कहते हैं, हिंसा व्यर्थ है, युद्ध मनुष्य को राक्षस वना देता है।" पवन सी ने प्रश्न किया।

"उनका कथन भी गलत नही है, पर जव तक कोई राजा अपने आपको इतना महान और शक्तिशाली नही वना लेता कि उसका आतक विद्रोह करने ही न दे तथा दूसरी शक्तियाँ उसका लोहा मान लें, साथ ही उसका साम्राज्य अखड हो, तभी वह हिंसा का परित्याग कर सकता है। सम्राट अशोक इसका एक उदाहरण है। पहले वह चड और प्रचड था, वाद मे वह प्रियदर्शी वना। लेकिन अभी हम चारण जी के महामत्र अहिंसा को अपना लें तो चित्तौड और हमारा अस्तित्व सकट मे पड जाएगा। ऐसी अहिंसा मनुष्य को अकर्मण्य वनाती है और उसका परिणाम वही होता है जो गजनवी के आक्रमण पर सोमनाथ मदिर का हुआ था। तुम जानते हो, वौद्धो के वैक्तिक मोक्ष ने मनुष्य को उदासीन वना दिया था। उनमें दूसरे के प्रति विरक्त कर दिया। परिणाम यह निकला, विद्रोहियो और विदेशियो ने भारत पर आक्रमण करना शुरू

कर दिया। तब चाणक्य ने नये अध्याय का सूत्रपात किया।" हम्मीर ने क्षण भर रुक कर कहा, "काका सा की दो बातें बड़ी सफल सिद्ध हुईं। अल्प बचत योजना द्वारा देश की शक्ति और निर्माण के लिए धन-सग्रह और असहयोग द्वारा शत्रु को निबल और दरिद्र करना। मैं भविष्य मे आवश्यकतनुसार इनको प्रयोग मे लूंगा।"

बरखड़ी के अधरो पर ममता भरी मुस्कान नाच उठी। उसने हम्मीर की पगड़ी पर हाथ रख कर कहा, "अब तुम्हे कोई भी पराजित नहीं कर सकता। वीरता के साथ विद्या की वृद्धि और प्राचीन घटनाओं से शिक्षा, बस यही निपुण पुरुष के गुण होते है।"

मेरा ने कहा, "मुझे विश्वस्त रूप से यह पता लगा है कि जैसा बादशाह मुहम्मद तुगलक की शरण मे गया है। न्यग और उत्तेजित स्वभाव का बनी तुगलक स्वय चित्तौड़ पर आक्रमण करने आ रहा है।"

"बरखड़ी के कान खड़े हो गए। उसकी अद्ध-मुदित आख चमक उठी। बोली, 'यवन बादशाह अपनी क्या, अपने सारे मातहतों की सेनाएँ लेकर भी आ जाय तो चित्तौड़ को विजय नहीं कर सकता। चित्तौड़ अब हम्मीर का ही रहेगा।"

हम्मीर ने बारूजी को अपने पास बुलाया और उसे सिरनाम-गार घोषित करके पौन का नेग दिया और कई गावों के सहित आतरी गांव का ताम्रपत्र दिया। उसे अपने हृदय से लगा कर कहा, "तुम आज से चित्तौड़ के मुख्य चारण हो। तुम्हारी रक्षा हम्मीर का वंश सदा करता

लिखा है, लेकिन हम्मीर पुरुषार्थ करना ही छोड दे तो भाग्य क्या करेगा ? मैं समझती हूँ रण-नीति कुशल कामदार जी को शीघ्र बुला कर कोई न कोई निश्चय कर लेना चाहिए।

पवन सी ने कहा, "माँ ठीक कहती है।"

हम्मीर ने कहा, "आज सध्या-वेला एक सभा रख ली जाय।"

"जैसी राणा जी की आज्ञा।" कई स्वर एक साथ सुनाई पडे।

आज्ञा पाकर सब सरदार चले गए।

हम्मीर और बरवडी दोनो रह गए।

"मैं अभी राजवैद्य को आपकी सेवा मे बुलाता हूँ। मेरी इच्छा है कि आपको कोई श्रेष्ठ औषधि दिलाई जाय।"

"इस उम्र मे मुझे औषधि की नही, ईश्वर भजन की आवश्यकता है। बेटा, अब चद ही दिनो की मेहमान हूँ। तुम एक विजय और कर लो बस, मेरी यही कामना है।"

"माँ ! अभी मुझे तुम्हारी बहुत आवश्यकता है। हम्मीर के अच्छे दिनो मे तुम नही रही तो हम्मीर अपने आपको बहुत भाग्यहीन समझेगा।"

बरवडी ने स्नेहाभिभूति स्वर मे कहा, "मैं ज्योतिषी हूँ। मेरा कर्तव्य है कि अपनी विद्या के चमत्कार से अपने स्वजनो में उस आत्मबल का सचार करूँ जो उनके जीवन और जगत के निर्माण मे सच्चा सम्बल बने। तुम्हारे पर मैंने किसी प्रकार का उपकार नही किया। तुमने मुझे माँ कहा और मैंने तुम्हे ममता दी। तुम्हारे पूर्वजो का हम पर उपकार भी हो तो आश्चर्य नही। यह उसका प्रत्युपकार भी हो सकता है। किन्तु ऐसे समय मे तुम्हे अपने उन साथियो को कभी विस्मृत नहीं करना चाहिए, जिन्होंने तुम्हें प्रारभिक काल मे सहायता दी थी।

"ओह !" हम्मीर चौंक पडा, "मैं आपके पास इतना तन्मय हो गया कि कुछ ध्यान ही नही रहा। अगुनायानोर का भील नेता आया हुआ है। वह मेरी बाट जोह रहा है। माँ ! इन भीलो ने उपकार का कोई बदला नही। इन्होंने स्वय रातो को अपनी आँखों में विश्राम कराया

और हमे निश्चितता की नीद दी, ये स्वय भूखे-प्यासे रहे पर हमे अन्न दिया, ये लोग हर घडी, हर क्षण धनुष बाण सँभाले कैलवाडा की पहाडियो मे घूमा करते थे। हमारा और उनका बन्धन अटूट रहेगा।

"जाओ बेटा पहले उनसे मिलो।"

प्रतीक्षागृह मे अगुनायानोर का भील नेता बाका और मेरा बैठे थे। हम्मीर के आगमन की सूचना प्रतिहारी ने दी। बाका और मेरा अपने आसनो को छोड कर खडे हो गए। हम्मीर ने उन्हे बैठने का सकेत किया।

भील नेता लोहे का एक अत्यन्त सुन्दर धनुष बाण लाया था। हम्मीर को भेंट करता हुआ वह बोला, "चित्तौड-विजय के उपलक्ष्य मे आपको हमारी यह भेंट है।"

हम्मीर ने बाका को हृदय से लगा कर कहा, "बाका, तुम्हारे उपकारो से सारा मेवाड कृतज्ञ है। चाहे इतिहास ही क्यो न बदल जाय पर मेवाडाधिपति के वीर अगुनायानोर के भीलो के उपकार नही भूल सकते। हम तुम्हे अपनी भील सेना का सेनापति नियुक्त करते हैं और तुमसे आशा रखते है कि तुम सदा की तरह हमारे स्वामि-भक्त रहोगे। हमारे मे तात्पर्य यह है चित्तौड के सिंहासन से हम तो तुम्हारे मित्र है। हम मे और तुम मे तनिक भी अन्तर नही है।"

"मै आपके और आपके शासन के प्रति सदा वफादार रहूंगा।"

"फिर तुम तुरन्त अपने आदमियो को शस्त्रो से सज्जित करके यहाँ आ जाओ। सुना है, चौहान मालदेव का बेटा जैसा दिल्ली के बादशाह के पास गया है। गुप्तचरो की यह भी सूचना है कि स्वय बादशाह खिलजी की तरफ चित्तौडगढ को विजय करने के लिए आने की खबर रहा है। ऐसी स्थिति मे हमारा यह प्रथम कर्त्तव्य हो जाता है कि हम अधिक से अधिक शक्ति जोडकर शत्रु का सामना करे।"

बाका ने कहा, "... कल से मै दरबार मे उपस्थित हो जाऊगा।"

हम्मीर ने उसे सम्मानित करने के हेतु एक तलवार दी।

———

मन्त्रणा कक्ष में मेवाड के सभी सामन्त एकत्रित हुए। दिल्ली की अपार सेना और महान शक्ति का सामना करना था। पवन सी, मेरा, जेतसी, मौजीराम और अनेक सरदार।

मौजीराम ने सर्वप्रथम खडे होकर कहा, "हमारा गुप्तचर ब्राह्मण वश का उज्ज्वल नक्षत्र दीपचन्द सर्व प्रथम दिल्ली के सम्पूर्ण समाचार प्रस्तुत करेगा।

"यह दीपचद कौन है ?" सबकी आंखो मे प्रश्न नाच उठा।

मौजीराम ने कहा, "दीपचद हमारे राजपुरोहित का पुत्र है। जब मैंने इसके स्वभाव का अध्ययन किया और एक दिन उसे उत्सव में अपनी मर्यादा और धर्म के विपरीत रगशाला मे बनजारा बने हुए देखा तो मुझे पूर्ण विश्वास हो गया कि यह युवक एक चतुर गुप्तचर बन सकता है। और मैंने इसे सुयोग्य गुप्तचर की सारी बातें समझा कर दिल्ली भेजा। और यह वहां के सारे समाचार लेकर आ गया है।"

हम्मीर और अन्य सरदार विमूढ से मौजीराम की इस चतुराई को देखते रहे। अन्त में दीपचन्द उनके सम्मुख उपस्थित हुआ। वह बनजारे के भेप मे था। राजपुरोहित भी उसे नही पहचान सका।

उसने राणा को एव समस्त सामन्तो को प्रणाम करके कहा, "जेसा ने मुहम्मद तुगलक को चित्तौड के वैभव, सम्पत्ति और समृद्धि के बारे मे बडी-बडी कथाएं सुनाई हैं। उसने पद्मिनी की बात को पुन दोहरा कर कहा कि वहां अतुल धन और रूप बिखरा पडा है। अगर जहाँपनाह शीघ्र ही चित्तौड पर आक्रमण कर दें तो वे अतुल धन और जन पा सकते हैं, जिससे जहाँपनाह अपना कार्य सहजता से पूर्ण कर सकते हैं।"

दीपचन्द ने क्षण भर चुप रहकर यह भी बताया, "बादशाह का मस्तिष्क सुस्थिर नहीं है। प्रचड प्रजा का धनी होने के बावजूद इतना

जल्दबाज है कि उसके काम में सुप्रबन्ध का अभाव ही रहता है जिसका परिणाम सदा बुरा ही निकलता है। वह शीघ्र ही चित्तौड पर चढकर आने वाला है। मेरी राणा जी से प्रार्थना है कि वे शीघ्र ही तैयार होकर युद्ध भूमि मे पहले ही उतर जांय।"

हम्मीर ने उठकर कहा, "हमे आज ही अपने दूत दौडाकर अपने सामन्तो और समथको को यहां बुला लेना चाहिए और जितने ही सहज माग हैं, उन्हे अवरुद्ध करा देना चाहिए। अगर हमने तुगलक की सेना को बीहड पथो मे प्रवेश करा दिया तो हमारी विजय निश्चित है।"

पवनसी क्रोध से उन्मत्त हो उठा। उसकी आंखो मे सहस्रो तलवारें एक साथ चमक उठी। वह उठा और उसने तीव्र स्वर मे गजना की, "मुझे अनगसिह जी की बाते व्यथ लगती थी पर अब मुझे लग रहा है कि वह ठीक ही कहता था कि क्षत्रिय का एक ही धर्म है, एक ही कम है, वह है—युद्ध! उसे क्षण भर का विश्राम कहां? उसके जीवन मे कोई भी शाति का विराम-चिन्ह है? बलवान जब चाहे शाति से बैठे हुए प्राणियो पर आक्रमण करके उनकी शाति और सतोष को छीन सकता है। मेरी ऐसी धारणा होती जा रही है कि एक बार महान शक्ति का सचय करके सारी पृथ्वी को रोद दे और एक ऐसे राज्य की स्थापना कर दे जहा कोई किसी को अनुचित रूप से नही सताए।"

हम्मीर ने कहा, "पवनसी का कहना ठीक है, किन्तु अभी हमे वर्तमान स्थिति का सामना करना है।"

राणा ने कहा, "शीघ्र ही हमारी सेनाओ को प्रस्थान करा दिया

"तब ?" पवनसी ने पूछा।

"मैं समझता हूँ, हमें शीघ्र ही यहाँ से प्रस्थान कर देना चाहिए। भील, सामन्त और मीणा वीर सगठित होकर सामना करें।" हम्मीर ने कहा, "सामन्त श्री पवनसी सेनापति का पद सम्भाल लेंगे। जेतसी मेरे साथ रहेंगे, मेरा और वारूकी दाएँ-बाएँ से आक्रमण करेंगे।

"ऐसा ही ठीक रहेगा।" कामदार ने कहा।

"ठाकुर फतहसिंह का यह कार्य रहेगा कि वे कल बीस विश्वस्त सैनिकों को चारो ओर दौडा दें और वीरो को आह्वान कर दें।"

फतहसिंह ने उठकर कहा, "राणाजी निश्चित रहे।"

"चारण वारुकी युद्ध की घोषणा की खबर और वीरो मे उत्साह भरना तुम्हारा धर्म है। तुम चित्तौड के घर-घर मे इस बात का आह्वान कर दो कि एक बार फिर से जुझार बन जाएँ।"

"कल से हर चारण यहाँ वीरता का गीत गायेगा। उनके गीतो मे वीरो मे मृत्यु से लडने की गूँज होगी, पर्वत से टकराने का घोष होगा।"

हम्मीर ने सभा को समाप्त कर दिया।

हम्मीर आज राणी के महल मे न जाकर सीधा अपने कक्ष मे चला गया। वह उद्विग्न और चिंतित था। उसके मुख पर चिंता की रेखाएँ स्पष्ट झलक रही थी। रसोई से दासी ने आकर कहा, "महाराज, थाल कहाँ लाया जाय ?"

हम्मीर की भोजन करने की इच्छा नहीं थी। अत उसने दासी को जाने का संकेत करके कहा, "आज मेरे लिए थाल न लगाया जाय। मैं भोजन नहीं करूँगा।"

दासी गर्दन झुकाए चली गई।

अभी थोटा समय भी नही बाता था कि राणी ने कमरे मे प्रवेश किया। हम्मीर तब तक शय्या पर शयित हो गया था। उनका मुख गंभीर था। राणी ने चरण-स्पर्श करके कहा, "क्षमा चाहती हूँ, बिना आज्ञा आने के लिए। महाराज, आज भोजन क्यो नहीं कर रहे हैं।"

"इच्छा नही है राणी।"

"क्या फिर युद्ध का घोष होने वाला है।"

"हाँ, तुम्हारा जेसा दिल्ली के बादशाह की अतुल शक्ति लेकर चित्तौड़ पर आक्रमण करने आ रहा है। वह पुन चित्तौड़ मुझसे छीनेगा। वह अपने हाथ से अपनी बहिन का सिन्दूर गिराएगा।" राणी! क्या तुम उसकी सचमुच बहिन हो? मुझे कभी-कभी ऐसा लगता है कि तुम्हारे बारे मे जो कुछ सुना और कहा गया है, वह मिथ्या है। उसमे सत्य का शतांश भी नही। सभी कपोल-कल्पित और मनगढन्त! न तुम मालदेव की बेटी हो, न तुम जेसा और हरिसिंह की बहिन हो। ऐसा लगता है कि तुम उनकी राजनीति की एक साधन वस्तु हो। आज मैं तुम्हे कुछ कहना चाहता हूँ कि आखिर उसकी इतनी राजलिप्सा क्यो? चित्तौड़ हमारा है, हमारे पूर्वजो का है फिर तुम्हारे भाई का इस पर मन क्यो ललचाता है। फिर क्या उसे अपने बहिन के सुहाग की चिंता नही? चुप क्यो हो?"

राणी का मुख श्वेत हो गया। वह कुछ भी नही बोल पाई। वह सिर्फ रोती रही, रोती रही।

"तुम कुछ भी हो पर चित्तौड़ की महाराणी हो। मैं तुम्हारे पद मे जरा भी अन्तर नही आने दूंगा, पर इस बार मैं तुम्हारे भाइयो से कुछ निर्णय करूँगा। या अपना सर्वस्व विसर्जन कर दूंगा या उसको मृत्यु के हाथो सौंप दूंगा।"

राणी ने हम्मीर का चरण-स्पर्श करके रोदन भरे स्वर मे कहा, "मै प्रभु से प्रार्थना करूँगी कि आप मेरे सारे भाइयो को यमलोक पहुँचाने मे सफल हो, पर आप मुझे संदिग्ध-दृष्टि से न देखें। स्वामीजी! मुझे आपका हार्दिक प्रेम चाहिए। मेरा धर्म और कर्तव्य आपके सुख मे है। भोजन लाऊँ?"

'नहीं राणी।'

'थोड़ा सा भोजन करना होगा, आपको मेरी सौगन्ध।'

'अच्छा ले आओ।'

आशा के विपरीत कोई भी कार्य नही हुआ।

मुहम्मद तुगलक और जेसा की सम्मिलित सेना पूर्वी भाग से ही आई। बीहड पथ मे यवन सेना घबरा उठी। बहुत से यवन सैनिक जटिल पथ को पार करते करते गए। कुछेक अकाल मृत्यु को पा गए।

इधर हम्मीर अपनी सेना को लेकर कूच कर चुका था।

सीगोली के पास जहाँ यवन सेना ने पडाव डाला था, वही पर हम्मीर की सेना और तुगलक की सेना मे युद्ध हुआ।

हम्मीर और पवन सी के नेतृत्व मे यवन सेना पर सीधा आक्रमण किया गया। राजपूत मतवालो की भाँति शत्रु दल पर टूट पडे, पर वफा-दार यवन सैनिक व चौहान भी कम बहादुर नही थे। उन्होंने भी सुदृढ मोर्चा कायम रखा। हम्मीर के जीवन मे इतना भयकर युद्ध कभी नहीं हुआ था। देखते-देखते सहस्रों सैनिक आहत हो गए। खून की नदियाँ बह उठीं। दोनो ओर के सैनिक जान हथेली मे लेकर लड रहे थे। खूँखार भेडियों की तरह दोनो दल के वीर एक दूसरे पर टूट रहे थे।

हम्मीर अपनी विकराल तलवार को लेकर यवन सेना के मध्य बढ रहा था। वह सैकडो योद्धाओ का सहार कर रहा था। उसका अश्व निर्भय होकर बढ रहा था। हम्मीर की विशाल अजानुबाहो का एक-एक झटका दो-दो वीरो का प्राण हर रहा था। हर हर महादेव और अल्लाहो अकबर के नारो से आकाश गूंज उठा था।

इस भयकर रक्त-पात के मध्य हम्मीर की दृष्टि मालदेव के पुत्रो पर थी। अप्रत्याशित उसकी दृष्टि जेसा पर पडी। हम्मीर उस पर क्षुधित सिंह के समान टूट पडा। दोनो के विशाल खडग आपस में टकरा उठे। उनकी पाँवो के नीचे रुड-मुड पडे थे। शोणित की धारायें बह रही थीं।

हम्मीर ने कहा, "आज मैं तुमसे निर्णय करने आया हूँ।"

जेसा ने कहा, "छल से चित्तौड़ हथिया कर आपने समझा होगा, अब हम चैन की वंशी बजाएँगे ? पर चित्तौड़ चौहान मालदेव का है, सो मालदेव का ही रहेगा।"

हम्मीर ने वार किया।

अप्रत्याशित कई सैनिक उनके बीच में आगए और जेसा हम्मीर की आंखों से ओझल हो गया।

पवन सी ने आकर कहा, "यवन आगे बढ़ रहे है।"

हम्मीर ने कहा, "क्या कहते हो ?"

"हाँ राणा जी।"

हम्मीर ने पवन सी को झट से थोड़ा पीछा किया जहाँ उसके योद्धा थे। उसके कानों में कुछ कहा। पवन सी का घोड़ा हवा से बातें करने लगा। पवन सी के घोड़े को पीछे भागते देखकर हम्मीर के सैनिक विचलित हो गए, पर हम्मीर ने तुरन्त जोर से कहा, "आगे बढ़ो वीरो, विजय हमारी है। बढ़ो आगे बढ़ो।"

सैनिकों ने हम्मीर की तलवार को देखा और वे दुगुने वेग से युद्ध करने लगे। मृतक योद्धाओं की बाहर निकली हुई आँखें अत्यन्त वीभत्स दृश्य उत्पन्न कर रही थीं। ऐसा प्रतीत हो रहा था कि जैसे वे कुछ कहना चाहती है।

यवन सेना थोड़ी और अग्रसर हुई।

चारण हाथों में खंग लिए तेज स्वर में वीरों को ललकार रहे थे। हम्मीर ने दाएँ-बाएँ और की पहाड़ियों की ओर देखा। सेना और बारूदी क्या करने ना। उसने एक सैनिक को और लौटाया और उसे कहा कि कामदार जी को कहना कि यवन सेना आगे बढ़कर आ रही है पर वह थक चुकी है। सेना और बारूदी को कहो कि वे पहाड़ों पर से तीर बरसाते हुए तुरन्त आक्रमण करें। युद्ध का रंग बदल जायगा।"

हम्मीर तूफान से जा भिड़ा। तूफान का भीषण रूप हम्मीर के

स्वर्ग से टकराया। दोनो महायोद्धा के पैंतरे देखने के काबिल थे। अप्रत्याशित जेसा ने हम्मीर पर पीछे वार करना चाहा तभी पवन सी पीछे आ पहुँचा और उसने जेसा के वार को बीच मे ही रोक दिया।

जेसा ने ललकार कर कहा, "राजपूत भाग रहे हैं।"

तभी दाएँ-बाएँ से आकाश को गुंजाने वाली जय जयकार गूंजी। हर हर महादेव, जय एकलिंगेश्वर भगवान की जय, हर हर महादेव।"

और ऊपर से भीलों की भीषण तीर वर्षा आरंभ हो गई।

यवन सेना मे खलबली मच गई।

उधर वारूकी मृत्यु की तरह टूट पड़ा।

मौजीराम पीछे से अश्वो की सेना को लेकर टूट पड़ा।

इस भीषण तीन तरफे आक्रमण को यवन सेना नही सह सकी। वह बीच मे घिर सी गई। साझ होते-होते मृतको का अम्बार लग गया। इतना भीषण नर-संहार हम्मीर ने नही देखा था।

जब मालदेव का छोटा बेटा हरिसिंह उसके सम्मुख आया तो उसका खून खौल उठा। उसकी आंखो मे खून उतर आया और उसका मुख आरक्त हो गया। उसने हरिसिंह को अपनी वलिष्ठ बांहों मे भर लिया। उसकी भृकुटियां तन गई। आंखें आग बरसाने लगीं। और दूसरे ही क्षण उसने अपनी कटार से हरिसिंह को खत्म कर दिया।

पवन सी ने जेसा को पकड लिया।

तुगलक भागा, पर हम्मीर ने उसका पीछा किया और उसे जीवित ही पकड लिया। हम्मीर की विजय हो गई।

रात का पडाव था।

जेसा और मुहम्मद तुगलक हम्मीर के वन्दी थे, पर हम्मीर ने तुगलक साथ अत्यन्त सुन्दर व्यवहार किया। उसके सम्मान में किसी प्रकार की भी कमी न आने दी। पर उसने जेसा के साथ दुर्व्यवहार ही किया। उसे साधारण वन्दी का भोजन दिया और उसके पडाव में दीया तक नहीं जलने दिया।

राणा हम्मीर ने रात्रि की भयानक नीरवता मे किसी पुरुष का कठ स्वर सुना जो युद्ध की वीभत्सा का वर्णन कर रहा था। हम्मीर ने उस आदमी को बुलाया। वह कोई नहीं था वह था चारण अमरदान।

जगली कुत्तो का भौं-भौं! सियारो का हुआँ-हुआँ!

अधमृत व्यक्तियो की करुण चीत्कारो ने अमरदान को विक्षिप्त सा कर दिया। वह रात्रि के अन्धकार मे रणभूमि मे चक्कर लगाता रहा। फिर वह युद्ध के विरुद्ध कविता करने लगा।

हम्मीर ने चारण पूछा "चारण जी आप यहाँ कैसे पधारे?"

सिसौदिया-कुल-भूषण, पर-दुख-कातर, परोपकार व्रत-पालक, धर्म-प्राण एकलिगेश्वर दीवाण राणा हम्मीर जी की जय! मैं यहाँ युद्ध को देखने आया हूँ, उस विभीपिका को देखने आया हूँ जिसने मनुष्य से मनुष्यता छीन ली है। वह देखो, युद्ध के मदोन्मत्त वीरो की लाशो को, पानी की एक-एक बूद के लिए तड़प रही हैं। क्या किसी विजयी का यह कर्तव्य नही है कि वह इन आहत योद्धाओ की सेवा-सुश्रुषा करे। यह भी विजेताओ का धर्म है। मैं सब जगह घूमकर आया हूँ। सहस्रो सैनिको का रक्त जम गया है। शोणित बह-बह कर नदी बन गया है। लगता है कि धरती करुण स्वर मे रोदन कर रही है। ये क्षत-विक्षत शव उन आततायियो और राज्य-लिप्सा के अधिकारियो को अभिशाप दे रहे है, तुम्हारे स्वार्थो और तृष्णाओ ने अनेक प्राणियो को मृत्यु की गोद मे सुला दिया। हजारो माताओ की कोख खाली कर दी। हजारो सतियो का सुहाग छीन लिया और हजारो बच्चो को अनाथ कर दिया। ओ युद्ध वीरो! तुमने रक्त-स्नात पृथ्वी का हाहाकार सुना है?" चारण की विह्वलता बढती गई। उसकी दृष्टि मे समस्त सृष्टि की करुणा तैर उठी। हम्मीर के विजयोन्मत्त उल्लसित योद्धा गंभीर हो गए, उनमे करुणा आ गई। उनके मुखो पर व्यथा तैर उठी। चारण बोला, "इस हाहाकार मे उन अर्द्धमृतको का ही समवेत चीत्कार है। वे सभी हाय हाय कर रो रहे है। क्रन्दन कर रहे है। क्योकि उनका जीवन अभी मरा नही

है। उनकी साँसें अभी उनकी आत्माओ से विलग नही हुई हैं ! जाओ, विजय के उन्मादित योद्धाओ, जाओ जो मनुष्यता की पुकार है, उसे सुनो ! युद्ध-परिणाम को देखो, देखो अपनी वीरता का वीभत्स सत्य !

चारण उत्तेजित हो गया। वह विक्षिप्त-सा चीखा "युद्ध बन्द करो। युद्ध बन्द करो। युद्ध मनुष्य को राक्षस बनाती है, दैत्य बनाती है।"

चारण पवन-वेग से चला गया।

हम्मीर की आँखें भर आईं। उसने स्वय अपनी तलवार ली और कई सैनिको के साथ वह रणभूमि की ओर पुन चला। उसने भर्राए-स्वर में कहा, "आहतों की सेवा हमारा धर्म है। रण रलियो से उनके प्राणो की रक्षा हमारा प्रथम कर्तव्य है। वस्तुत युद्ध भयकर और विनाशकारी है। वह मानवता को समाप्त करके मनुष्य को राक्षस बना देता है। चलो पवनसिंह, कुछ सैनिकों को साथ ले लो। हमे आहत वीरो की देखभाल करके उपचार करने हैं।

२७

मुहम्मद तुगलक और जेसा को कारावास मे डाल दिया गया। हम्मीर की आज्ञा पर चित्तौड में विजय-दीप घर-घर जलाए गए। इस अवसर पर हाथियो की लडाई भी दिखलाई गई। उत्सव तीन दिन तक निरन्तर चलता रहा।

अब प्रश्न यह उठा कि बादशाह के साथ कैसे व्यवहार किया जाय। अपराह्न के समय मन्त्रणाकक्ष मे उस दिन मेवाड के बडे-बडे शूरमा और सामन्त एकत्रित हुए। गभीर समस्या पर विचार-विमर्श था। मेवाडधिपति हिन्दू-कुल-सूर्य राणा हम्मीर जब आ गये। तब दीवाण कामदार ने उठकर कहा, "सामन्तो, उमरावो और सूरमाओ ! आज हम सब एक अत्यन्त महती प्रश्न के लिए एकत्रित हुए हैं। आप सब

युद्धोपरान्त स्थिति से परिचित हैं ही। यवन बादशाह और क्षत्रिय-कुल-कलंक गद्दार जैसा हमारे कारावास में हैं। हमारे साथ दिल्लीपतियों का कैसा सम्बन्ध रहा है, आप सब जानते ही हैं। अलाउद्दीन खिलजी द्वारा चित्तौड़ के निर्दोष बच्चों और स्त्रियों का संहार और छल से चित्तौड़ को जीतना, हम कभी नहीं भूल सकते। हम यह भी नहीं भूल सकते कि उसके कारण हमारी शक्ति काफी क्षीण हो चुकी थी। किन्तु आज उसकी शानोशौकत और बराबर ओहदे का बादशाह हमारे कारावास में सड़ रहा है। मैं एकलिंगेश्वर दीवाण जी से विनय करूंगा कि वह उन दोनों को मृत्यु-दंड दें। मेरी व्यक्तिगत राय यही है।"

हम्मीर ने कामदार के बैठते ही कहा, 'सेनापति पवनसी आप अपने विचारों से अवगत कराएँ।"

पवनसी ने सबको सम्बोधित करके कहा, "मेरे समक्ष एक ही प्रश्न गंभीर रूप धारण करके खड़ा है। मैं आप सबसे पूछता हूँ कि भारत पर शासन करने वाला बादशाह इतना मूर्ख और अदूरदर्शी है तो वह एक दिन कोटि-कोटि जनों के लिए घातक सिद्ध हो सकता है। वह एक दिन सहस्रों मनुष्यों को व्यर्थ ही मृत्यु के मुख में डाल सकता है। जैसा के अनुरोध पर वह शाही सेना लेकर चित्तौड़ पर आक्रमण करने आ गया, यह कितनी बड़ी मूर्खता है। और फिर क्या अधिकार है किसी को कि बिना शत्रुता के ही द्वेष उत्पन्न करे। शक्तिशाली होने का तात्पर्य यह नहीं है कि दुर्बल को दबाए। मैं समझता हूँ कि जो पराई आग में हाथ डालता है, उसका हाथ जलने देना चाहिए। मैं समझता हूँ कि व्यर्थ रक्त की होली खेलने वाले व्यक्ति को जीवित जला दिया जाय।"

मेरा बेटा। यह सुनते ही बोला, 'मैं राणाजी से प्रार्थना करूँगा कि वह मुझे ही इसे मारने का अधिकार दें। मैं इसे तीरों से छलनी करना चाहता हूँ।"

[illegible] सिंह ने कहा, "ऐसा करके सल्तनत पर बड़ी भारी भूल करोगे। सम्राट पृथ्वीराज ने महम्मद गजनवी को कई बार क्षमा

है कि हम्मीर की बात मान लीजिए। क्योकि भविष्य मे तुगलक चित्तौड़ की ओर देख भी नही सकेगा।"

तब हम्मीर ने सबको सम्बोधित करके कहा, "मेरा ऐसा विचार है कि तुगलक से पचास लाख नकद और कई नगर लिए जाएँ। जब तक धन अपने पास न आजाए तब तक उसे मुक्त न किया जाय। उसे यह भी कह दिया जाय कि अगर तुमने कोई भी चाल चली तो तुम्हारा सिर धड़ से अलग कर दिया जायगा।"

सब ने यह तय कर लिया।

बन्दीगृह मे मुहम्मद तुगलक बैठा था। हम्मीर को देखते ही उस ने आगे बढकर आदाब की। हम्मीर ने उत्तर मे जय एकलिंगेश्वर कहा। दोनो पास-पास बैठे। पवनसी और कामदार खड़े रहे।

बादशाह को सभी तरह का आराम था बन्दीगृह मे। उसे मखमली गद्दे और श्रेष्ठ भोजन मिलता था। उसके समीप इत्र का दीपक जलता था। एक दास उसकी सेवा मे रहता था, वह जाति का भील था जो कभी किसी भी मूल्य पर विश्वासघाती नही बन सकता था।

हम्मीर ने काष्ठ-निर्मित लघु-आसन पर बैठते हुए कहा, "बादशाह को किसी तरह का कष्ट तो नही है।"

"नही मेवाड़ाधिपति, हमे किसी तरह की तकलीफ नही है, पर क्या एक बादशाह के लिए कम यह तकलीफ है कि वह दुश्मन की कैद मे है।"

हम्मीर ने विहँस कर कहा, 'दिल्ली सल्तनत के स्वामी शायद यह भूल गए है कि वे स्वयं ही संकट मे पड़े। जिनकी द्वारा स्वयं चित्तौड़ मे कुछ भी नही रखा है। चौहान स्वयं राज्य संचालन के लिए जालौर मे धन संभाले थे, फिर आपने ऐसा कदम क्यों उठाया?"

'आह ! आप नही समझेंगे, बादशाहों की हमारी आदत का खास हिस्सा है। हम उन्हें नहीं छोड़ सकते। फिर चाल चल गया,' अब मुझे इस कैद से मुक्त करवाइए मार दीजिए या छोड़ दीजिए।"

'हमारे सारे अधिकारियों की राय है कि आपसे पचास लाख नकद

श्रौर श्राय वाले कई नगर लेकर श्रापको छोड दिया जाय।"

"हमें श्रापकी शर्त मजूर है।"

"फिर श्राप शाही-फरमान द्वारा रुपयो का प्रबन्ध कराइए।"

तुगलक ने श्रपनी श्रगूठी के साथ एक पत्र लिखा श्रौर वह पत्र एक दूत के साथ उसी समय रवाना कर दिया गया।

जेसा ने चीख कर कहा, "मैं राणाजी से मिलूंगा, राणाजी!"

हम्मीर ने घूम कर देखा। जेसा नेत्रो मे श्रश्रु भर कर खडा था उसने धर्म की सौगन्ध खाकर कहा, "मैं श्रापका स्वामिभक्त रहूंगा, मुझे छोड दीजिए। राणा जी मैं श्रापकी गाय हूँ।"

राणी ने भी उसकी मुक्ति की प्रार्थना की थी।

सबको उस पर दया श्रा गई। जेसा के शब्दो मे सत्य का भास था। हम्मीर ने उसकी बेडियां कटवा दी श्रौर उससे एक प्रतिज्ञा करवाई। श्रौर उसे नीमघ, जोरण श्रौर रतनपुर के गांव दिए, ताकि वह सम्मान से निर्वाह कर सके। दान-पत्र देते समय हम्मीर ने उससे कहा, "तुम हमारी सेवा विश्वस्त रूप से करते रहोगे श्रौर श्रपने कुटम्ब का पालन करते रहोगे। एक समय था जब कि तुम यवनो के गुलाम थे श्रौर श्राज तुम स्वाजातीय के दास हो। यह सत्य है कि तुम्हे पितृ राज्य जाने का क्षोभ है, किन्तु शान्ति से विचार कर देखो कि यह राज्य है किसका? चित्तौड के वास्तविक श्रधिकारी कौन हैं। मैंने किसके राज्य पर श्रधिकार किया है? यह हमारा था, इसलिए ये हमे मिल गया। जिस मेवाड के कण-कण मे हमारे पूवजो का रक्त चमक रहा है, उस पर कौन दूसरी शक्ति श्रधिक दिन तक रह सकती है। श्राज भगवती की महती कृपा श्रौर एक-लिगेश्वर की श्राशीष से सब विपदाश्रो की समाप्ति होकर श्रब नए जीवन का सूत्रपात हो रहा है। तुम यह मत समझना कि मैं इस देश श्रौर लक्ष्मी को कामिनी की श्रर्चना मे खो दूंगा। मेरा समस्त जीवन मेवाड के लिए है, देश के नव-निर्माण श्रौर सम्पूर्ण विकास के लिए है। श्रब खोई हुई मेवाड की श्री की पुन स्थापना होगी।"

हम्मीर ने देखा राजपुरोहित के साथ अन्य सरदार भी आ गए हैं।

हम्मीर ने पुन अपनी बात को जोडा, "पहले मैंने चित्तौड की मुक्ति के लिए देशवासियो को आह्वान किया था और उन्होने अपने देश के लिए एक-एक सिक्का बचाया था और अब उसकी नव-रचना के लिए उनसे प्रार्थना करूँगा कि वे अल्प बचत करें, वे अपने देश का नया निर्माण करें, ताकि भविष्य मे कोई भी चित्तौड की ओर आँख उठाकर न देखे।"

जैसा ने धरती पर से धूल उठाकर अपना तिलक किया, "मैं सौगन्ध खाता हू कि जहा मेवाडियो का पसीना बहेगा, वहाँ मेरा खून बहेगा।"

राजपुरोहित ने विह्वल होकर कहा, "राणा हम्मीर की जय, एक-लिंगेश्वर दीवाण की जय, विषम घाटी पचानन की जय।"

और हम्मीर अपने समस्त साथियो के सहित कालिकाजी के मन्दिर की ओर चला जहाँ रक्तपात से दूर हटकर देश के नव निर्माण का महा-आयोजन आरम्भ करेगा।

^ ^

मुहम्मद तुगलक को तीन माह कारवास मे रख कर उससे कई नगर व पचास लाख नकद रुपए लेकर छोड दिया। तपस्वी मा का देहान्त हो गया था। हम्मीर ने मा की पुण्य-स्मृति मे एक मन्दिर बनाया—जो अन्नपूर्णा का मन्दिर बना। हम्मीर ने मरते मरते तपस्वी से यही कहा, "जो राजा वीर होने के साथ धीर होता है, जो राजा अपने विशेष अधिकारियो के अतिरिक्त समस्त प्रजा की समस्याओ मे तत्पर रहता है, वो राम

Visit for more my both channels :)
Youtube.com/ Alpana Verma 2
Youtube.com/ Alpana Verma
Good luck!